संग्रहकर्ता तथा संपादक

रामइक़बाल सिंह 'राकेश'

भूमिका-लेखक

पंडित अमरनाथ झा

हिंदी साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग

प्रकाशक का वक्तव्य

श्रीमान् बड़ौदा नरेश सर सयाजीराव गायकवाड़ महोदय ने बम्बई सम्मेलन में स्वयं उपस्थित होकर पाँच सहस्र रुपये की सहायता सम्मेलन को प्रदान की थी। उस सहायता से सम्मेलन ने सुलभ-साहित्य-माला के अंतर्गत कई सुन्दर ग्रन्थों का प्रकाशन किया है। अन्य हिन्दी प्रेमी श्रीमानों के लिए स्वर्गीय बड़ौदा नरेश का यह कार्य अनुकरणीय है।

प्रस्तुत 'मैथिली लोकगीत' के संग्रहकर्ता श्री रामइकबाल सिंह 'राकेश' ने परिश्रम के साथ सुन्दर तथा सुरुचिपूर्ण ढंग से मैथिली लोकगीतों का संग्रह किया है। उनका यह प्रयास श्लाघ्य है। पण्डित अमरनाथ झा ने इसकी विद्वत्तापूर्ण भूमिका लिखकर पुस्तक का महत्व बढ़ा दिया है।

साहित्य-मंत्री

भूमिका

ग्राम्य साहित्य साहित्य का एक बहुत बड़ा अंग है। कोई भी साहित्य जीवित नहीं रह सकता है जिसका मौलिक सम्बन्ध जन-साधारण से न हो। कुछ थोड़े से विद्वानों द्वारा कोई साहित्य अधिक दिन तक प्रफुल्लित, उन्नत और पल्लवित नहीं रह सकता है। साहित्य के कुछ अंग तो ऐसे हैं जो राजाओं और धन-सम्पन्न सज्जनों के आश्रय में रचे जाते हैं, कुछ ऐसे जो केवल प्रकाण्ड पंडितों के योग्य होते हैं, और कुछ ऐसे जो जन-साधारण के लिए होते हैं। तीनों प्रकार के साहित्य का अपना अपना महत्व है और सब का अपना अपना मूल्य है। परन्तु यदि किसी देश अथवा समाज की यथार्थ झलक कहीं मिलती है तो तीसरे प्रकार के साहित्य में। यह साहित्य बहुधा मौखिक हुआ करता है। दादियों से सुनी हुई कहानियों, कृषकों की कहावतों, स्त्रियों के गानों में यह साहित्य मिलता है। परन्तु काल इतना परिवर्तनशील है और जनता की रुचि इतनी शीघ्रता से बदलती रहती है कि कुछ ही दिनों में यह साहित्य टीका की अपेक्षा करता है। इसलिए यह आवश्यक है कि इनका संग्रह यथाशीघ्र पुस्तक रूप में प्रकाशित किया जाय जिससे इनको मुद्रित अमरत्व प्राप्त हो। राकेश जी कोई सात आठ वर्ष से मिथिला के भिन्न भिन्न गाँवों में जा जाकर लोकगीतों का संग्रह कर रहे हैं। जिस लगन से, परिश्रम से, एकाग्रता से इन्होंने इस महत्व का काम किया है उसकी प्रशंसा जितनी की जाय कम है। प्रस्तुत पुस्तक में उनके संग्रह का थोड़ा ही भाग प्रकाशित हो रहा है। इसी पुस्तक के आकार के एक ग्रन्थ की सामग्री और तैयार है, और आशा है कि समय अनुकूल होने पर वह भी प्रकाशित हो जायगा। राजस्थान और बुन्देलखण्ड, ब्रज मंडल और छत्तीसगढ के लोक गीतों का संग्रह प्रकाशित हो चुका है अथवा हो रहा है। क्या ही अच्छा हो यदि इस प्रकार का काम और भी उपप्रान्तों में किया जाय। यह इतना बड़ा काम है कि साहित्य-संस्थाओं को

इस ओर प्रवृत्त होना चाहिये। रामेश जी ने अकेले, बिना किसी की सहायता से, यह कार्य सम्पन्न किया है और सम्मेलन को इसे प्रकाशित करते हुए बड़ी प्रसन्नता है।

लोकगीतों की विशेषता यह है कि इनमें हृदय के वास्तविक उद्गार हैं और ये सब हृदयग्राही हैं। *शिष्टता और सभ्यता का बाह्य प्रभाव जो भी हो, शिक्षा* और समाज द्वारा व्यक्ति विशेष में जो भी परिवर्तन हो, किसी के मनुष्यत्व में, मानवता में कोई भेद नहीं होता है—कोई चाहे गाँव का रहने वाला हो अथवा नगर का, झोपड़ी में अथवा महल में, मूर्ख हो अथवा पंडित, सन्तान के जन्म के अवसर पर, एक ही प्रकार का आनन्द सब को होता है। पिता-माता के देहावसान से सभी को समान शोक होता है। विवाह के समय एक ही प्रकार की खुशी मनाई जाती है। *नव विवाहिता कन्या जब अपने घर जाने लगती है तब उसके* माता पिता का दुःख बहुत ही करुणापूर्ण होता है। किसी प्रियजन के विरह का शोक, दारिद्य के कष्ट, यौवन के उमङ्ग,बालकाल की क्रीड़ायें, वृद्धावस्था या असामर्थ्य, रोग, इत्यादि सब सभी युग और समाज की सभी श्रेणी में समान है। प्रकृति के दृश्य, ऋतुओं की सुन्दरता, वर्षा की कमी, सदा हृदय में भाव को उत्तेजित करने का सामर्थ्य रखती है। इन्हीं विषयों पर लोकगीत हैं। इन साधारण विषयों पर हृदय के *यथार्थ और सत्य भावों का उद्गार इन में है। जब कोई किसी नदी पर नाव में यात्रा* करता है तो उसे कहीं तो गगन चुम्बी पर्वत देख पड़ता है, कहीं जल प्रपात, कहीं घने जङ्गल, कहीं बड़ी सुहावनी वाटिका, कहीं खेत, कहीं ऊसर भूमि, कहीं झोपड़े, कहीं श्मशान—ये सभी प्रकृति के अंश हैं और ये सब मिल कर प्रकृति की सम्पूर्ण और यथार्थ छवि दिखाते हैं। इसी प्रकार मनुष्य के जीवन में उल्लास, खेद, विरह, *मिलन, क्रोध, ईर्ष्या, स्नेह इत्यादि सभी भावों का कभी न कभी अनुभव होता है।* इन में कुछ तो जीवन के मर्म्म तक पहुँच जाते हैं, कुछ केवल क्षणिक प्रभाव उत्पन्न करते हैं, कुछ व्यक्तिविशेष तक रह जाते हैं, और कुछ का प्रसार बहुत जनों तक होता है। लोकगीत के विषय में, "सुहृदसङ्घ" के वार्षिक अधिवेशन में मैंने कहा था: "इन सरल पदों में देश की यथार्थ दशा वर्णित है, यहाँ की सम्स्कृति इनमें सुरक्षित है।

सभ्यता तो बाह्य आडम्बर है, कल तुर्कों की थी, आज अंग्रेजों की है। भारतीयता हमारे गाँव के रहनेवालों में है, जो शहरों के क्षणभंगुर आभूषणों से अपने स्वाभाविक रूप को छिपा नहीं चुके हैं, जिनमें युगों से वेदना सहन करने की शक्ति है, जो सुख-दुःख में, हर्ष विषाद में, जगत्स्रष्टा को भूलते नहीं हैं, जो वर्षा के आगमन से प्रसन्न होते हैं, जो खेतों में, जाड़े गर्मी में, प्रकृति देवी के निकट, अपना समय बिताते हैं। इन गानों में हम मनुष्य के जीवन के प्रत्येक दृश्य को देखते हैं, कन्या के ससुराल चले जाने पर माता के करुण स्वर सुनते हैं पुत्र के जन्म पर माता पिता के आनन्द की ध्वनि पाते हैं, खेतों के बह जाने पर हताश किसान के क्रन्दन, ब्याह के अवसर पर बधाई के गान, गृहिणी के विरह की व्यथा, सन्तान की असामयिक मृत्यु पर मूक वेदना—अर्थात् मानविक जीवन की नैसर्गिक कविता का रसास्वादन करते हैं।"

मैथिली भाषा और साहित्य बहुत प्राचीन हैं। प्राचीन ग्रन्थ के अनुसार मिथिलाप्रान्त की सीमा यों है

गङ्गाहिमवतोर्मध्ये नदीपंचदशान्तरे ।
तैरभुक्तिरिति ख्यातोदेशः परमपावन ॥
कौशिकीं तु समारभ्य गंडकीमधिगम्य वै ।
योजनानि चतुर्विंशव्यायाम परिकीर्तितः ॥

इस को मैथिली में एक कवि ने यों लिखा है

गङ्गा बहथि जनिक दक्षिण दिशि पूर्व कौशिकी धारा ।
पश्चिम बहथि गडकी, उत्तर हिमवत बल विस्तारा ॥
कमला त्रियुगा अमृता धेमुरा वागवती कृतसारा ।
मध्य बहथि लक्ष्मणा प्रभृति से मिथिला विद्यागारा ॥

आठवीं शताब्दी से अब तक इस प्रान्त की मातृ भाषा, मैथिली, में साहित्य रचना होती चली आ रही है। प्रारम्भ में तो मैथिली-अपभ्रंश में ग्रन्थ लिखे गये, जिनका एक

ज्वलन्त उदाहरण विद्यापति कृत "कीर्तिलता" है। इसी अपभ्रंश में "वैदगान तथा दोहा" लिखे गये। विद्यापति ने संस्कृत की अपेक्षा देसी भाषा को अधिक महत्व दिया—वह कहते हैं

सक्कय वाणी बहुअ न भावइ, पाउँअ रस को मम्म न पावइ।

देसिल बअना सब जन मिट्ठा, तँ तैसन जम्पओ अवहट्ठा॥

विद्यापति ने "कीर्तिलता" में जिस भाषा का प्रयोग किया वह आज की मैथिली के बहुत समीप है। यथा

बुड्ढन्त राज्य उद्धरि धरेओं। प्रभुशक्ति दानशक्ति
ज्ञानशक्ति तीनहु शक्तिक परीचा जानलि। रूसलि
विभूति पलटए आनलि।

तेरहवीं शताब्दी में ज्योतिरीश्वर ठाकुर ने मैथिली में "वर्णरत्नाकर" नामक सुन्दर ग्रन्थ की रचना की। इसकी लेखनशैली "कादम्बरी" से समता रखती है—यथा अन्धकार का वर्णन

पाताल अइसन दुःप्रवेश, शोक चरित्र अइसन दुर्लंघ्य,
कालिन्दीक कल्लोल अइसन मासल, काजरक पर्वत अइसन
निविड़, आतंकक नगर अइसन भयानक, कुमत्र अइसन
निष्फल, अज्ञान अइसन सम्मोहक मन अइसन सर्वतोगामी,
अहंकार अइसन उद्धत, परद्रोह अइसन अभव्य, पाप
अइसन् मलिन, एवं विध अतिव्यापक दुःसंचर दृष्टिबंधक
भयानक गम्भीर शुचि भेद अन्धकार देख।

इस भाषा में मैथिल, हिन्दू और मुसलमान, सब ने ग्रन्थ लिखा और यह साहित्य कम से कम ६ सौ वर्ष से विविध विषयों में पूर्ण है। मुसलमानों ने मैथिली में मर्सिया भी लिखा—यथा:

एहि दसौ दिन सैयद बँसवा कटौलकै रे हाय हाय ।
से हो बँसवा भेलै बिसरमना रे हाय हाय ॥
एहि दसौ दिन सैयद लकड़ी चिरौलकै रे हाय हाय ।
से हो लकड़ी भेलै बिसरतमा रे हाय हाय ।

आज कल भी यथेष्ट संख्या में मैथिल अपनी मातृभाषा में ग्रन्थ लिखकर अपनी परम्परागत साहित्य-सम्पत्ति की वृद्धि कर रहे हैं।

जैसा कि ऊपर कहा गया है यह संग्रह अपूर्ण है। "राकेश" जी के पास अभी और बहुत सामग्री है। केवल 'नचारियों' की ही संख्या एक सहस्र के लगभग होगी। नचारी मिथिला की एक विशेष वस्तु है। कई सौ वर्ष से शिव-भक्ति-पूर्ण ये गान वहां गाये जाते हैं—"आइने-अकबरी" में इनकी चर्चा है, विद्यापति के समय से अब तक इसकी रचना होती आई है। चन्द्र कवि के (जिनको अपनी बाल्यावस्था में प्रातः नित्य देखा करता था और जिनकी रचित "मिथिलाभाषा रामायण" एक विलक्षण ग्रन्थ है) दो नचारी मैं यहां उद्धृत करता हूँ।

(१)

चलु शिव कोबराक चालि हे, दोपटा ओढ़ भोला ।
अहि भरि नगर हकार हे भलमानुस टोला ॥
हाड़क हार निहारि हे हेरथि बघ छाला ।
हसति घसति सति आज हे जत आयोति बाला ॥
भूधर राज जमाय हे छाउर कर त्यागे ।
बहु विधि अतर सुगन्ध हे लागत अंग रागे ॥
प्रणत कहथि कवि 'चन्द्र' हे सुनु शम्भु निहोरा ।
एतनहु धरि कि सुनाय हे रानिक हथजोरा ॥

शिव प्रिय अभिनव गीत प्रीति सौं रचितहुँ ।
शिव नट विगत विकार भक्ति सौं नचितहुँ ॥
महोदार करुणावनार कौं जैचितहुँ ।
अन्त समय हम काल कराल सँ बचितहुँ ॥
अछि भरोस मन मोर दया प्रभु करता ।
शरणागत जन जानि सकल दुख हरता ॥
मोर जीव दुखिया जानि सदाशिव ढरता ।
ज चाहथि से करथि भवानी भरता ॥

विद्यापति के पद जो अन्य प्रदेशों मे प्रसिद्ध है अधिकतर राधा कृष्ण विषयक है, परन्तु उनके रचित अनेक उत्तम नचारी भी हैं—यथा

घर घर भरमि जनम नित
तनिकौं केहन विवाह ।
से आब करब गौरीवर
ई होए कतय निवाह ॥
कतय भवन कत आँगन
बाप कतय कत माय ।
कतहु उघोर नहि ढेहर
ककर पहन जमाय ।
कोन कयल एह अमुजन
केओ न हिनक परिवार ।

जे कयल छिनक निवन्धन

धिक धिक से पजिआर ॥

कुल परिवार एको नहि अनिशा

परिजन भूत बेताल ।

देखि देखि झुर होय तन

के सहय हृदयक साल ॥

'विद्यापति' कह सुन्दरि

धरहु मन अवगाह ।

ज अछि जनिक विवाही

तनिकौं सेह पै नाह ॥

"श्यामा-चरेवा" के सम्बन्ध में पाठकों को यह जानकर उत्सुकता होगी कि इसका उल्लेख "पद्मपुराण" में है। "समदाउनि' एक बहुत ही करुणोद्भावक राग में गाई जाती है—विदा के काल की यह वस्तु है। संस्कृत साहित्य में इसका विशिष्ट उदाहरण "अभिज्ञानशाकुन्तल" के "श्लोकचतुष्टयम्" में है। समदाउनि कई-अवसर पर गाई जाती है। नवरात्रि के पश्चात् जब दुर्गापूजा समाप्त होती है, तब का एक गीत यह है

कि कहब जननि कहय नहि आयब छमिअ सकल अपराध ॥

नवयौ रतन नव मास चिंतिन भेल तुअ पद्लगि परमान ।

चलबहु आज तेजि सेवक गण आकुल सब हक परान ॥

सून भवन देखि थिर न रहत हिअ नयन झहरि रह नीर ।

गद् गद् बोल अथ्व तन थर थर हेरि अलोचन कोर ॥

कन्या जब माता पिता से विदा होकर ससुराल जाती है उस समय उसको सम्बोधित करती हुई समदाउनि

धिया हे रहब सबहुक प्रिय जाय ॥
एतय छलहुँ सभ के अति प्रिय भेलि
नेन पन देखि जुड़ाय।
ओतय रहब सभ के अनुचरि भेलि
भेटति ओतय नहिं माय ॥
नेनपन सँ हम कतेक सिखाओल
बहुत बुझाय बुझाय।
जइतहिं ओतय रहब तहिना भेलि
जनु दिथ नाम हँसाय ॥
बाजि सकी नहिं बहुत कहब की
आब कहल नहिं जाय।
सेवा सभक करब तत्पर भय
लेब हम तुरन्त अनाय ॥
छोड़थि पैर नहि माय कहथि नहि
गद्गद कंठ सुखाय।
मन 'विन्ध्यनाथ' वियोग काल मे
कानब एक उपाय ॥

और आम की प्रम्न्त गमास होन पर समदाउनि

फल हे ! तेजह किएक समाज ॥

तोहरहिं बलेँ विहु गमल न उचनिच छोड़ल गेहक काज।
मुग्ध गुण अबुधि छुनुध मन हाेएत ई तोहि कत गोट लाज ॥
मन अभिलाष छाल हम धयलहुँ यतनहि हृदय लुकाय।

उमडि उमडि से मगन स्रोतहि की एहन कठिन हिअ हाय ॥
कोमल सरस विदित त्रिभुवन सौं अकपट सबहुँ विशेष ।
प्रकृत सुमिल शुभ सरल भरल हा सरस मनोहर वेष ॥
गद्गद स्वर पुलकित तन थरथर आब कहल नहिं जाय ।
मन 'गणनाथ' उदाम कहब कत थकलहुँ बहुत बुझाय ॥

चौठ चन्द के गीत, प्रभाती, ताजिया के गीत, राम, मान, योग, उचती, लगनी, चांचर, बिरहा, मगन इत्यादि और अनेक प्रकार के लोकगीत हैं, जिनका सग्रह राकेश जी ने किया है और जो, यदि सम्भव हुआ, तो द्वितीय भाग मे प्रकाशित होंगे।

हमें आशा है कि साहित्य प्रेमी इनको आदर की दृष्टि से देखेंगे और इनमें यथार्थ भारतीय संस्कृति की झलक पायेंगे।

आश्विन कृष्ण २
१९९९ सम्वत्

अमरनाथ झा

[illegible]चन

[१]

मिथिला प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण प्रान्त है। इसकी लावण्यमयी मंजुल मूर्त्ति, मधुरिमा से भरी हुई सरस वेला और उन्मादिनी भावनाएँ किसके हृदय को नहीं गुदगुदा देतीं? यहाँ के वसन्तकालीन सुहावने समय, बाँसों के झुरमुट में छिपी गिलहरियों के प्रेमालाप, सुसज्जित सुन्दर पुष्प, सुचिन्तित पशु पक्षी और कोमल पत्तियों के स्पन्दन अपने इर्द गिर्द एक उत्सुकतापूर्ण रहस्यमय आकर्षण पैदा कर देते हैं। कहीं ऊदे-ऊदे बादलों की आँखमिचौनी, कहीं झहर झहर करती हुई बलखाती नदियों की अठखेलियाँ, कहीं धान से हरे भरे लहलहाते खेतों की क्यारियाँ—मतलब यह कि यहाँ की ज़मीन का चप्पा चप्पा और आसमान का गोशा गोशा काव्य की सुरभि से सुरभित हो रहा है और संगीत की निर्मल निर्झरिणी सदा अविराम गति से टलमल करती हुई दौड़ रही है।

यहाँ की भाषा मैथिली है, जिसकी लिपि देवनागरी लिपि से थोड़ी भिन्न है, और उसमें बँगला लिपि का आभास दृष्टिगोचर होता है। बिहार की प्रादेशिक भाषाएँ तीन हैं—[क] मैथिली, [ख] मगही, और [ग] भोजपुरी। मैथिली चम्पारन, दरभंगा, पूर्वी मुँगेर, भागलपुर, पूर्णिया के पश्चिमी और मुज़फ़्फ़रपुर के पूर्वी भागों में बोली जाती है। लेकिन दरभंगा ज़िले के गाँवों में ही यह अपने शुद्ध रूप में प्रचलित है। मैथिली और मगही एक दूसरे के अधिक निकट हैं, और इन दोनों प्रादेशिक भाषाओं के बोलनेवालों के रीति रिवाज और रहन-सहन में भी कोई विशेष अन्तर नहीं। उच्चारण के लिहाज से भी मैथिली और मगही भोजपुरी की अपेक्षा एक-दूसरे से अधिक मिलती-जुलती है। मैथिली में स्वर वर्ण 'अ' का उच्चारण स्पष्ट और मधुर होता है। भोजपुरी में स्वर वर्ण का उच्चारण (मध्यभारत में प्रचलित भाषाओं की तरह) थोड़ा रूखा है। इन दोनों भाषाओं—मैथिली और भोजपुरी का यह अन्तर इतना स्पष्ट है कि इनके जुदे जुदे लिबासों को पहचानने में देर नहीं होती। संज्ञाओं के शाब्दिक रूपकरण की दृष्टि से भोजपुरी में सम्बन्ध-कारक

का रूप सरल नहीं है। मैथिली और मगही में मध्यम पुरुष का सर्वनाम, जो अक्सर बोल-चाल में इस्तेमाल होता है, 'अपने' है, और भोजपुरी में 'रऊरे'। मैथिली में Substantive क्रिया 'छई' और 'अछि' है, मगही में 'है', और भोजपुरी में 'बाटे', 'बारी', और 'हवे'। अन्य भारती भाषाओं की तरह क्रिया विशेषण में Substantive क्रिया जोड़ कर वर्त्तमान काल बनाने में ये तीनों प्रादेशिक भाषाएँ एक-सी हैं। मगही का वर्त्तमान काल 'देखा है' भी एक विशेषता रखता है। भोजपुरी में 'देखा है' के बदले 'देखे ला' इस्तेमाल होता है। मैथिली और मगही में क्रिया के भिन्न भिन्न रूपान्तर—धातुरूप सरल नहीं हैं। इनके पढ़ने और समझने में पेचीदगी पैदा होती है। लेकिन बंगाली और हिन्दी की तरह भोजपुरी के धातुरूप साफ-सुथरे और बाअसर हैं। इनके पढ़ने और समझने में दिमाग में पसीना नहीं आता, और न इनके शब्द मन में अलग अलग तस्वीरें पैदा करते हैं। इन तीनों प्रादेशिक भाषाओं में और भी कितने अन्तर हैं। लेकिन ऊपर जो भेद दिखलाये गये हैं वे ज्यादा उपयोगी और उल्लेखनीय हैं।

मैथिल ग्राम-साहित्य-सागर के विस्तीर्ण अन्तस्तल में न मालूम कितने अनमोल सुन्दर हीरे यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं, जो एकता के सूत्र में पिरोये जाने पर हिन्दी साहित्य के भंडार को पूर्ण बना सकते हैं। मैथिल ग्रामीण कवियों ने साहित्य के विभिन्न पहलुओं, जैसे—नाटिकाएं, विनोद-पद, कहानियाँ, पहेलियाँ, कहावतें आदि सभी को समान-रूप से स्पर्श किया है। वे अपने परिमार्जित और संयत गीतों के रचयिता ही नहीं, बल्कि अनेक नूतन छन्दों और तालों के उत्पादक भी हैं। हाँ, कहीं-कहीं एक ही छन्द बहुरूपिये-सा रूप बदल कर जुदा-जुदा लिबासों में प्रकट हुआ है। उनमें कुछ ऐसे हैं, जो तेज रेती के समान कठोरतम इस्पात को भी काट सकते हैं, कुछ ऐसे हैं, जो पतझड़-से जीर्ण-शीर्ण आत्मा का वासन्तिक निर्माण करते हैं, और कुछ ऐसे हैं जो फूल की कोमल कली की तरह वनदेवी की गोद में मचल रहे हैं।

लोक-साहित्य के आकाश में गीतों के विहङ्गम अहर्निश उड़ते फिरते हैं। जनवरी से दिसम्बर तक बारहों महीने गीतों की बहार रहती है। स्फूर्तिप्रद

भोजन, और आहार विहार जिस तरह जीवन का आवश्यक अंग है, उसी तरह मीठे नैसर्गिक गीतों का प्रेम-गान भी यहाँ के लोगों के जीवन का दैनिक अंग बन गया है। पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, शिशु-जन्म, उपनयन, विवाह आदि षोडश संस्कारों की बात का तो कहना ही क्या? प्रात, दुपहरी, सन्ध्या, मध्यनिशा आदि भिन्न-भिन्न समय के लिए भी यहाँ भिन्न भिन्न शैली के गीत ईजाद किये गये हैं। नववयस्क और युवक-युवतियों के अतिरिक्त यहाँ छोटे-छोटे बच्चे भी स्वर्गीय संगीत की झंकार से स्थानीय वातावरण को प्रतिध्वनित करते रहते है। वे अपनी काव्य-सहचरी को मिट्टी के पकवान बना कर तृप्त करते, और 'जौ माला' तथा 'करौंदे' की लटकन से शृङ्गार कर धूल के रंगमहल में उनके साथ क्रीड़ा करते हैं।

मिथिला के इन ग्रामीण गीतों को पुनरुज्जीवन प्रदान करने का अधिक श्रेय लग्न-उत्सवों और हिन्दू पर्व-त्योहारों को है। संगीतमय हिन्दू-त्योहारों में रक्षा-बन्धन, तीज, यम द्वितीया, दीपमालिका और छठ उल्लेखनीय हैं। कंजरों के दल जो अपने काफ़िलों के साथ एक स्थान से दूसरे स्थान पर पड़ाव डालते फिरते हैं, पुरातन लोक-गीतों के चलते फिरते पुस्तकालय हैं। लग्न-उत्सवों पर खँजरी बजा बजा कर मंगलात्मक बधाई गीत गाना इनकी जीविका का साधन है।

लोक-गीतों को प्रोत्साहन देने में मुसल्मानों के करुण पुर-दर्द मर्सियों का भी, जो मुहर्रम के दिनों में हसन-हुसैन की याद में गाये जाते है, बड़ा जबरदस्त हाथ है। ताजिये की निश्चित तिथि से कई-कई दिन पूर्व ही बाँस की खपाचों के बने बाजे बजा-बजा कर हिन्दू-मुसलमान सम्मिलित स्वरों से गान करते हैं, और उक्त तिथि के पहुँचने पर रंग बिरंगे कागज के बने ताजियों को सिर पर लेकर स्त्री पुरुषों की टोलियाँ जमींदारों के दरवाजों की फेरी लगाती है। कर्बला की संवेदनशील अभिव्यञ्जना के साथ-साथ इनमें वीर रस की लड़ाइयों का भी पुरजोश ज़िक्र आया है, जिनका एक-एक लफ़्ज़ इस्लाम के बुलन्द सितारे की दुन्दुभि है।

तपे अङ्गारों-से जलते ऊबड़-खाबड़ खेतों में दिन-भर काम कर हलवाहे और मजदूर सन्ध्या को थके-माँदे चूर लौटते हैं। और भोजनोपरान्त रात्रि में ढोल, डफ

और भाल के स्वरों में स्वर मिला कर ताल-लय-संयुक्त वाणी का अजस्र वर्षण करते हैं। उस समय वे पल-भर के लिए दीन-दुनिया भूल कर अलमस्त हो किसी अचिन्त्य प्रदेश में पहुँच जाते हैं, और उनकी विद्युत् भरी स्वरलहरी गाँवों के प्रशान्त सन्नाटे को चीर कर गगन में झूम झूम कर विलीन होने लगती है।

गो-दोहन के समय, जब प्रातःकाल अपनी श्यामल सुफेदी लिये पदार्पण करता है, चरवाहे दल-के-दल अपने जानवरों के साथ—गाँवों के बाहर—घास के हरे-भरे बागों में निकल पड़ते हैं। वहाँ पशुओं को चरागाहों पर छोड़ कर स्वयं किसी स्थानीय आम्र निकुंज की शीतल छाया में बैठकर पत्तों की सनसनाहट और भौंरों की भनभनाहट के साथ स्वर मिलाते हुए अपने उल्लासमय जीवन का गीत गाते हैं। प्रकृति अंकन ही इन गीतों का ताना-बाना है। कहीं-कहीं कवि ने बेलों और लताओं से आवेष्ठित झोपड़ियों का वर्णन बड़ी सफलता से किया है।

कदम-कदम पर मिलते हैं यहाँ जीवन के सुनहले गीत। एक-से एक बढ़ कर मार्मिक गीत। किसी की आँखों में प्रसन्नता का वसन्त। किसी की आँखों में मुसीबतों की बदली। किसी के मुख पर सन्ध्याकालीन एकान्त। किसी के मुख पर मौत का-सा अन्धकार। किसी के अश्रु-कण प्रकाश में चमक रहे, तो किसी के आँसू अन्धेरे में बन्द।

कविवर दिनकर से सुना हुआ एक लोक-गीत याद आता है

कोकटी धोती पटुआ साग
तिरहुत गीत बड़े अनुराग
भाव भरल तन तरुणी रूप
एतवै तिरहुत होइछ अनूप

कोकटी धोती, पटुआ का साग, प्रेम में शराबोर तिरहुति गीत, रूपवती तरुणी का भाव-भरा सौन्दर्य्य मिथिला की ये इतनी चीजें उल्लेखनीय हैं।

लोक-गीत की दुनिया में करुणा की वेगवती धारा एकान्त भाव से प्रवाहित है। कृषकों के सादे जीवन के मार्मिक दृश्य, सामाजिक स्थिति के गोरखधन्धे, ग्राम-

प्रदेश के चित्र, मज़हब की नाज़बरदारियाँ, समाज का खोखलापन, पारिवारिक उत्सव और अनुष्ठान, भाई-बहन का प्रेम, देवरानी का निष्कलंक जीवन, ससुराल में नव-वधू की व्यथा और सास-ननद के अत्याचार चित्र-पट की तरह ही बहु हमारी आँखों से गुजरते हैं

प्रेम रस में शराबोर किसी विरहिणी का एक विरह-गीत सुनिये

आम मजरि महु चूअल
तै ओ ने पहुँ मोरा धूरल
दीप जरिय बाती जरल
तै ओ ने पहुँ मोरा आयल

"आम में बौर लग गये। महुआ चूने लगा। लेकिन हे सखी, मेरे प्रियतम नहीं आये।

दीये की लौ मन्द पड़ गई। बत्ती जल गई। लेकिन मेरे प्रियतम नहीं आये।"

जीवन की निविड़ रात्रि में करवटें बदल-बदल कर विरहिणी ने विहान किया होगा। 'दीप जरिय बाती जरल, तै ओ ने पहुँ मोरा आयल' में यह बात स्पष्ट हो जाती है। सर्प की जादू-भरी नजर से व्यर्थ निकल भागने का प्रयत्न करनेवाली चिड़िया की तरह उसकी आशा निराशा में परिणत हो गई होगी।

विरह का यह दुखान्त गीत देश-देश में समान भाव से व्यापक है।

विरह की सरिता युगयुगान्तर से अनुप्राणित होकर हृदय से हृदय में, और प्राण से प्राण में अपनी विकलता बाँटती हुई चली आ रही है। ग्रामीण स्त्रियों के सरल कंठ से निकलनेवाली अमर पंक्तियों में जाने कितनी ही वियोगिनियों के कोमल हृदय तड़प रहे हैं। कितने घायल हृदयों के अरमान आँसू की बड़ी-बड़ी बूँदों में ढलक रहे हैं। सुनिये वह अमराई में बैठी हुई तरुणी क्या गा रही है

"सुनती हूँ, मेरे प्रियतम कृष्ण योगी हो
इसलिए मैं भी जोगन हो जाऊँगी।

जिस प्रकार वन में पीपल के पत्ते काँपते हैं,
जल के बीच सेवार और कमल के पत्ते काँपते हैं,—
उसी प्रकार प्रियतम के बिना मैं काँप रही हूँ।
जल का दुश्मन सेवार होता है,
और, मछली का दुश्मन मल्लाह,
इसी प्रकार अगर स्त्री के प्रियतम प्रवासी हों
तो सेज दुश्मन हो जाती है।"[1]

'पीपल के पत्ते', 'सेवार', और 'कमल के पत्ते' की मिसाल देकर इस गीत की नायिका ने अपनी विरह-दशा का सजीव चित्र खींचा है। मौन उपमाओं द्वारा अमूर्त भावों को मूर्त रूप देने में मैथिल स्त्रियों को कमाल हासिल है।

स्त्रियों की विरह-दशा का जीवित चित्र देखना हो तो लोक-मानस की सैर कीजिये

कोई प्रवासी प्रियतम के इन्तज़ार में शंख की चूड़ी फोड़ कर और कंचुकी फाड़ कर जोगन बन रही है

फोरबइ में शंखा चुरी फारबइ में चोलिया
से धरबइ जोगिनिया के वेष

कोई परदेस से लौट आने पर अपने प्रियतम को रेशम की डोर में बाँध कर कलेजे में छुपा रखने का इरादा कर रही है

एहो हम जनितों पिया जयबिन परदेशवा
बाँधितों मैं रेशमक डोर

रेशम की डोर टूट जायगी, इसलिए कोई अपने प्रियतम को चुँदरी के आँचल में ही बाँध रही है:

[1] अध्याय 'सोहर', पृष्ठ ५३

रेशम बँधनमा टुटिए फाटि जयतइ
बाँधितो मैं अँचरा लगाय

किसी की आँखों से आसमान से झहरती हुई बूँदें देखकर और मेंढक की 'टर्र-टों, टर्र-टों' आवाज सुन कर अविरल अश्रुपात हो रहे हैं :

साओन सननन पवन सनकय
दादुर टर टर शोर यो,
बूँद झहरय भ्रमर भनकय
नयन टपकय नीर यो।

कोई अपने आँचल को फाड़ फाड़ कर कागज बनाती है, और अपने प्रियतम को प्रणय का सन्देश भेजती है–

अँचरा के फारि फारि कगदा बनइतो,
लिखितो मैं पिया के सन्देश।

कोई तो विरह में इतनी खिन्न है कि उँगली में आनेवाली अँगूठी कलाई का कंकण बन गई है

जे हो मुँदरि छल आँगुरि कसि-कसि,
से हो भेल हाथक कंकन।

व्याध के बाण से विद्ध क्रौंच पक्षी की तरह तड़पनेवाली वियोगिन की व्यथा की कोई सीमा नहीं।

जे हो मुँदरि छल आँगुरि कसि-कसि,
से हो भेल हाथक कंकन।

इन शब्दों में गम की तस्वीर दिल के कागज पर खींची गई है। इतिहासों पर स्याहियाँ पुत जायँगी, युग-युग के संस्कार धुल जायँगे और तकदीर की लिपि भी मिट जायगी, लेकिन लोक-हृदय की यह संवेदनाशील वाणी युग-युग तक अमर रहेगी।

विरह—धरती की गोद का लाड़ला शिशु—लोक-साहित्य में जाने कब से जन्मा है।

चोट खाये हुए लोक-मानस में विरह मजबूती से बैठ गया है—(प्रेम से पिघले हुए दिल में विरह जल्दी घर कर लेता है। जो बत्ती जल चुकी है, जिसमें अभी तेल का धुआँ उठ रहा है, लौ को जल्दी पकड़ती है—सरमद शहीद)—चकमक चिनगारी के समान लोक-हृदय में जलनेवाली विरह की बत्ती बुझती नहीं—दिन में, रात में, प्रतिपल जलती रहती है, योग युक्त दीप शिखा की भाँति स्वयम्भू-स्वप्रकाश होकर।

विरह का एक मैथिली गीत है 'विरह में भ्रान्ति।' प्रियतम प्रवासी है। नायिका अपने ही शरीर को देखकर भयभीत हो रही है। दर्पण में अपना ही चेहरा देखकर नायिका उसे चन्द्र समझती, और भय से कम्पित हो रही है। वक्षस्थल पर भ्रम से अपने ही हाथ रख कर विरहिणी उसे कमल समझती और ललचा कर बार-बार स्पर्श करती है। अपने ही केश-पाश को देख कर काले बादल के भ्रम से उसका हृदय बैठ रहा है।[1]

वियोगिन की मानसिक जिन्दगी का शीशा इन पंक्तियों में अंकित है। मिट्टी को फोड़ कर निकलनेवाले अङ्कुर की तरह विरह के नुकीले और जहरीले काँटे ने वियोगिन के हृदय को फोड़ डाला है। विरह में ऐसी भ्रान्ति, ऐसी तन्मयता कि देह-ध्यान तक न हो। पतंग को अपनी दीप शिखा से मतलब। महफ़िल के रंग से—तसवीरों और पर्दों से उसे क्या काम (जैसा कि महाकवि अकबर का कथन है—परवाने को मतलब शमा से है, क्या काम है रंगे-महफ़िल से)।

पावसकालीन मेघ को देख कर संस्कृत के किसी कवि ने एक भावपूर्ण कविता लिखी है—रे बादल, तुम्हारे जल बरसाने से क्या लाभ? क्या पृथिवी वियोगिन के आँसू से पहले ही तर नहीं हुई है? तुम्हारा कोलाहल भी व्यर्थ है। क्योंकि प्रिया,

[1] 'निरदुति', पृष्ठ २३६

के ज़ार-ज़ार रोने से सारी सृष्टि रो रही है। रही जलकण से पूर्ण वायु की बात, उसके लिए भी उस चन्द्रमुखी के मुख से जो आहें निकल रही है, वही पर्याप्त है। हाँ तुमने एक बात अवश्य नई कर डाली है, वह है मेरी व्यथा। यह पहले कभी नहीं हुई थी।'

[२]

सावन के सजल कजरारे मेघ उमड़ पड़े। तन्द्रा में डूबी हुई पृथिवी सपनों में लिपट गई। हृदय की धड़कनों में सोये हुए अरमान मचल पड़े। और हवा के झोंकों से आँखमिचौनी खेलती हुई बूँदें गिरने लगी

टप ! टप !! टप ! टप !!

मक्‍ई के मैंझाए हुए खोंचों में उल्लास फूट पड़ा। गँवई ताल के मटमैले पानी में मेढक टर्राने लगे। चमारों के मड-मुसड बच्चे बसी पे अकुश में चारे फँसा-फँसा कर मछली पकड़ने के मोर्चों पर जा डटे। आम की डाल पर बैठी हुई कोयल पंचम में गाने लगी।

ज़मीन के चप्पे-चप्पे और आसमान के कोने-कोने में मींड़ बज उठी।

लेकिन, बिजली की तड़क से भयभीत उस मैथिली तन्वंगी का दिल सुबह के दीये की तरह क्यूँ मँझा रहा है ?

उसकी वेदना फूस की चरमराती हुई झोंपड़ी की तरह क्यूँ सिसक रही है ?

उसके खीरे-से दिल को किस बेरहम ने विरह के चोखे चाकू से चाक कर दिया है ?

"री कोयल, सुनो—यहाँ आओ।

(प्रेम से) मधु में पगा हुआ भोजन खाओ।

'पाथोवाह किमम्बुभिः प्रियतमा नेत्राम्बुसिक्ता मही,
किं गर्जैः सुतनोरमन्दरुदितैरुज्जागराभूरपि।
वातैः शीकरिभिः किमिन्दुवदनाश्वासैः सबाष्पैरलं,
सर्वं ते पुनरुक्तमेतदधुना पूर्वं पुनर्मद्व्यथा।

श्रौर, आज रात को मेरा एक काम कर आओ।
मैं तुम्हारी कितनी आरज़ू मिन्नत करूँ?
मैं सोने से तुम्हारे पंख मढ़ाऊँगी।
निगम मगलामुखियाँ—
(तुम्हारे सौन्दर्य पर लट्टू होकर)
तुमसे प्रेम करेंगी।
मोतियों से अधर मढ़ा कर
तुम्हारा वेश सुन्दर बनाऊँगी—री कोयल!
यह लो मेरे प्रवासी साजन का पत्र,
जो मैंने लिखा है।
आधी रात बीता चाहती है,—
हृदय का कागज़ फाड़ कर,
श्रौर, आँखों के काजल की स्याही में
नख की कलम डुबो कर मैंने ख़त लिखा है।
हवा के पंख पर चढ़ कर—
धीरे धीरे उड़!—री कोयल!
मेघ बरसा ही चाहता है,
तू जल्द जा,—री कोयल।
मेरे प्रियतम से मेरा सन्देशा समझा कर कह,
श्रौर कान देकर उनकी बातें सुन,—
पूछना—तुमने क्यूँ अपनी प्रियतमा
की सुधि भुला दी?
३६५ लम्बी-लम्बी रातें तुम्हारी इन्तज़ारी में
काट कर, तुम्हारी प्रियतमा विरह का ज़हर
खाकर प्राण त्याग देगी।

उसकी आँखों से अविरल अश्रुपात हो रहा है,—(अजी ओ बेरहम !)
चल, तुम्हारी प्रिया तड़प रही है
उसको गोद में बिठाकर सान्त्वना दे,
यदि आज की रात तुमने प्रस्थान नहीं किया
तो तुम्हारी प्रिया नहीं रहेगी ।"[1]

जीवन की बेसुरी बाँसुरी की तरह उसकी जादूभरी स्वर-लहरी गूँज रही है।

हृदय का कागज फाड़ कर और आँखों के काजल की स्याही में नख की कलम डुबो कर वियोगिन ने खत लिखा है। (कृत्रिम कागज पर स्वान की स्याही—स्वान इंक से आपने आधुनिकाओं को पत्र लिखते देखा होगा)। लेकिन लोक-दुनिया में हृदय के कागज और काजल की स्याही का ही स्वागत होता है। चोट पहुँचानेवाली पीड़ाएँ झाँक रही हैं लोक हृदय के इन झरोखों में। शान शौकत और तड़क भड़क-वाली शैली से रहित वियोगिन की टीस का यह आलेखन तो देखिये। काजल ही स्याही का स्थान ले चुका है। लोक-दुनिया के ये काजल, जो नुकीली आँखों का स्वाद चखा करते हैं, अर्से से उदास और उदास दिल के कागज पर प्रेम की तहरीर लिख रहे हैं। मजमून उठा कर देखिये। बे अख्त्यार कर देने के सबस्सार तरीके उनमें मिलते हैं। ठेठ जीवन के जर-जर्रे में हवादले हो गये, दिन-पर दिन निकलते गये, लेकिन (तुलसी के—शून्य भीत पर चित्र रंग नहीं, तनु बिनु लिखा चितेरे की तरह) गँवारू औरतों की कटीली आँखों के काजल का रंग मिटा नहीं, आज भी लोक-मानस के पर्दे पर उनकी रंग बिरंगी झाँकियाँ हो रही हैं।

विरह के अधिकांश संदेशात्मक गीतों में प्रियतम का दीददार हो, इस पर जोर नहीं दिया गया। विरहिणियों ने संदेशवाहक पक्षियों के द्वारा अपने प्रवासी साजन को जो सन्देश भेजा है, उनमें गहनों की ही फ़रमाइश की है। बन्धुवर श्री देवेन्द्र सत्यार्थी ने एक ऐसे ही गुजराती गीत की तारीफ़ की है। देखिये

[1] अध्याय 'तिरहुति', पृष्ठ २३५

"—ओ कुञलड़ी (कुञलड़ी सारस या क्रौंच जाति का पक्षी है।
यह मेरा सन्देश जाकर
मेरे बालम से कहना।
आदमी तो मुँह से बोलता
मेरे पखों पर तुम सन्देश लिख दो ना!
हम उस पार के पक्षी हैं।
उड़ते-उड़ते इस पार आ पहुँचे हैं हम!
कुंचलड़ी को प्रिय लगता है मीठा सागर
मोर को प्रिय है चौमासा,
राम और लक्ष्मण के प्रिय हैं सीता,
गोपियों को प्रिय है कृष्ण
हम प्रेम किनारे के पक्षी हैं,
प्रीतम सागर बिना हम सूने हैं
'हाथ के नाप का चूड़ा लाना'—नारी सन्देश लिखती है
'गुजरी' हाट में जाकर इस पर रत्न जुड़वाना!
गले के नाप का 'झरमर' गहना लाना
तुलसी की माला में मोती बधा कर लाना!
पैर के नाप का 'कड़ला' गहना लाना।
कम्बियूं (पैर का दूसरा गहना) में घुँघरू बँधवाना।"[1]

लेकिन यहाँ इस मैथिली गीत में विरहिणी अपने प्रवासी साजन से न तो हाथ के नाप का चूड़ा चाहती है, और न गले के नाप का 'झरमर' गहना। उसका सन्तोषी हृदय तो सिर्फ प्रियतम से मिलन की ख्वाहिश रखता है, और निष्काम प्रेम की ही याचना करता है। मीर साहब के एक शेर में भी यही भाव जाग उठा है—'हर सुब्ह

[1] 'गाये जा, ओ गुजरात'—'हंस' (मार्च, १६४०)

उठ के तुम्हें, माँगूँ मैं तुझी को, तेरे सिवाय मेरा कुछ मुद्दआ नहीं है।'

इस गीत की नायिका ने प्रेम का संदेश भी अजीब बाँकपन के साथ लिखा है, जिसमें एक विचित्र आनन्द और सन्तोष है

'अजी ओ बेरहम' चल तुम्हारी प्रियतमा तड़प रही है। यदि आज की रात तुमने प्रस्थान नहीं किया, तो तुम्हारी प्रिया नहीं रहेगी।'

ऐसा लगता है कि अनजाने में ही घुणाक्षर न्याय की तरह यह मवाक् चित्र अंकित हो सका है। अमीर खुसरो ने भी एक शेर में यही झाँकी इङ्गित की है: 'जान होंठों पर आई हुई है, तू आ कि मैं जिन्दा बचा रहूँ। उसके बाद जब कि मैं न रहूँगा, तो तेरा आना फिर किस काम का होगा?' 'हवा के पंख' और 'हृदय के कागज' में उत्कृष्ट मनोभावों की बिजली है। और 'हृदयरू कागद फाड़िय देल' में कागज के साथ 'फाड़ना' क्रिया अँगूठी में नगीने की तरह जड़ गई है।

संदेशात्मक लोक गीतों में संदेशवाहक पक्षियों का भी जिक्र आया है। पौराणिक आख्यान है कि दमयन्ती ने हंस को दूत बनाकर प्रियतम नल के पास अपना प्रेम-संदेश भेजा था। हिन्दी के आदि काव्य ग्रन्थ 'रासो' के अनुसार संयोगिता ने सुग्गा के द्वारा पृथ्वीराज से प्रेम-सलाप किया। आस्ट्रिया की खानाबदोश जातियों में अबाबील को इस कार्य के लिए इस्तेमाल किया गया है। मिथिला में काक, कौवा, सुग्गा, कोयल आदि संदेशवाहक चिड़ियाँ सन्देश ले जाने के काम में लाई जाती रही हैं। काक और कौवा बड़े क्रूर पक्षी समझे जाते है, और लोग उनसे नफ़रत करते हैं। उनकी इस क्रूरता से घबड़ा कर ही शायद चाणक्य ने उन्हें 'पक्षियों में चाडाल' कहा है।

एक गुजराती लोक-गीत में विरहिणी काग से अनुरोध कर रही है—

> कागा चुन-चुन खाइयो, बड़ी हड्डी का मांस,
> चोंक न खायो मोरी अँखियाँ मेरे पिया मिलन की आस।[1]

[1] श्री झवेरचन्द मेघाणी 'लोक-साहित्य'

उत्तरी बिहार के एक लोकगीत में भी विरहिणी के अन्तस्तल से यही आवाज़ आ रही है

काग़ा सब तन खाइयो, चुन चुन खइयो मास,
दो नैना मत खाइयो, पिया मिलन की आस।
काग़ा नैन निकास दूँ, पिया पास ले जाय,
पहिले दरस दिखाइ कै, पीछे लीजौ खाय।

लेकिन एक मैथिली लोकगीत में विरहिणी ने गाया है

"रे काग, तू नित्य यही बोल कि मेरे प्रियतम आयेंगे। यदि आज मेरे प्राणनाथ मेरे उर आँगन में आये तो कनक-कटोरे में खीर और मीठे पकवान भर कर मैं तुझे खाने को दूँगी।

सोने से तेरी चोंच मँढाऊँगी, और तेरे चरण मढ़ाऊँगी।

मेरी बाई आँख फड़क रही है, और दाईं आँख रोती है। उन्हीं आँखों से तुझे नित्य निहारूँगी, और पहले से भी दूने प्रेम से तेरा प्रतिपाल करूँगी।

रे काग, तू *भगवान श्रीकृष्ण की तरह मन को हरनेवाला है।*

तेरी बोली अत्यन्त मीठी है।

कवि 'रमापति' (विरहिणी के शब्दों में) कह रहे हैं कि आज मेरी सारी अभिलाषाएँ पूरी हो गई।"[1]

अमानुषिक क्रूरता के बावजूद भी काक और कौआ जीवन के आगामी वृत्तान्त बतलाने में निपुण माने गये हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि भविष्यवाणी कहने के वाञ्छनीय गुण से प्रेरित होकर ही कुल-ललनाओं ने अपने कोमल हृदय में इन्हें स्थान दिया है। जायसी ने भी अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'पद्मावत' में नागमती के विलाप में काग को स्मरण किया है -

[1] 'सोहर', पृष्ठ ६८

होइ सर बान विरह तनु लागा,
जो दिऊ आवै उड़ै सो कागा।

सन्देशवाहक पक्षियों में कबूतर सब से तेज चलनेवाला हरकारा है। Pook of Knowledge के अनुसार वह अपने चरण में सदेशात्मक पत्र लेकर सैकड़ों मील दूर आसानी से आ-जा सकता है

"The homing pigeon flies hundreds of miles to its home and carries messages tied to its legs"

मिथिला के एक दूसरे कथात्मक गीत—'डोला मारू' में मारू ने सुग्गा को सन्देशवाहक बना कर ढोला के पास अपना प्रणय-सन्देश भेजा है। मारवाड़, गुजरात, राजस्थान और पंजाब में विरहिणियों ने 'कुंनतड़ी' से सन्देशवाहक का काम लिया है। गुजराती लोक-साहित्य में पपीहे की दर्द भरी रटन के प्रति भी खासा आकर्षण है। यह एक अजीब चिड़िया है। इसकी आवाज कर्णप्रिय मालूम होती है। बरसात में अमराई, हरियाले खेत या घनी पत्तियों के पर्दे में पपीहा बैठा नजर आता है। और इस जोश-खरोश से चहकारता है कि सुन कर दंग रह जाना पड़ता है। निम्नलिखित गुजराती लोक-गीत में पपीहे की लगातार 'पियू पियू' की रटन सुन कर किसी विरहिणी के दिल में ईर्ष्या का भाव जाग उठा है

पाँच कटाऊँ पपइया रे, ऊपर कालो लूण।
पिव मेरा मैं पिव की रे, तू पिव कहै स कूण।'

छोटानागपुर के लोक जीवन में कोयल और कौवे विरहिणियों के प्रणय-

'पियु तो मारा छे, अन हुँ पियू नी छु। तु' पियु शब्द बोलनारो कोण? तारी चाँच कापी ने ऊपर मीठु भभराव।'

पपइया रे पिव की वाणी न बोल

सन्देश उनके प्रियतम के हृदय तक ले जाते हैं

"कुहु-कुहु बोल रही है—कुहु कुहु
कोयल 'कुहु-कुहु' कूक रही है विजन वन में
मेरे प्रियतम का सन्देश लेती जाओ, री कोयल !
कैसी अजनबी है तुम्हारी भाषा ?"

[३]

मिथिला के विवाहकालीन लोक-गीत मुस्कान की गुलाबी आभा से प्रफुल्लित हैं। उनके प्रेम की शीतलता से लोक-हृदय की जलन शान्त हो गई है, जैसे जाग्रत और स्वप्न अवस्थाओं की वृत्तियाँ सुषुप्ति अवस्था में लीन हो जायँ। सुलाहिजा हो

"रानी कौशल्या और सुमित्रा ने कोहबर को
विविध प्रकार से सजाया,

मुणि पावेली विरहिणी रे
थारो राखेली पोय मरोड़

हे बपैया, तू 'पियु' के शब्दों न बोल। कोई विरहिणी सुनेगी तो तेरी पाँख तोड़ी नाखशे।

'विरहाग्निनी वेदना उचार तो बपैयो' शीर्षक लेख से 'फुलछाब', १३ सितम्बर, १९४०

' कुहु बोले हो कुहु बोले
कुहु बोले हो बिजुवन में
पिया के समाध मोरा ले-ले जाये रे
कमोने भाषो बोले।

और कैकेयी ने बड़े यत्न से आम के फले हुए गुच्छे के चित्र लिखे।
ऐसे ही चित्र लिखित कोहबर में अमुक दूल्हा सोया,
और उसके साथ उसकी नवोढ़ा दुलहिन भी सोयी।
दूल्हा ने अपनी नवोढ़ा दुलहिन का घूँघट खोला, और पूछा—
तुम्हारे शरीर में कौन-कौन से आभरण हैं?
दुलहिन ने कहा—'हे सजन, तुम मेरी माँग का शृङ्गार हो,
मेरा देवर शङ्ख का चुड़ला है,
मेरी सास मेरे गले का चन्द्रहार है, और दवरानी मेरा बाजूबन्द।
मेरा भाई मेरी आँखों का दिव्य नूर है,
मेरी ननद नौरंगी चोली है,
और मेरा भैंसुर (जेठ) मेरे ललाट का टिकुला है।
हे सजन, यही मेरे शरीर के आभरण हैं।" [1]

अलङ्कार की बेहूदी सजावट पर पारिवारिक प्रेम ने नवयुग का गरिमामय रङ्ग चढ़ा दिया है और वह चित्र लिखित कोहबर, जिसमें दाम्पत्य जीवन अपना अमङ्गल द्वैत, दैन्य भूल कर एक रूप हो जाता है, वैवाहिक प्रथा के रूढ़ि ग्रस्त पथ पर विज्ञान की शत-शत किरणें बिखेर रहा है। भैंसुर (जेठ), सास, देवरानी, ननद, देवर तथा प्रियतम के प्रति नवोढ़ा दुलहिन के नैसर्गिक प्रेम ने उसकी माँग के टिकुले, गले के चन्द्रहार, बाजू के जोशन, शरीर की नौरङ्गी चोली, कलाई के चुड़ले, ललाट की ईंगुर बिन्दी आदि पार्थिव रूप आभरणों को फीका कर दिखाया है। और दूल्हा अपनी गृहिणी के घटाटोप घूँघट का अन्ध अवगुंठन उठा कर उसके प्रकृत स्वरूप को मान दे गया है। 'आभूषण मानवी अङ्गों का नैतिक भूषण नहीं',—यह मान्यता जैसे लोक-हृदय में युग-युग से प्रतिष्ठित होती आई है अथवा उसकी अविकच इच्छायें आकाश बेलि की तरह विकास विटप पर चढ़ने के लिए समय-समय पर बेहद हैरान

[1] 'लग्नगीत', पृष्ठ १४४

हो उठी है।

श्रीकृष्णनारायण ठाकुर द्वारा संग्रहीत और 'हंस' में प्रकाशित एक मारवाड़ी लोकगीत के अन्तर्गत कण्ठ में भी यही भावना व्यापक हो उठी है। बहू सोलह शृङ्गार करके झमझम करती हुई महल में उतरी। सास कहती है कि अपने गहने पहन कर मुझे दिखाओ। लेकिन बहू ने तो सारे परिवार को ही अपना गहना मान लिया है। गीत में, लोक-जीवन की यह अमर-वाणी नारी के प्राकृतिक मनस्तत्त्व का इजहार दे रही है

"मधुबन में आम बौरा है, जो कि सारे मारवाड़ में फैल गया है।
हे महलियो, आम में बौर आ गया है।
बहू सोलह शृङ्गार करके झमझम करती हुई महल से उतरी—
सास ने कहा—'हे बहू, अपने गहने पहन कर मुझे दिखाओ।'
बहू ने कहा—'हे सास जी, मेरे गहने की बात मत पूछो।
मेरा गहना तो सारा परिवार है।
मेरे ससुर जी घर के राजा हैं, और सास जी घर के भण्डार।
मेरे जेठ जी बाजूबन्द हैं, और जेठानी जी बाजूबन्द की लूम।
मेरा देवर मेरी हाथी-दाँत की चूड़ी है, और देवरानी उसकी टीप।
मेरा पुत्र घर का उजियाला है, और पुत्र-वधू दीप की ज्योति।
मेरी बेटी उँगली की अंगूठी है, और मेरा दामाद मोतियों का फूल
मेरी ननद कुसुम्भी चोली है, और ननदोई गजमुक्ताओं का हार।
मेरे प्रियतम सिर के सेहरा हैं, और मैं हूँ उनकी सेज का शृङ्गार।'
सास ने कहा—'बहू, मैं तुम्हारी बोली पर कुर्बान हूँ।
तुमने मेरे सारे परिवार को गौरवान्वित किया है।'
बहू ने कहा—'सास जी, मैं तुम्हारी कोख पर कुर्बान जाऊँ।
तुमने तो अर्जुन-भीम जैसे पुत्र पैदा किये हैं,
और हे सास! मैं तुम्हारी गोद पर कुर्बान जाऊँ।

तुमने तो राम और लक्ष्मण-जैसे भाइयों को गोद में
लाड़ लड़ाया है।"

मारवाड़ और मिथिला के लोक-गीतों का यह एकीकरण भारत के पारस्परिक -भाव-साहचर्य का बेमिसाल नमूना है। टसर के कीड़े के समान नारी-मसार का दिलोभूत आनन्द अपने आलोक के जाल फैला कर इन गीतों के अन्तर्नयनों में उद्भासित हो रहा है। सुवरण के सूर्योदय से लोक-मानस का उन्मीलित सरसिज खिल उठा है। उसकी चिर पुरातन ग्रन्थियाँ आँसुओं से साफ़ हो रही हैं, रक्त के फ़व्वारे से धुल गई है।

लोकगीतों की इस प्रगतिशीलता की उस ज्वालामुखी की फूत्कार से मिसाल दी जा सकती है, जिसकी धधक अपने रूप विनिमय में आकस्मिक है, जिसकी विस्फोटक शक्तियाँ हज़ारों वर्षों से ख़ामोश बेपरवाही के साथ वैद्युतिक सङ्गठन के साँचे में ढला करती हैं। युग के बाद युग आते हैं, और उसका दानवाकार गोफा प्रत्या वर्तन की घनीभूत नीहारिका से ठसाठस भर जाता है। अन्त में वह उस शीर्ष बिन्दु पर पहुँच जाता है, जहाँ उसका धमनी-स्फुरण पृथिवी और वायु के निम्न चाप को अपनी गुरता से डाँवाडोल कर देता है। उस समय वायव्य पटल का बैरोमीटर अपनी चरम सीमा को स्पर्श करता है, और उसकी बन्दी शक्तियाँ गम्भीर कोलाहल करती हुई लोक-मण्डल को विस्फारित सा कर देती है।

जिस तरह विवाह-कालीन लोक-गीतों में प्रफुल्लता, विनोद और उल्लासमय वातावरण का आभास मिलता है, उसी तरह उनमें करुण रस की मन्दाकिनी भी मन्द-मन्द प्रवाहित होती है। मिथिला के लग्न-गीतों में इस कोटि के गीत 'समदाऊनि' के नाम से प्रसिद्ध है। इन्हें विवाह-संस्कार के बाद लड़की की विदा के समय गाया जाता है। यह है उस गीत का भाव

"कहाँ से यह डोली आई है, और कहाँ जायगी?
उत्तर से यह डोली आई है, और दक्षिण जायगी।
जब डोली उत्तर की ओर चली, तब अपने बाबा की याद ताज़ी हो आई। मेरे

बाबा मुझे पगड़ी के पेंच (तह) की तरह रखते थे। लेकिन हाय! अब यह डोली मुझे ससुर के राज्य में ले जायगी, जहाँ मैं घर की पोतन (मोटे कपड़ों की तह करके बाँधी गई एक किस्म की झाड़ू, जिसको भिगो कर आंगन लेपा जाता है।) हो जाऊँगी।

जब डोली पूरब की ओर चली, तब अपने पिता की याद तड़पाने लगी। मेरे पिता मुझे धोती के फेंट की तरह रखते थे। लेकिन हाय! अब यह डोली मुझे ससुर के राज्य में ले जायगी, जहाँ मैं घर की बोहारी हो जाऊँगी।

जब डोली पश्चिम की ओर चली, तब अपनी चाची की याद ताज़ी हो आई। मेरी चाची मुझे माँग के सिन्दूर की तरह रखती थी। लेकिन हाय! अब यह डोली मुझे ससुर के देश में ले जायगी, जहाँ मैं घर की चलनी हो जाऊँगी।

जब डोली दक्षिण की ओर चली, तब मुझे अपनी माँ की याद ताज़ी हो आई। मेरी माँ मुझे जंगल के सुग्गे की तरह रखती थी। लेकिन हाय! अब यह डोली मुझे ससुर के देश में ले जायगी, जहाँ मैं पिंजड़े का सुग्गा हो जाऊँगी।'[1]

यह नवविवाहिता दुलहिन, जो नैहर से डोली में बैठ कर श्वसुर-गृह जा रही है, मिथिला के कौटुम्बिक जीवन का एक चित्र उपस्थित करती है। गीत के प्रथम, द्वितीय और तृतीय छन्द में वह बतला रही है

'बाबा, पिता और चाची के राज्य में वह पगड़ी, धोती के पेंच, और सिर के *सिन्दूर की तरह रहती थी। लेकिन श्वसुर के राज्य में वह घर की* 'पोतन', 'झाड़' और 'चलनी' हो जायगी।'

पिता से बाबा का स्नेह सन्तान पर ज़्यादा होता ही है, यह मशहूर है, यद्यपि इसके अपवाद भी देखे जाते हैं। इसलिए कन्या का बाबा उसे 'पगड़ी' के पेंच की तरह रखता है। पगड़ी सिर में तह-पर-तह देकर लपेट कर बाँधी जाती है। शरीर के अवयवों में सिर का स्थान सर्वोच्च है। पगड़ी तो सिर का ही शृङ्गार है। पहनावे के लिहाज़ से समाज की दृष्टि में पगड़ी को जो मान मिलता है, वही मान कन्या अपने

[1] 'समदाऊनि', पृष्ठ १७८

बाबा में पाती है। पिता से वह कुछ कम मान पाती है। उसका पिता उसे धोती के फेंट की भाँति रखता है। धोती कमर में लपेट कर पहनी जाती है। सिर से कमर का स्थान नीचा है ही। चाची के राज्य में वह सिर के सिन्दूर की तरह रहती है। सिन्दूर सुहाग का चिह्न है। नारी-समाज में सिन्दूर का जो महत्त्व है, वही महत्त्व चाची की आँखों में कन्या का है। किन्तु, पट बदलता है। ससुराल जाने पर उसकी सुनहली आकांक्षायें कुसुम की कोमल पखड़ियों की तरह कुचली जाती हैं। वहाँ वह घर की पोतन, झाड़ू, और चलनी हो जाती है यद्यपि पोतन, झाड़ू और चलनी होकर भी वह कौटुम्बिक जीवन के मलिन आँगन को लीपती, बुहारती और चाल कर स्वच्छ करती है। विवाह का भारवाही बन्धन हजारों वर्षों से नारी-जीवन के गले में वबालेजान हो रहा है। सदियों से समाज का कलन्दर नारी को बन्दरी की तरह नचाता रहा है।

'नारी एक विषधर अहि के रूप में परिणत हो गयी है, नहीं तो पाषाण की अहल्या,' उत्कल साहित्य का एक ख्यातिलब्ध लेखक लिखता है, ' कोई उससे डर कर दूर रहता है, अथवा कोई उसे देवी करने के उद्देश्य से पत्थर के रूप में रखता है. जो व्यक्ति नारी से दूर है, उसने उसे घृणा और अभिसम्पात दिया है, और जिसने उसे जड़ कर रक्खा, उसने कुछ भी करने को बाकी नहीं रक्खा है। इसी भाव के द्वारा नारी ने पुरुष से जो निग्रह पाया है, वह किसी नीग्रो गुलाम के प्रति गोरे क्रिश्चियनों के कठोर व्यवहार से लेशमात्र कम नहीं है। जहाँ पर उसने असावधान होकर एक अन्य पुरुष को देख लिया है, वहाँ से उसकी आँखें बन्द कर दी जाती है, जहाँ किसी पुरुष ने उसको एक बार छू दिया है, वहाँ होती है उसकी अग्नि-परीक्षा। सभी स्थानों में नारी को मूर्ख, अविवेकी, मूक और जड़ कर रखने के अतिरिक्त पुरुष ने उसकी पवित्रता सुरक्षित रखने का और दूसरा कोई सदुपाय नहीं खोजा है। नारी ने भी अपनी इस अवस्था को आशीर्वाद समझ कर पुरुष के प्रति प्रीति और भक्ति का निर्बोध परिचय दिया है, किंवा दैव का अभिशाप समझ कर चुप रह गयी है।'

गीत के चतुर्थ छन्द में दुलहिन कह रही है—'माँ के राज्य में वह जङ्गली सुग्गे की तरह रहती थी। लेकिन हाय! ससुर के राज्य में वह पिंजड़े का सुग्गा हो जायगी।'

प्राणिमात्र को स्वाधीनता प्यारी है। स्वाधीनता का कालकूट भी मीठा लगता है, और पराधीनता का अमृत भी कड़वा। मनुष्य तो विवेकशील प्राणी है। पशु-पक्षी भी बन्दी-गृह में रहना पसन्द नहीं करते। 'पालतू पक्षी पिंजड़े में है, और स्वाधीन पक्षी जंगल में,' स्वर्गीय श्री रवीन्द्रनाथ टाकुर ने लिखा है—'समय आने पर वे दोनों मिले, यही होनहार थी।' स्वाधीन पक्षी ने कहा—प्रियतम, आओ जङ्गल को उड़ चलें।' पिंजड़े के पक्षी ने कहा—'भीतर आओ हम दोनों इसी पिंजड़े में रहेंगे।' स्वाधीन पक्षी बोला—'इन सीखचों के अन्दर पंख फैलाने के लिए स्थान कहाँ है?' पिंजड़े के पक्षी ने कहा—'पर आकाश में बैठेंगे कहाँ?' स्वाधीन पक्षी ने फिर कहा—'प्रियवर, जंगल के गीत गाओ।' पिंजड़े का पक्षी बोला—'मेरे पास बैठो, मैं तुम्हें विद्वानों की भाषा सिखाऊँ।' स्वाधीन पक्षी ने कहा—'भला गीत भी कहीं सिखाने से आता है?' पिंजड़े के पक्षी ने आह भरकर कहा—'पर मुझे तो जंगली गाने आते नहीं।' उनका स्नेह आकांक्षाओं से परिपूर्ण है पर वे एक साथ उड़ नहीं सकते। पिंजड़े के सीखचों में होकर वे एक दूसरे को देखते हैं, पर उनकी एक दूसरे को पहचानने की आकांक्षा व्यर्थ है। वह पंख फड़फड़ाता है, और पुकारता है—'हो नहीं सकता। पिंजड़े की बन्द खिड़की से मुझे भय लगता है।' पिंजड़े वाला पक्षी धीरे धीरे कहता है—'मेरे पंख शक्तिहीन और मृतप्राय हो रहे हैं।'

नारी-जीवन परवशता के पिंजड़े में कैद होकर पालतू सुग्गे की भाँति निरुपाय हो गया है। उसके पंख अशक्त और मृतप्राय हो रहे हैं। उसकी आत्मा नष्ट हो गई है। उपर्युक्त गीत की कवियित्री ने 'पोसन, झाड़ू, चलनी और बन्दी सुग्गे' इन तीन-चार शब्दों में ही युग-युग से प्रपीड़ित गृहिणी के भग्न मनोरथ और भयाक्रान्त जीवन का नग्न चित्र खींच दिया है। उसने बूँद में बाड़व की जलन भर दी है। उसके दर्दनाक शब्दों में केवल मिथिला ही नहीं, समग्र नारी-समाज के हृदय की कातर वाणी गूँज उठी है। गीत में अन्धकार की अतल गुहा-सी झाँकती हुई नारी-समाज की लाख लाख आँखें, जिनसे नैराश्य और विवशता का सागर उमड़ा पड़ता है, मन्वन्तर तक—कदाचित् विधाता की इस जीर्ण सृष्टि के बाद भी अन्तरिक्ष के शून्य अञ्चल में

बर्छी की तीखी नोक की तरह चुभती रहेंगी। और गीत के ये चार शब्द (पोतन, चलनी, झाड़ू, और बदी मुरगे) पुरुष वर्ग के निर्मम अत्याचार के सवाक् स्मारक के रूप में मानवी के पाशवी पीड़न का विज्ञापन करते रहेंगे।

मिथिला के कितने ही लग्न गीतों में मानव की चिर सहधर्मिणी नारी की न जाने कितनी सुखद स्मृतियाँ अपूर्ण रचि बन कर हारिल पन्छी सी निराधार गगन में मँडला रही हैं और विकृत वक्र रेखाओं से सृजित उसका अशान्त भाग्य लू के झुलसे हुए पत्र सा चहारदीवारी के सून कोनों में कसक भरी हिचकी ले रहा है। उसकी पद निर्दलित लालसा युग-युग से चिनगारी सी दहक-दहक कर समाज की खोखली शून्यता में विलीन हो जाती है। तो भी करुणा विगलित उसकी पुकार का कोई उत्तर नहीं मिलता। उसकी स्मित में तो घोर अन्धकार है। छठी की रात्रि में ही जिसकी तकदीर की लिपि धूमिल कर दी गई, उसके जीवन में प्रकाश कहाँ?

पुत्र-पुत्री के वैषम्य का एक करुण चित्र देखिये। जीवन के एक ही सिक्के के दो पहलुओं का लोक-गीत की रचयित्री ने इस दर्दनाक ढंग से व्यक्त किया है कि उन पर वाल्मीकि के सैकड़ों करुण श्लोक न्योछावर किये जा सकेंगे। सुनिये

"बेटी ने पूछा—'हे माँ किस वस्तु के अभाव में चावल नहीं गला और किसके बिना आँख में नींद नहीं आई।'

माँ ने कहा—'हे बेटी, दूध के अभाव में चावल नहीं गला, और पुत्र के बिना आँख में नींद नहीं आई।'

'हे बेटी, जिस दिन तुम्हारा जन्म हुआ उस दिन भादों की अँधेरी रात थी। तुम्हारी दादी का चित्त उदास था। उसने घर-घर के द्वार बन्द कर शोक मनाया। तुम्हारी फुआ आगबगूला हो गई और सिर से पैर तक चादर लपेट कर सो गई। और मैंने जंगल के गीले कपड़े लेकर अँगीठी जलायी तथा बड़ी बेचैनी में रात काटी।

'लेकिन, हे बेटी, जिस दिन मेरे पुत्र का जन्म हुआ, उस दिन पूर्ण चाँद खिल गया। तुम्हारी दादी बाँसों उछल पड़ी। उसने घर-घर के द्वार खोलकर उत्सव

मनाये। तुम्हारी फूआ आनन्द विह्वल हो गई। सखियों ने मिल कर मंगल-गान गाये। तुम्हारे पिता बड़े प्रसन्न हुए और कटोरा-भर मुहरें दान कीं। और हे बेटी, मैंने सुगन्धित धूप भर कर अँगीठी जलायी तथा बड़े सुखपूर्वक रात काटी।

'पुत्र तो पिता की सम्पत्ति का पूरा अधिकारी है, पर कन्या कुछ भी नहीं,' बंकिम बाबू अपने 'साम्यतत्त्व' नामक ग्रन्थ में लिखते हैं—"पुत्र और कन्या, दोनों का एक ही औरस, और एक ही गर्भ से जन्म होता है, दोनों ही के लिए माता-पिता एक ही प्रकार का यत्न करते हैं, और दोनों के प्रति एक ही प्रकार का कर्त्तव्य कर्म है। लेकिन पुत्र तो पिता की मृत्यु के बाद उसके करोड़ों रुपये शराबखोरी वगैरह में फूँक दे, पर कन्या सख्त जरूरत होने पर भी उसमें से एक कानी कौड़ी तक न पा सके। इस नीति का जो कारण हिन्दू शास्त्रों में ठहराया गया है, वह यह है कि जो श्राद्ध करने का अधिकारी है, वही सम्पत्ति का उत्तराधिकारी है। यह ऐसा ऊटपटांग और गैर-मुनासिब सिद्धान्त है कि इसकी युक्तिहीनता दिखलाना बेकार है।"

मिलन के उद्यान में, वियोग के दावानल में ही नवीन अंकुर फूटता है, जैसे डाली में काँटे के साथ फूल भी खिलते हैं। वियोग तो मानव आत्मा का नित्य का भोजन है। वियोग का तिक्त घूँट पीकर ही सांसारिक जीवन मीठा होता है। लोक-साहित्य भी इसी शाश्वत नियम का वशवर्ती है। उसमें धूप है, तो छाँह भी। मिलन है, तो वियोग भी। प्रान्त प्रान्त और देश-देश के लोक-साहित्य में वियोग के वेदनामय गीतों को स्थान मिला है। पंजाब के एक विदाकालीन लोक-गीत में कन्या ने अपने पिता से कहा है

> सांडा चिड़ियाँ दा चम्बा वे,
>
> बाबल असाँ उड़ जानाँ।
>
> साडी लम्बी उडारी वे,
>
> बाबल के हरे देश जानाँ।
>
> तेरा मौका भावड़ा वे,
>
> बाबल तेरा कौन करे ?

तेरा महलाँ दे विचविच वे,

बावल मेरी माँ रोवें!

"हे पिता, मैं तो पछी हूँ। मुझे तो एक दिन उड़ जाना है मेरी उड़ान लम्बी है—मैं उड़ कर न जाने किस अनजाने देश में जाऊँगी। हे पिता, मेरी गैरहाजिरी में न मालूम तुम्हारी रसोई कौन राँधेगा? हाय! तुम्हारे महल में मेरी माँ बिसूर रही है।"

पोलैन्ड देश में कन्या को विदा करते समय उसकी सखी कह रही है

"Barbara it is all over, then you are lost to us, you belong to us no more"[1]

"बारबरा, सारे सुनहले अरमान खाक में मिल गये। क्योंकि हमने तुम्हें हमेशा के लिए खो दिया। हाय! अब तुम हमारी नहीं रही।"

नैहर से ससुराल जाती हुई गुजरात की एक कन्या कहती है

अमे रे लीलुडा वननी चर कलडी

उडी जाशुं परदेश जी

आज रे दादाजी ना देश माँ

काले जाशु परदेश जो[2]

"मैं तो हरे-भरे जगल की पछी हूँ। उड़ कर परदेश चली जाऊँगी। आज दादा जी के देश में हूँ कल परदेश चली जाऊँगी।"

स्वर्गीय श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर की अमर कृति 'कच-देवयानी' के सलाप में कच के विदा लेने के समय देवयानी ने आहें भर कर कहा है—'वर्षों से इस उपवन ने तुम्हें छाया दी है, मधुर सगीत सुनाया है, क्या इसे त्याग देना तुम्हारे लिए इतना सरल है? क्या तुम्हें नहीं जान पड़ता कि यहाँ का पवन साँय-साँय करके रो रहा है,

[1] H. N. Hutchinson, *Marriage Customs in many Lands.*

[2] लोक-साहित्य . लग्न-गीतोना ध्वनि, पृष्ठ १८३

और यहाँ की सूखी पत्तियाँ मृत्युगत आत्माओं के प्रेत के समान हवा में इधर-उधर झोंके खा रही हैं, और तुम, केवल तुम—जो हमको छोड़ जा रहे हो—मुसकरा रहे हो, तुम्हारे ही होठों पर हँसी है।"

विवाह के किसी किसी गीत में समाज की अत्यन्त उन्नत अवस्था का परिचय मिलता है। उनके अनुसार तत्कालीन वैवाहिक व्यवस्था भौतिक परिगतों (Environments) की आधार-शिला पर अवलम्बित है। उनकी वैषयिक पेलवता (Sexual delicacy) आधुनिक शिष्ट सभ्यता की अपेक्षा अधिक चमत्कारक है। यहाँ जिस समय का चित्र दिया जाता है, उस समय वर और कन्या का विवाह स्वयं उनकी ही रजामन्दी पर निर्भर था। धार्मिक गपोड़बाजी, पौराणिक (Mythological) ढकोसला और जात-पात की सङ्कीर्णता उस समय विवाह के प्राकृत मार्ग में रोड़े नहीं बिछाते थी। इन लड़ी में गुँथे हुए मिथिला और छोटा नागपुर के समस्त लग्न-गीत हैं, जिसमें विवाह की ओर प्रेरित करने वाली सौन्दर्योपासना अपने मनोवैज्ञानिक रूप में विकसित हुई है।

जितना ही हम लोक-साहित्य के प्राचीन-से प्राचीनतम लग्न-गीतों के इतिहास का अध्ययन करते हैं, उतना ही विवाह-सम्बन्धी नियमों की मानसिक दशा में बौद्धिक शक्ति के विकास का आभास मिलता है। और, जैसे जैसे समाज के रूप में रूपान्तर होता है, वैसे-वैसे लग्न-गीतों में विवाह की उपादेयता भी विकृत होती जाती है। आज वैवाहिक प्रथा का जो नग्न कलेवर हमारे सामने प्रत्यक्ष है, वह उसका नैसर्गिक कलेवर नहीं, प्रत्युत उपर्युक्त मान्यता के प्रतिकूल अधोमुखी सभ्यता का शुष्क कंकाल मात्र है।

[८]

लोक-गीत की दुनिया में पीड़ित किसानों तथा बुभुक्षित श्रमजीवियों के प्रति भी सहानुभूति उमड़ पड़ी है। जीवन की छाया की पार्श्वभूमि में मानवता का जीर्ण कङ्काल झाँकता-सा प्रतीत होता है। दुःखान्त पीड़ा का यह भावचित्र मन में विषाद का गम्भीर गाढ़ रंग भर रहा है, और इति-धारा में बन्दी मानवता मुक्ति के लिए चीत्कार कर रही है —

"ओ भोले शकर, तुमने मेरे दिन कितने दुरद बनाये ‘
जो थोड़ी-बहुत खेती-बाड़ी थी, वह भी तुमने छीन ली।
और तो और, मेरे सगे भाइयों ने भी—
मुझसे बँटवारा कर लिया।
घर मे खर्चा नही है,
और बाहर ऋण नही मिलता।
यहा तक कि गाँव का जमीदार
रात म चैन की नींद नहा सोन दता।
एक ही लोटा है, और भाइ तीन ह।
अत पानी पीने के वक्त छीना झपटी होती है।
एक बैल बच गया था,
जिसको महाजन न ऋण म हडप लिया।
हाय! हित मित्र और अपने सगे-सम्बन्धी भी,
पराये हो गये।" [१]

दैन्य स जजर और अधिकार-पद से च्युत मानव-हृदय इन दर्दनाक पंक्तियों म पाशविक अर्थ भित्ति का विरोध कर उठा है, और सहसा मेरा ध्यान उस दृश्य की ओर ले जाता है जो अमेरिका के प्रसिद्ध कवि एडविन मार्खम की 'The Man with the Hoe' शीर्षक रचना मे चित्रित हुआ है

"सदियों के भार से जिसकी कमर टेढी हो गयी है, और जो फावडे के सहारे झुका हुआ जमीन म दृष्टि गडाये है।

जिसके चेहरे पर युग-युग की शून्य लिपि अंकित है और जो अपनी जर्जरित पीठ पर दुनिया का बोझ ढो रहा है।"

युग-युग से गरीबों की भूख पर धूल डाल कर मिष्ठान्न उडानेवाला स्वार्थी

[१] 'नवारी', पृष्ठ १५३

नमार सामाजिक विषमता के इस निमम क्रीड़ा-चक्र को आँखें फाड़-फाड़ कर देख रहा है, और युग-युग से अन्धकार-कदम में रुद्ध मानवता जगत की निर्मातृ शक्ति से न्याय की भीख माँग रही है।

मिथिला के एक दूसरे लोक-प्रिय गीत में जमीदारों की पाशविकता, उनके कारिन्दों की कठोर-हृदयता, मजदूरों की बेरसी और उनके बच्चों के क्रन्दन का सजीव चित्र खींचा गया है। यह गीत मिथिला में बैशाख और जेठ महीने में, जब कभी पानी नहीं बरसता और दुर्भिक्ष की सम्भावना दीखती है, चाँदनी रात में गाया जाता है उसके निम्न लिखित भाव हैं

हे इन्द्र देवता, रिमझिम बरसो
क्योंकि पानी के बिना दुर्भिक्ष पड़ गया है।
हरे-भरे मैदान सूख गये।
नदी-नाले और तालाब मरुभूमि-से दीखने लगे,
और मेरे भाई के हरी फसल से भरने वाले खेत भी ऊसर हो गये।
हाय! विधवा ब्राह्मणी भी हल जोतने लगी,
लेकिन पानी के बिना, जमीन के पत्थर-सी—
कड़ी हो जाने के कारण फाल उछल-उछल कर
झाड़ियों में लग जाती है।
हे इन्द्र देवता, झम झम बरसो,
पानी के बिना दुर्भिक्ष पड़ रहा है।
सिर्फ धोबी के आँगन में ही—
कुछ गँदला और मैला पानी रह गया है।
उसी गँदले अपवित्र जल में ब्राह्मण स्नान कर रहे हैं,
और, उसी मैले पानी से वे धोती कचारते,
जनेऊ माँटते और रच-रच कर चन्दन लगाते हैं।
हे इन्द्र देवता, रिमझिम बरसो,

पानी के बिना दुर्भिक्ष पड़ रहा है।
मज़दूरों के छोटे-छोटे बच्चे—
भूख से बिलबिल कर रहे हैं,
लेकिन उनके मालिक अपनी—
खत्तियों को नहीं खोलते!
और तो और, गाँव के पटवारी भी—
झूठ-मूठ गरीबों के सिर कर्ज का बोझ,—
लाद कर अन्धेर कर रहे हैं,
और मज़दूरों की मज़दूरी में,
गड़ीभली सेमरो तौलते हैं।
हे इन्द्र देवता, झमझम बरसो,
पानी के बिना दुर्भिक्ष पड़ रहा है।"

लोक-गीत में वर्ग-हीन सामाजिकता का सूक्ष्म निरूपण आज में नहीं, सदियों में होता आया है, अथवा यों कहिये कि एकाधिकार और व्यक्तिगत उत्पादन-शक्ति का विकास होने के साथ ही लोक-गीत भौतिक आवश्यकताओं की एकता की घोषणा कर रहे हैं। जीवन के अखिल उपकरण मानव-सन्तान का पैतृक स्वत्व तो है नहीं। इनका उद्गम-स्थान है प्रकृति का उदार हृदय। तभी उसने अपने स्वच्छ मानस-दर्पण में लोक-जगत की प्रतिच्छाया अंकित कर ली।

छोटा नागपुर की 'मागे और फायगु' शैली के लोक-गीतों में उस जमाने की तसवीर भी मिलती है, जब प्रकृति की मत्र फली-फूली क्यारियों के फूलों तक पर व्यक्तिगत अधिकार था। भूस्वामियों की बगैर इजाज़त के न तो कोई फूलों को पखड़ी तोड़ सकता था, और न कोई पहाड़ी और गोचर भूमि पर स्वच्छन्दतापूर्वक विचर सकता था -

राजा के पोखर किनारे एक चम्पा का गाछ है जी!
झर-झर चूता है चम्पा का फूल

बेली और चमेली के फूल भी बगीचा में लहराते हैं
एक कली का फूल
दो कली का फूल
न कौड़ी है मेरे पास,
और न दमड़ी
हाय, कैसे खरीदूँगी चम्पा का फूल मैं
और कैसे पहनूँगी बेली का फूल।'

स्वार्थ-लिप्सा ही विश्व-सभ्यता का मापदण्ड बन उठी है। लोक उपवन का यह फूल, जो सामाजिक समता का समर्थन करता है, सामूहिक जन-जीवन के कलेजे में शूल की तरह चुभ रहा है। उसकी फूल की पखुड़ियों में गन्ध पर्याप्त मात्रा में है, लेकिन वह अपनी महक से मतवाले मधुपों के लिए हृदय-पट में [illegible] नहीं कर सकता। त्रुटि अपने रंगीन चोले में निखर उठी, लेकिन उसका अन्तरूप दानवी तुफैल के शिकंजे में गिरफ्तार रहा, आज भी उसकी वह बेढंगी रफ्तार जारी है, जो पहले थी। उसके तमाच्छन्न मस्तिष्क में विवेक का प्रकाश नहीं। शरणागत छिद्र तो अनन्त हैं भौतिक विश्व का अन्ध-चक्षु सत्य को टटोल रहा है। वैज्ञानिक सभ्यता की चमक-दमक उसके अभियान-पथ में प्रकाश बिखेर रही है। कभी-न-कभी मानव संसार में सौन्दर्य का प्रसार होगा ही।

———

विषय-सूची

——

सोहर

मैथिल ग्रामीण कविता के क्षेत्र में 'सोहर' की रचना पद्धति अत्यन्त पुरानी है। मिथिला के लोक-जीवन को आनन्दमय बनाने में अन्य अनेक गीत शैलियों के अलावा 'सोहर' का भी ज़बरदस्त हाथ है। पुत्र जन्मोत्सव के उपलक्ष में गली-कूचे, टोले मुहल्ले और गाँव के कोने कोने में गायिकाओं की महफ़िलें जुटती हैं। ज़च्चा का ख़ामोश आँगन 'सोहर' के नशीले झोंकों से गूँज उठता है। कमसिन बालाएँ, कुमारी युवतियाँ और बड़ी बूढ़ी तजरुबेकार औरतें उमड़े हुए दल बादल की तरह ठट-की-ठट टूट पड़ती हैं, और संगीत की मन्द मन्द बूँदें बरसाती हैं। प्रसूतिका भवन का पार्श्ववर्ती प्रांगण संगीतशाला में परिणत हो जाता है। शिशु जन्म के छठवें दिन उत्सव अपने पूरे जोबन पर होता है। उत्सव प्रारम्भ होने के पहले प्रसूता आँगन में लाई जाती है, जहाँ स्नानादि से निवृत्त हो वह स्वच्छ वस्त्राभूषण से सुसज्जित होती है। प्रसूता के इष्ट मित्र, बन्धु-बान्धव, छोटे बड़े प्रफुल्ल वदन दीखते हैं। सारा परिवार हर्ष से फूला नहीं समाता। नर्तकियाँ अँगड़ाई का नक़शा बन-बन कर इस ढब से रबाब पर मुबारकबाद गाती हैं कि सुननेवाले दंग हो जाते हैं। प्रसूता यदि सम्पन्न घराने की रही, तो उसके रिश्तेदार मुट्ठियाँ भर भर कर इनाम बाँटते हैं और कंगाल निहाल हो जाते हैं। लेकिन लड़की के जन्म पर यह आनन्द की शहनाई नहीं बजती बल्कि सारा ठाट बाट, चहल पहल, राग रंग फीका पड़ जाता है। प्रसूता के आनन्द महल उजाड़ की गोद में सो जाते हैं, और हर तरफ़ शाम की रँगी सायों-सी उदासी छा जाती है।

पुत्र जन्म के अलावा उपनयन और विवाह संस्कार के उत्सव पर भी 'सोहर' गाये जाते हैं। यद्यपि इसके सिद्धहस्त और उन्नतमना रचयिताओं ने पिंगल और

व्याकरण के नियमों की जगह-जगह अवहेलना की है, फिर भी इसकी टेक रागात्मिका वृत्ति से प्रभावान्वित है। इसका कारण यह है कि 'सोहर' के रचना कौशल में ज्यादातर ग्रामीण स्त्रियों का हाथ है। इसलिए इसकी रचना पद्धति भी सुलभ कोमलता-सम्पन्न है और इसका सम्वादी स्वर सौन्दर्यमयी व्यञ्जना से अनुप्राणित। कभी-कभी चाँद की ठंडी रोशनी में बैठ कर जब स्त्रियाँ अपने रसीले स्वरों में 'सोहर' गाती हैं, तो समा बँध जाता है।

'झूमर' और 'सोहर'—दोनों में अन्तर है। 'झूमर' अधिकांशतः छोटी छोटी बहरों में लिखा गया है, और 'सोहर' अधिकतर बड़े बड़े छन्दों में व्यक्त किया गया है। 'झूमर' में मैथिली टकसाली मुहाविरे प्रचुरता से इस्तेमाल किये गये हैं, 'सोहर' में यह गुण बहुत कम है। इसमें 'झूमर' की रंगीन शिहरकारी और चमक दमक नहीं मिलती। 'झूमर' भाव प्रधान गीत है, 'सोहर' में यह गुण, जैसे—शरद्-वर्णन, प्रकृति-वर्णन, बादल वर्णन, वसन्त-वर्णन आदि कहीं-कहीं बड़े कवित्वमय ढंग से व्यंजित किये गये हैं। 'झूमर', तुकान्त होता है, और इसकी मात्राएँ भी प्रायः एक-सी होती हैं। 'सोहर' भी तुकान्त होता है।[1] लेकिन कोई-कोई 'ब्लैंक वर्स' की तरह भी लिखा गया है। 'झूमर' में प्रेम की करुण चीत्कार, अतृप्त अमिट प्यास और एक युगान्तर दीर्घ वेदना की कलात्मक अभिव्यक्ति दीख पड़ती है। फूल के अन्तस्तल में बैठे हुए कीट के समान उसके हृदय को एक व्यास कचोटा करती है। लेकिन 'सोहर' में एक उमंग, एक तरंग, और उल्लास की एक स्पष्ट झलक दिखलाई देती है। 'झूमर' के ज्यादातर मज़मून आशिक-माशूकों, नायक नायिकाओं की विरह मीमांसा से भरे पड़े हैं। 'सोहर' में माशूक, आशिकों और नायिकाएँ नायकों की जुल्फें सँवारने के लिए बेचैन नहीं दीखतीं। 'झूमर' में निराशा के दिलसोज़ आसू दिल को बेचैन करते हैं। 'सोहर' सुखान्त होता है, और इसमें आशा की निर्बन्ध निर्झरिणी टेढ़ी नागिन-सी बल खाती बिजली सी दौड़ती हुई चली गई है। उदाहरण स्वरूप इस शैली के कुछ लोकप्रिय नमूनों का मुलाहिज़ा कीजिये—

[1] अर्वाचीन नूतन शैली के 'सोहर' इस कथन के अपवाद हैं।

[१]

अरे आरे प्रेम चिरइया झरोखा चढ़ि बोलले रे
ललना पिया मोरा गैल बिदेश बिदेशे घर छाअल रे
सासु मोरा निशि दिना मारए ननद गरिआवए रे
ललना गोतिनी कहएन तरमन बँझिनिया गरछाअल रे
एक हाथे लेली घइलिया दोसरे हाथ गेंडुल रे
ललना निकलल पनिया के गैला ऊपर काग बोलल रे

जिए मोरा रगवा रे तना अइहन फिर मोरा भइया अइहेन रे
रगवा कओने सगुनमा लए अएल त बोलिया बर सोहावन रे
नये तोरा रानी हे थना अइहन नये तोरा भइया अइहेन हे
ललना होरिला सगुनमा लए अइला त बोलिया बर सोहावन हे
जँओ मोरा रगवा रे थना अइहेन जओ मोरा भइया अइहेन रे
रगवा तोहरा काटब दुनु लोल त बोलना बर सोहावन रे
जँओ मोरा रगवा रे पिअवा अइहेन होरिला जनम लेत रे
रगवा सोनमे मढ़एबो दुनु लोल त बोलिया बर सोहावन रे

पनिया जे भरलो मे गगादह अओरो गगादह रे
ललना चारु दिशा नजरि खिराओल नयन लोर ढर ढर रे
पिअ सरूपे पिया अयलन आगुए भए ठाढ़ि भेल रे
ललना कओने कओने दुख तिरिया कओने दुख रोदन हे
सासु मारा पिअ हे मारए ननद गरियावय हे
पिअ गोतिनी कहएन तरमन बँझिनिया गरछाओल हे
चुप रहु चुप रहु तिरिया जनिअ करू रोदन हे
तिरिया आजुए आओत घरनइया बँझिनिया पाप छूटत हे

'रे झरोखा पर चहकते हुए प्रेम के पक्षी, मेरा संदेश ले जाओ।

'मेरे प्रियतम प्रवासी हैं। मेरी सास मुझे मारती है। ननद गाली देती है और गोतिनी 'बाँझिन' कह कर ताना देती है।

'हे सखी, एक हाथ में घड़ा लिया, और दूसरे में गेरुआ[1]। इस प्रकार विरह की बावरी मैं जल भरने चली कि सिर पर काग बोलने लगा।

'रे काग, क्या मैके से मेरे पिता आ रहे हैं या भाई? आज तुम कौन सा शुभ सन्देश लाये हो कि तुम्हारी बोली इतनी मीठी है?'

काग ने कहा—'हे सुन्दरी, मैके से न तुम्हारे पिता आते हैं और न भाई। मैं जीवन का आगामी वृत्तान्त बतलाने में निपुण हूँ और तुम्हारे पुत्र जन्म की भविष्य वाणी करता हूं। इसीलिए आज मेरी बोली इतनी मीठी है।'

नायिका ने कहा—'रे काग यदि मेरे पिता और भाई आयें और तुम्हारी भविष्यवाणी गलत ठहरी, तो तुम्हारी दोनों चोंचें काट लूँगी। लेकिन अगर प्रियतम आये और मैं ने पुत्र जना, तो तुम्हारी दोनों चोंचें सोने से मढ़ाऊँगी।'

'हे सखी, जब जल भर चुकी और इधर उधर मैं ने देखा तो मेरी आँखें डबडबा आईं। ब्राह्मण वेष में मेरे प्रियतम सामने खड़े थे। उन्होंने प्रेम भरे शब्दों में कहा—हे सुन्दरी, तुम्हें कौन-सा दुःख है जो तुम इस तरह बिसूर रही हो?'

नायिका ने कहा—'हे ब्राह्मण, मेरी सास मुझे मारती है। ननद गाली देती है, और गोतिनी 'बाँझिन' कह कर ताना देती है।'

ब्राह्मण ने कहा—'हे सुन्दरी, तुम चिन्ता मत करो। आज तुम्हारे प्रियतम आयेंगे और तुम्हारे सिर से 'बाँझिन' का कलंक दूर हो जायगा।'

इस भावपूर्ण गीत से मालूम होता है कि कर्कशा सास के राज्य में बहुएँ कितना कष्ट पाती हैं। ननद का व्यवहार भी बहू के साथ अच्छा नहीं होता। चुगली खाना और झूठा इलज़ाम लगा कर बहू को कलङ्कित करना तो ननद के बायें हाथ का खेल है। अगर बहू निपूती है, तो उसका दुर्भाग्य ही समझिये। 'अपुत्रस्य गतिर्नास्ति'—निपूते की गति नहीं होती इस पौराणिक सिद्धान्त ने हिन्दुओं के मस्तिष्क में इस प्रकार जड़ जमा ली है कि निपूती बहू को वे जूते के तलुए से भी बदतर समझते हैं। इस गीत की नायिका भी निपूती है। इस

[1] पुआल का बना एवं धुनाकार गुदगुदा गद्दा, जो सिर पर घड़े की पेंदी के नीचे रक्खा जाता है।

लिए उसको ननद उसे 'बाँझिन' कह कर ताना देती है। वह उत्सुकतापूर्वक अपने प्रवासी प्रियतम के लौटने का इन्तज़ार कर रही है, जिससे उसके सिर से 'बाँझिन' का कलंक दूर हो जाय।

[२]

सुनिअइन कन्हैया मोरा योगी भेल हमहुँ योगिनि होए जाएब
वने वने पिरस्त पान डाले जल मिच डोलत सेमार
राधिका जे डोलत कन्हैया बिनु जइसे डोलए पुरइन पात
सुनिअइन कन्हैया मोरा योगी भेल हमहुँ योगिनि होए जायब
जलवा के बएरी सेमार भेल मछुरी के बएरी मलाह
तिरिया के बएरी बिदेश गेल मोनिया लागले भयावन
बिना रे मइया के नइहर कइसन बिना स्वामी कइसन सिंगार
बिना रे खेवइया नइया डगमग कइसेक उतरब पार
लेहु हे सासु अपन अभरन हम धनि गोजन चली
हमरा लेखे मधुबन जरि गेल जरि गेल सोलहो सिंगार
पनमा अइसन हम धान पातर फुलवा अइसन सुकुमार
बेसत जऊबनमा लुबुधि गल सेहो तेजि गेला नन्दलाल
हाय तेनर हाथ के मुन्दरिका समुन्दर भँसएबो गिरमलहार
तजि देबो आदे सिर क मेनुरा जब लगि अइहेंन नन्दलाल
सुनिअइन कन्हैया मोरा योगी भेल हमहुँ योगिनि होए जायब

'सुनती हूँ, मेरे प्रियतम श्रीकृष्ण योगी हो गये हैं इसलिए अब मैं भी योगिन हो जाऊँगी।

जिस प्रकार वन में पीरस्त के पत्ते काँपते हैं, जल के बीच सेवार और पत्र-पत्र काँपते हैं, उसी प्रकार श्री कृष्ण के बिना राधा काँप रही है।

सुनती हूँ, मेरे प्रियतम श्रीकृष्ण योगी हो गये हैं अब मैं भी योगिन हो जाऊँगी।

जल का दुश्मन सेवार होता है, और मछली का दुश्मन मल्लाह। इसी प्रकार अगर स्त्री का प्रियतम प्रवासी हो तो सेज दुश्मन हो जाती है।

सुनती हूँ, मेरे प्रियतम श्रीकृष्ण त्यागी हो गये हैं, इसलिए अब मैं भी योगिन हो जाऊँगी।

जिस प्रकार माँ के बिना नैहर, प्रियतम के बिना शृंगार, और नाविक के बिना नौका निरर्थक हो जाती है, उसी प्रकार बिना प्रियतम की प्रियतमा अपनी जीवन नौका कैसे पार लगायगी ?

राधा कहती है—हे श्याम, आप अपना वस्त्राभरण लें। मैं अब अपने पति की खोज में निकली। हाय ! मेरे जिस मधुवन में आग लग गई, और सोलह प्रकार के शृंगार भी नीरस हो गये।'

मैं पान की तरह पतली हूँ और फूल की तरह कोमल। मेरा दीवाना यौवन पूर्णरूप से प्रस्फुटित हो गया है। फिर भी दुःख है कि मेरे प्रियतम श्रीकृष्ण मेरा परित्याग कर प्रवासी हो गये।'

हाय ! अब मैं हाथ की अँगूठी उतार दूँगी, और गले का सुनहला हार समुद्र में डुबा दूंगी। और जब तक श्रीकृष्ण नहीं आयेंगे, तब तक माथे पर ईंगुरी बिन्दी भी धारण नहीं करूँगी।

'सुनती हूँ, मेरे प्रियतम श्रीकृष्ण त्यागी हो गये हैं अतः मैं भी योगिन हो जाऊँगी।'

८]

हम धाने अकार पगार में हमरा ला दिये लायब रे
माथ ला लायब चुनरिया गहिन ला शगा चूड़ी रे
ललना धनि ला लायब ककन गोरखपुर के हो रे
फाटि जयतइ लाल चुनरिया कि फूटि जयतइ शगा चूड़ा रे
ललना जुगे जुगे रहतइ ककन गोरखपुर के हो रे
पहिरि ओढ़ि भऊजा ठाढ़ि भैलिन ननदो मिहारथि रे
ललना एक तोहे पुत्र जनिमतों कि ककन लै लितों रे
मचियहि बइसल सासु नोहि रो मिनती करू रे
ललना तारो पुतहु कंगुनवा ककन हम त बघइया लेबइ रे
पलँगा बइसल तू ननदु कि तोहि दुलरइतिन र

ललना दय दिग्र हाथक कङ्गन बेटी मोर पाहुन रे
चूनि त हम बरू देइन गुजहि मटा कै रे
ललना एक नहि देवइन कङ्गन गोरखपुर के हो रे
पलगा सुतल आहे माय पुतोहु तोर ऊलल रे
ललना ऊलल हाथ क कङ्गन हमत बध या लेवइ रे
भानस करइन पुतोहु कि तोहि दुलरइतिन रे
ललना दय दिग्र हाथ क कङ्गन बेटी मोर पाहुन रे
बाजू त हम बरू देवइन घुँघिया लगा कै रे
ललना एक नहि देवइनि कङ्गन गोरखपुर के हो रे
जुआ खेलइत तुए भाय कि तोहि सों मिनती करू रे
ललना तोर धान खुलल कङ्गन हम त बधइया लेनइ रे
खतए गेलआँ किए भेलआँ धनि दुलरइतिन रे
ललना दय दिग्र हाथ क कङ्गन बहिनि मोर पाहुन रे
चन्द्रहार बरु देवइन नगवा जड़ा कै रे
ललना एक नहि देवइनि कङ्गन गोरखपुर के हो रे
चुपे रहु चुपे रहु बहिनि कि तुअ दुलरइतिन रे
ललना कए लेब दोसर विवाह कि कङ्गन बधइया देब रे
ललना जखन सुनलि मार भाऊज सुनला ने पागल रे
ललना हाथ सँ फेंकल कङ्गन सऊतिनि जर लागल रे

किसी नायिका का प्रियतम परदेश जा रहा है।

नायिका ने कहा—'हे सजन, आप मेरे लिए कौन-कौन सी वस्तु उपहार में लायेंगे ?'

नायिका के प्रियतम ने कहा—'मैं माँ के लिए चुँदरी लाऊँगा बहन के लिए शख की चूड़ी, और हे प्रियतमे, तुम्हारे लिए गोरखपुर का कंकण उपहार में लाऊँगा।'

नायिका ने कहा—'हे सजन, लाल चुँदरी फट जायगी। शख की चूड़ी भी टूट जायगी। लेकिन गोरखपुर का बना कंकण तो युग युग रहेगा।'

नायिका कंकण पहन कर खड़ी है, और ननद को ललचा रही है।

ननद ने कहा—'हे भावज, अगर तुम्हें एक पुत्र होता तो मैं तुम्हारा यह कंकण उपहार लेती।'

समय पाकर नायिका के पुत्र हुआ। जब यह शुभ समाचार ननद ने सुना तो उसने अपने पिता से फरियाद की—'हे मेरे पलंग पर बैठे हुए पिता, आपकी पुत्र-वधू ने कंकण देने का वायदा किया था इसलिए मैं कंकण पुरस्कार में लूँगी।'

यह सुनकर उसके पिता ने नायिका से कहा—'हे पलंग पर बैठी हुई मेरी लाड़ली पुत्र-वधू, बेटी हम सब की मेहमान है तुम उसे कंकण दे दो।'

नायिका ने कहा—'हे पिता, गूँज भरा कर मैं अपनी हँसुली दूँगी, लेकिन गोरखपुर का बना यह कंकण नहीं दूँगी।'

भावज का यह टका सा जवाब सुन कर ननद ने माँ से अपील की—'हे पलंग पर सोई हुई मेरी माँ, तुम्हारी पुत्र-वधू ने कंकण देने का वायदा किया था। मैं कंकण पुरस्कार लूँगी।'

उसकी माँ ने नायिका से अनुरोध किया—'हे रसोई राँधती हुई मेरी लाड़ली पुत्र-वधू, बेटी हम सब की मेहमान है। तुम उसे कंकण दे दो।'

नायिका ने कहा—'हे माँ, घुंडी लगाकर मैं बाजूबन्द दूँगी, लेकिन गोरख-पुर का बना यह कंकण नहीं दूँगी।'

तब नायिका की हठीली ननद ने अपने भाई से फ़रियाद की—'हे जूआ खेलते हुए मेरे भाई, तुम्हारी बहू ने कंकण देने का वायदा किया था। मैं कंकण पुरस्कार लूँगी।'

यह सुन कर उसके भाई ने नायिका से कहा—'हे प्रियतमे, तुम कहाँ हो? बहन हम सब की मेहमान है। तुम उसे कंकण दे दो।'

नायिका ने कहा—'हे प्रियतम, हीरे जड़ा कर मैं चन्द्रहार दूँगी लेकिन गोरखपुर का बना यह कंकण नहीं दूँगी।'

यह सुन कर उसके भाई ने कहा—'हे बहन, तुम धीरज धरो। मैं शीघ्र दूसरा विवाह करूँगा और तुम्हें कंकण उपहार दूँगा।'

जब नायिका ने अपने प्रियतम को क्रोधित देखा तो उसने कंकण निकाल कर फेंक दिया और कहा —'हाय ! ननद हाथ धोकर मेरे पीछे पड़ गई !'

[४]

शुभ नछत्र शुभ मास त शुभ दिन बिति गल है
ललना रुकमिनि रानी गरभमए मने मने बिसुरथि हे
ललना हँसि हँसि पुछथि श्रीकृष्ण सुनहु रानी रुकमिनि हे
रानी कओने कओने फल भावए कहिक बुझावहु हे
लवंग इलइचिया मन ने भावए नवरंगिया देखिक हुलि आवए हे
राजा जेठ रे बइसाख के टिकोरवा चटनिया मनमा भावए हे
राजा दाख छोहाग मनने भावए नवरंगिया देखिक हुलि आवए हे
जेठ रे बइसाख के इमलिया चटनिया मनमा भावय हे
घर पछुअरवा मलिअवा भइया त हि मोरा हित बसु हे
भइया जाहिक आनन्दवन बाग इमलिया तोड़ि लनदिक हे

शुभ नक्षत्र शुभ महीने और शुभ दिन बीत गये । हे सखी, रानी रुक्मिणी गर्भवती है । वह मन ही मन गमगीन हो रही है ।

श्रीकृष्ण हँस हँस कर रुक्मिणी से पूछते हैं—'हे रानी, कहो तुम्हें कौन कौन-से फल भाते हैं ?'

रुक्मिणी ने कहा—'हे कृष्ण मुझे लौंग और इलायची नहीं भाती और नारंगी देख कर तो उल्टी होती है । हे राजा मुझे जेठ और बैशाख के आम के टिकोरे की चटनी बड़ी स्वादिष्ट लगती है । दरअसल, दाख और छुहारे भी मुझे नहीं भाते, और नारंगी देख कर तो उल्टी होती है । हे राजा, मुझे जेठ और बैशाख की इमली की चटनी बड़ी स्वादिष्ट लगती है ।'

यह सुन कर श्रीकृष्ण ने अपने पड़ोसी माली से कहा—'हे मेरे घर के पीछे बसे हुए माली, तुम मेरे हितू हो । तुम आनन्दवन बाग से रानी रुक्मिणी के लिए इमली ला दो ।'

इस गीत में एक गर्भवती बहू का सुन्दर मनोचित्र है । गर्भवती जब जो इच्छा करे, वह उसी समय पूरी हो जानी चाहिये । वरना गर्भस्थ सन्तान के

उपर बुरा प्रभाव पड़ने की सम्भावना रहती है। इसीलिए श्रीकृष्ण ने रानी रुक्मिणी के लिए इमली तोड़ लाने की आज्ञा दी।

[५]

कओने बने उपजए चम्पा कओने बने केसर रे
ललना कओने बने कुसुम मजीठ चुनरिया रँगाएब रे
बेले बन उपजए चम्पा भइये बन केसर रे
ललना रे पिये बन उपजए मजीठ चुनरिया रँगावहु रे
चुनरी पहिर हम पानी भरू दामरे म मुन्दर रे
ललना इ घयल चढ़ल एक रजवा मुसुकि बोलि बोलल रे
अइसन धान हमरा रहितन पलँगा सोअइतहु रे
ललना घराहि म कुइयाँ खनइतहु रेशम डोरि बँटइतहु रे
म चढ़ी नइहल ताहि सासु कि मोरि ठकुराइन हे
सासु हथवा चढ़ल एक रजवा मुसुकि बोलि बोलल हे
अइसन धान हमरा रहितन पलँगा सोइतहु रे
ललना घर हो म कुइयाँ खनइतहु रेशम डोर बँटतहु रे
कओने रंग ह पुतहु हथिया कओने रंग महाऊथ हे
पुतहु कओने बरन उहो रजवा मुसुकि बोलि बोलल हे
करिए बरन उहो हथिया त करिए महाऊथ हे
सासु साँवर बरन उहो रजवा मुसुकि बोलि बोलल हे
चुपे रहु चुपे रहु पुतहु कि ओही पर लछमिन हे
पुतहु आह हथिन हमरो बरऊआ ओही क पुरान छथे हे

'किस वन में चम्पा होता है, और किस वन में केसर? और हे सखी, किस वन में कुसुम चूता है? मैं चुँदरी रँगाऊँगी।'

उसकी सखी ने कहा—'पिता के वन में चम्पा होता है, और भाई के वन में केसर। और हे सखी, प्रियतम के वन में कुसुम चूता है। तुम चुँदरी रँगा लो ना!'

नायिका कहती है—'जब मैं चुँदरी पहन कर पनघट पर जल भरने गई तो एक तो मैं सुन्दरी थी, तिस पर मेरी चुँदरी ने मेरे लावण्य पर मुलम्मा कर दिया।

हे सखी, जब मेरे इस अपूर्व सौन्दर्य को हाथी पर चढ़े हुए एक राजा ने देखा तो उसने हँस कर कहा— हे पनिहारिन यदि मुझे तुम्हारी सी प्रिय तमा मिलती तो उसे मैं पलग पर रखता और जल भरने के लिए आँगन में ही कुँआँ खुदा कर रेशम की डोरी लगा देता।'

नायिका ने जाकर अपनी सास से शिकायत की—'हे मचिया पर बैठी हुई मेरी सास तुम मेरी श्रद्धा का पात्र हो। आज जब मे पनघट पर जल भरने गई तो हाथी पर चढ़े हुए एक राजा ने मुझसे हँस कर कहा—

'हे सुन्दरी यदि मुझे तुम जैसी प्रियतमा मिलती तो उसे पलग पर रखता और जल भरने के लिए आँगन में ही कुआँ खुदा कर रेशम की डोरी लगा देता।'

सास ने कहा—'हे पतोहू, किस रग का हाथी है, और किस रग का महावत ? और किस रग का राजा है जिसने तुमसे यह मीठी चुटकी ली है ?'

नायिका ने कहा—'हे सास काले रग का हाथी है और काले रग का महावत, और साँवले रग का राजा है, जिसने मुझसे यह मीठी चुटकी ली है।'

सास ने कहा—'हे पतोहू, चुप रहो। तुम मेरे घर की लक्ष्मी हो। हाथी पर चढ़ा हुआ राजा मेरा पुत्र है, और वही तुम्हारा सजन है।'

यह गीत उस समय का स्मरण दिलाता है, जब मिथिला में पर्दे की कुप्रथा ने जड़ जमा ली थी। जब गीत की नायिका पनघट पर पानी भरने गई, तो *उसने अपने प्रियतम को, जो विवाह संस्कार के बाद ही परदेश चला गया था,* और बहुत दिन बाद लौटा था, नहीं पहचाना। नायिका का प्रियतम भी (जिसने पर्दे के कारण अपनी नवविवाहिता की छाँह तक न देखी थी) उससे अपरिचित था। यह कुप्रथा आज भी मिथिला में पूर्ववत् क़ायम है, और यह इसी कुप्रथा का दुष्परिणाम है कि आज भी कितने शिक्षित युवक अपनी प्रियतमा के शयन कक्ष में रात को दबे पाँव जाते हैं, और फिर रात रहते ही चोर की तरह खिसक आते हैं।

[६]

नाजुक हमरो बलमुआ सेजरिया ने आयल हे
ललना बिना रे बलमुआ रु सेजिया से रतिया भयावन हे

कओन समइया क चूकल, किए अपराध कयलीं हे
विधना छोट बालम लिखि दिहलन बहुत दुख पावत हे
आधि रातिसमइया मदन घनघोर उठै हे
ललना हनि हनि मारत कटरयात निंदिया ने आवत हे
सावन भादो बाँझी रतिया झिंगुरियो ने डालत हे
रामा झींगुर करत झकार, कहु तो नहिं जागत हे
ललना रिमझिम पड़त फुहार करेजा मर काँपत हे

'मेरे नाज़ुक प्रियतम मेरी सेज पर नहीं आते। हे सखी बिना प्रियतम के सेज सूनी लगती है, और रात भयावनी प्रतीत होती है। हाय! मैंने कौन सा अपराध किया जिसका यह फल भुगत रही हूं। विधाता ने मेरी क़िस्मत में नादान प्रियतम लिख दिया। अब मैं क्या करूँ?

आधी रात है। अँधेरा बढ़ता जाता है। हे सखी, जब मदन कलेजे में तीखे तीखे बाण चुभाता है, तो नींद काफ़ूर हो जाती है। सावन भादों की अँधेरी रात है। पत्ते भी नहीं डोलते। झींगुर की झंकार रह रह कर शान्ति भंग करती है, और दुनिया स्वप्न के जादू भवन में सो गई है। हे सखी बूँदें रिमझिम बरस रही हैं। मैं एकाकिनी हूँ। हाय! मेरा कलेजा थर थर काँपता है।'

(७)

दुअरे से अएल रघुलाल कि धनि रे दोलाअल हैं
धान अएलो नइहरवा क नेओत कि हम तुहूँ जाएब हैं
नय मारो नइहर म माए भइया सहोदर हैं
प्रभु जी नए र जनर रामि बाप केकरा मल जाऊब हैं
एक कोस गाल सीता दुइ कोस अआगे तेसर कोस रे
ललना हुनका उठल सुरि वेदन लछुमन लाजि आएल हैं
जनि सीता हकन क्र अँचरे लोर पोंछुथि हे
ललना केहि मारा आगु पाछु होयत केहि रे नार छीनत रे
ललना केहि लेत सोने क हँसुलिया हृदय जुड़ायत रे
वन से निकललन वनसपती अँचरे लोर पोछुथि रे

ललना हम सीता प्राणु पाहु होयत हमे नार छीलव रे
ललना हमे लेव सोने के हँसुलिया हृदय जुरायव रे

राम ने सीता से कहा—'हे पतिप्राणे, तुम्हारे नैहर का निमंत्रण है। तुम वहाँ जाओ न!'

सीता ने कहा—'हे राम, नैहर में न मेरी माँ है, न मेरा सहोदर भाई। मेरे पिता जनक ऋषि भी नहीं हैं। मैं वहाँ किसके बल पर जाऊँ?'

सीता एक कोस गई। दो कोस गई। जब तीसरा कोस गई तो वह प्रसव पीड़ा से व्याकुल हो उठी। यह देख कर लक्ष्मण उन्हें अकेली ही छोड़ कर अयोध्या लौट गये।

उस निर्जन शून्य वन में सीता की शारीरिक प्रबल हो गई और अपने आँचल से आँसू पोंछती हुई वह झुण्ड से बिछुड़ी हुई कुररी की तरह विलाप करने लगी—'हाय! इस असमय में कौन मेरा दुःख बँटायगा? कौन मेरे नवजात शिशु का नाल काटेगा? हाय! पुत्र जन्म की बधाई में कौन मुझसे सोने की हँसुली पुरस्कार लेगा और मेरी लालसा पूरी होगी!'

सीता का यह करुण विलाप सुन कर वन-देवियाँ बाहर निकलीं और उन्होंने अपने आँचल से सीता के आँसू पोंछते हुए कहा—'हे सीता बहन, धीरज धरो। देख भाल हम करेंगी। हमीं नवजात शिशु का नाल काटेंगी और तुम्हारे पुत्र जन्म की बधाई में सोने की हँसुली लेंगी। इस प्रकार तुम्हारी लालसा पूरी होगी।'

सीता पतिप्राणा और शुद्धाचारिणी थीं। पर रावण के यहाँ अकेली रही थीं। इसी कारण अयोध्या के लोग उनके चरित्र के विषय में सन्देह कर नाना प्रकार का अपवाद फैलाया करते थे। यद्यपि सीता ने अलौकिक अग्नि परीक्षा में उत्तीर्ण होकर अपनी शुद्धाचारिता का संशय रहित परिचय दिया था तो भी उस परीक्षा की सत्यता के विषय में प्रजा को पूरा पूरा विश्वास नहीं था। राम ने इसी अपवाद को दूर करने के लिए तपोवन दर्शन के मिस सीता का परित्याग किया था। ग्रामीण स्त्री समाज ने राम के इस निठुर व्यवहार की कड़े शब्दों में आलोचना की है और सरल हृदया सीता के साथ सहानुभूति प्रकट की है।

पतोहु जे चलल नहाए कि सासु निरेखथि हे
पतोहु कआने रसिकवा से लाभयल कि गहल गरवसए हे
पतोहु मोरा बेटा पढ़ए बनारस राखल धरोहर हे
पतोहु कआने रसिकवा संग रहल त भयलि गरवसए हे
सासु जो तोहर बेटा पढ़ए बनारस राखल धरोहर हे
सासु जी भँअरा न छुने बेटा अएलन गरभ दइवा दय देल हे
दुअरा बइसल तोहि देवरा कि मोरो सिर साहेब हे
देवरा रेशम क डोर बाँट दिता भँअरा के बभदतओं हे
आधि रात बितल पहर राति, भिनुसर भँअरा जे आयल
—रेशम डोर बान्हल हे
मचिया बइसल तोहि सासु कि मोरा सिर साहेब हे
सासु चिन्हि लिअऊ अपन हारिलवा श्रोछरगवा छुड़ावहु हे

बहू स्नान करने जा रही है और सास आँखें फाड़ फाड़ कर देख रही है।

सास ने कहा—'हे बहू, तुमने किस छैला से प्रेम किया कि तुम्हारे पैर भारी हो गये। मेरा बेटा तो काशी में अध्ययन करता है और कड़े अनुशासन में आबद्ध है। हाय! तुमने किस रसिक से प्रेम किया कि तुम्हारे पैर भारी हो गये।'

बहू ने कहा—'हे सास, यह ठीक है कि तुम्हारा बेटा काशी में अध्ययन करता है और कड़े अनुशासन का पाबन्द है, लेकिन वह क्षण भर के ही लिए यहाँ आया और मेरे पैर भारी हो गये।

फिर बहू ने अपने देवर से कहा—हे दरवाज़े पर बैठे हुए देवर, तुम मेरे स्नेह पात्र हो। एक रेशम की रस्सी बाँट दो। आज मैं अपने बनजारे को क़ैद करूँगी।'

जब आधी रात बीत गई और एक पहर रात शेष रही तो उस नायिका का प्रियतम रेशम की रस्सी में क़ैद हो गया।

बहू ने अपनी सास से कहा—'हे मचिया पर बैठी हुई मेरी सास, तुम मेरी श्रद्धा का पात्र हो। अपने सद्‌गुणी पुत्र को यह करतूत तो देखो और मेरे सिर का कलंक दूर करो।'

जाहि वन चनना गहागहि निरवा अमोघवस रे
ललना ताहि वन पइसलन कओन भइया पगिया सम्हारइत रे
माय लागि लयलन चुनरिया बहिनि लागि मानियल रे
ललना धनि लागि लयलन कगनमा बालकवा लागि छुरी दुइ र
माय जे पहिनलन चुनरिया, बहिनि लर मानियन रे
ललना धनि जे पहिरलन कगनमा, बालकवा त छुरी लेलन र
कगना पहिरि भऊजी ठाढ भेलन अगना से निरखि गेलन रे
ललना पडि गेल ननद मुख डीठ, कगनमा हम लेबइया लेबइ र
मोर पहुअरवा मलहोरिया भइया, तोहि मोरा हित रमु रे
ललना आनि दे धतुरवा क जड ननद जी क ओखध हे
बड़ा भरि पिअलन बरकि ननदा, बड़ा भरि छोटकि ननदा रे
ललना धाय धाए पिअलन मझलि ननदो तीनो जन नउरयलन हे
इ मति जानु भऊजो नऊरयलनि कगनमा मांग बांचल ह
भउजो दलवा करजवा पर मूग, कगनमा हम नधइया लेवा हे

जिस निविड वन म चन्दन को घनी पत्तियाँ है, और जीरे के घने और लम्बे गाछ हैं, उसी वन से अमुक भाई अपने सिर की पगड़ी सम्हालते हुए आये।

वह माँ के लिए चुँदरी, बहन के लिए मोतियों का हार, स्त्री के लिए कंकण और अपने नवजात शिशु के लिए चाकू उपहार में लाय।

मा ने चुँदरी ली, बहन ने मोतियों का हार लिया, स्त्री ने कंकण पहना और बच्चे ने चाकू उपहार मे लिया।

जब कंकण पहन कर नायिका खड़ी हुई तो उसके सौन्दर्य मे निखार आ गया। यह देख कर उसकी ननद ने कहा—'हे भाभी, मैं कंकण पुरस्कार में लूँगी।'

ननद का यह कथन सुन कर नायिका आग बगूला हो गई। उसने अपने पड़ोसी माली से कहा—'हे मेरे पिछवाड़े बसे हुए माली, तुम मेरे हितचिन्तक हो। मेरी ननद के लिए धतूरे की जड़ ला दो।'

कटोरा भर धतूरा पीस कर बड़ी ननद ने, कटोरा-भर छोटी ननद ने, और बचा सुचा मझली ननद ने दिया। और तीनों नशे में बावली हो गईं।

तब नशे में गर्क उन ननदों ने कहा—'हे भावज, यह मत जानो कि हम नशे में बावली हो गई हैं। हम तुम्हारी छाती पर मूँग दलेंगी और तुमसे बलात् कंकण पुरस्कार लेंगी।'

ननद और भावज में थोड़े भैंसे का-सा वैर है। दोनों में वे बराबर एक दूसरे की दुश्मन रही हैं, और रहेंगी। जैसे कुम्हार का आँवाँ सुलगता है, वैसे ही ननद और भावज के हृदय में ईर्ष्या की चिनगारी दहकती रहती है। यद्यपि 'गगनं गगनाकारम् सागरः सागरोपम' के समान उनकी फूट की उपमा किसी से नहीं दी जा सकती। इस गीत में ननद के लालच और भावज के कमीनेपन की हद हो गई है। ननद-भौजाई की लड़ाई के मूल कारण गहने हुआ करते हैं। ननद ने भावज से कंकण पुरस्कार माँगा। भावज ने उसको धतूरे की जड़ पीस कर पिला दी। यदि हमारी कुलवधुएँ कृत्रिम गहने को ठुकरा कर अपने परिवारवालों को ही अपना गहना समझ लें तो फिर क्या पूछना?

[१०]

हँसि कय बोलतन अम्बोरा सुहवे अपना बलमुजी से हे
पिया हे आवे ने आएन बहाँ के सेज त आवे ने दरद हमरे हे
जनमि जे रामचन्द्र बेटा देतन बेटिया जनम लेल रे
ललना मैं हो सुनि सासु रिसअइनि त अम्बोरो मारे घायलि रे
हमें त जनलि पलँग सुतबा, चेरिया सब ठाढ़ि रहता—
नउरिया सब पँखा हँकतो रे
ललना टूटले नरैया सासु दिहलन, अम्बोरा मारे धयलन हे
जनलि जे दगरिन नार छिलिहेन, नउआ नचएत लोटवा
बधइया देवीं रे
ललना अपने सहरिया अपने नौपत, बधइया अपने राजव हे
बाबा जी से लेबो म हथिया त भइया जी से घोड़वेओ रे
ललना भऊजी से लेबो रतनमाल, त अपने सँहरी नौपत रे

किसी नायिका ने हँस कर अपने प्रियतम से कहा—'हे प्रियतम, मैं अब तुम्हारी सेज पर कभी नहीं आऊँगी जिससे कि मुझे फिर प्रसव वेदना हो। मैं जानती थी कि मुझे भगवान बेटा देंगे, लेकिन हाय! मैंने बड़ी जनी।'

यह सुन कर नायिका की सास क्रोधित हुई और उसे मारने दौड़ी।

'हाय! मैं जानती थी कि चैन से सुख की सेज पर सोऊँगी। लौंडियाँ हुक्म बजायेंगी, और अदब से पंखा झलेंगी। लेकिन हे सखी, मेरी सास ने मुझे ताल के टूटे हुए छप्पर तले सोने को दिया और मुझे मारने दौड़ी।

'हे सखी, मैं जानती थी कि दगरिन मेरे बच्चे का नाल काटेगी। नर्त्तकियाँ दल बना कर नृत्य करेंगी, और मैं उन्हें लोटा पुरस्कार दूँगी। लेकिन हाय! आशा पर पानी फिर गया।

'हे सखी, अब मैं स्वयं प्रसव घर लीपूँगी, और अपना पुरस्कार आप ही लूँगी। पिता से हाथी, भाई से घोड़ा और हे सखी, भाभी से नगीनें जड़ा हुआ हार पुरस्कार लूँगी।'

[१९]

आठहिं मास जब बीतल, नवे अब चढ़ल रे
ललना रे बहुनी के मुँह पियरायल, देह दुबरायल रे
उतरि सावन चढ़ु भादव, चहुँ दिशि कादव रे
ललना रे उमड़ि घुमड़ि मेघ गरिजय दामिनि सग रग बरि रे
रिमिकि झिमिकि मेघ झहरय घाट बाट पिच्छिर रे
ललना रे झिहिरि-झिहिरि बह पछया, उड़य मोरा आँचर रे
पहिलि पहर राति बीतल, अओर राति बीतल रे
आरे जागल नगरवा के लोग, पहरू सब जागल रे
दोसर पहर राति बीतल, अओर राति बीतल रे
ललना रे सुतल नगरवा के लोग पहरु सब सूतल रे
तेसर पहर राति बीतल, अओर राति बीतल रे
ललना रे बहुनी जँ दरदे बेआकुलि, दगरिन चाहिय रे
दगरिन बसय नदिए केर पार, एतए कोना अइतिऊ रे

ललना रे एहि रे अवसर पिया पइना पलग सँ उठाय दितों रे
ललना रे अबे न करब अइसन काम, दरद बड जोर भेल रे
ललना रे भिनुसर बबुआ जनम लेल, धरती अनन्द भेल रे
ललना रे एहि रे अवसर पिया पइता, अँसियो म रारि लितों रे
ललना फेनु रे करब अइसन काम, पुतर फल पाएब रे

सास अपनी नवोढ़ा गर्भवती पतोहू के प्रति उसकी एक सखी की कहती है—

'हे सखी आठवाँ महीना बीत गया और नववाँ महीना चढ़ा। मेरी दुलहिन का मुँह पीला हो रहा है, और शरीर भी क्षीण हो चला।

सावन बीत गया, और भादों भी आ गया। चारों ओर कीचड़-कीचड़ हो गया। हे सखी, बादल उमड़ घुमड़ कर आकाश में गरज रहे हैं, और दामिनी के साथ क्रीड़ा करते हैं।

देखो, रिमझिम करती हुई बूँदें गिरने लगीं। राह घाट विच्छिन्न हो गये। और पछुआँ हवा के मन्द मन्द झोंकों से मेरा आँचल इधर उधर उड़ने लगा।

प्रथम प्रहर रात्रि बीत गई और धीरे धीरे रात और भी ढलने लगी। लेकिन अभी गाँव के लोग जगे हैं और पहरू भी नहीं सोये।

द्वितीय प्रहर रात्रि भी ख़त्म हो गई, और रफ़्ता रफ़्ता और भी ढलने लगी। हे सखी, गाँव के सब लोग सो गये, और पहरू भी सो गये।

तृतीय प्रहर रात्रि भी गत हो गई, और धीरे-धीरे और भी बीत चली। हे सखी, मेरी दुलहिन प्रसव-वेदना से आकुल हो उठी है। उसकी देख रेख के लिए एक चतुर चमारिन की ज़रूरत है।'

उसकी सखी ने कहा—'चमारिन तो दूर—नदी के उस पार रहती है। अभी यहाँ कैसे आयेगी ?'

चमारिन के नहीं आ सकने की बात सुन कर नायिका जो प्रसव-वेदना से आकुल है, झुँझला उठती है, और अपनी उस सखी से कहती है—

'हे सखी, यदि मैं इस समय अपने प्रियतम को पाती तो उन्हें पलंग

से उड़ा देती। अब मैं फिर कभी ऐसा काम नहीं करूँगी, जिससे मुझे यह प्रसव वेदना सहनी पड़े।'

सुबह होती है। नायिका के पुत्र पैदा होता है। पृथिवी खिल उठती है। नायिका कहती है—

'यदि मैं इस वक्त अपने प्रियतम का पाऊँ तो अपनी आँखों में रख लूँ। हे सखी, मैं फिर वैसा ही काम करूँगी, जिसमें मुझे पुत्र रूपी फल की प्राप्ति हो।'

[१२]

विरह अगम जल धार, बहत निशि वासर हे
ललना यहा दुख काह सुनावौं, केहु त नहिं आपन हे
जोबन जार जनावय, भवन नहिं भावए हे
ललना बलमा सवतिया क डारहि सुधि बिसरायल हे
जाकर कन्त बिछोह, आहि जे दुख जानथि हे
ललना उठय करेजवा मे पीर, सहल नहिं जाइय हे
रगमहलिया म विसुरौं, दुसह दुख बाढत हे
ललना बरसत नीर नयनमा, सावन जिमि झरि लावय हे
कोन समइया क चूक, बालम सुधि छोड़ल हे
ललना गोदिया बालक बिनु सून कोना विधि धीर धरू हे
कोयलि त बोलल अमरिया, डसय जिमि विषधर हे
ललना लहकि लपट धुँधुकार, जलय तन छिन छिन हे
ललना उटत करेजवा सँ आह, गगन जिनि धधकए हे
भेल निठुर विधि बाम, केहु ने जगहित देखु हे
ललना जे मोर कंत मिलावए चरनगुन गायब हे

विरह की अगम जलधारा दिन रात प्रवाहित हो रही है। हे सखी, मैं यह दुख किससे कहूँ? मेरा कोई हितू नहीं है।

मेरी जवानी का उफान उबल रहा है, और मुझे यह घर आँगन नहीं भाता।

हे सखी, निर्मोही प्रियतम ने सौतिन के प्रेम पाश में उलझ कर मेरी

सुधि बिसरा दी।

जो वियोगिन अपने प्रियतम की जुदाई में तड़प चुकी है, वही मेरे इस दुख का मूल्य आँकेगी।

मेरे कलेजे में टीस उठ रही है, जो मैं गवारा नहीं कर सकती।

हाय! मैं अपने रंगमहल में बिसूर रही हूँ, और मेरी वियोग-वेदना प्रति क्षण बढ़ रही है। हे सखी! मेरी आँखों से अविरल अश्रुपात हो रहे हैं मानो सावन के बादल बरस रहे हों।

मैंने कौन ऐसा अपराध किया, जिस कारण मेरे प्रियतम ने मुझे भुला दिया। हे सखी, मेरी गोद एक पुत्र के बिना सूनी है। हाय! मैं किस तरह धैर्य धरूँ?

अमराई में कोयल कूक रही है। उसकी बोली ऐसी लगती है जैसे विषधर, डँस रहा हो। विरह की ज्वाला धू-धू कर धधक रही है, और मेरा शरीर प्रतिक्षण जल रहा है। कलेजे से विरह की आग निकल रही है। हाय! कहीं यह आसमान न जल जाय। इस संसार में मेरा कोई हितू नहीं है। हे सखी, जो कोई मेरे प्रियतम को ला देगा, मैं उसके चरण की पूजा करूँगी।

[१३]

कागा भाग लिख भाखहु हे, पहुँ आओत मोरा
खीर-खाँड देब भोजन हे, भरि कनक कटोरा
सोनहिं चञ्चु समारब हे, देब चरन मढ़ाई
प्राननाथ उर आँगन हे, जँओ आओत आई
फरकत बाम नयन मोर हे, दग दाहिन सूनी
नाहि सँ ताहि निहारब हे, प्रतिपालब दूनी
कृष्ण सरिस मनमोहन हे, कोमल अँग मोरा
आज 'रमापति' पूरल हे, सबहीं अभिलाषा

रे कागा, तू नित्य यही बोल कि मेरे प्रियतम आयेंगे। यदि आज प्राणनाथ मेरे उर आँगन में आये तो कनक-कटोरे में खीर और मीठे पकवान भर कर तुम्हें खाने को दूँगी।

सोने में तुम्हारी चोंच मँढाऊँगी, और तुम्हारे चरण मढ़ाऊँगी।

मेरी बाईं आँख फड़क रही है, और दाईं आँख रोती है। उन्हीं आँखों से तुम्हें नित्य निहारूँगी, और पहले से भी दूने प्रेम से तुम्हारा प्रतिपालन करूँगी।

रे काग, तू भगवान श्रीकृष्ण की तरह मन को हरनेवाले हो। तुम्हारी बोली अत्यन्त मीठी है।

कवि 'रमापति' (विरहिणी के शब्दों में) कह रहे हैं कि आज मेरी सारी अभिलाषाएँ पूरी हो गईं।

[१४]

चननहिं केर चउकिया कि राम जी नहायिन हे
ललना र मातिआहि झालर लागल सीतारानी बिहँसथि हे
सखि हे कअोन बरत अहाँ कएलि कि रामे बर पाओल हे
गगाहि पइसि नहइलि सुरुज गोर लागल हे
सखि हे तुलसी क दीप जरारल राम बर पाओल हे

चन्दन की चौकी है जिस पर बैठ कर राम स्नान करते हैं। हे सखी, उसमें मोती की झालर लगी है जिसे देख देख कर सीता रानी प्रफुल्लित हो रही हैं।

हे सीते तुमने कौन ऐसा व्रत किया कि तुम्हें राम-जैसे प्रियतम मिले।'

'हे सखी, मैंने गंगा में पैठ कर स्नान किया। सूर्य्य की पूजा की, और तुलसी के चबूतरे पर नियम-पूर्वक दीप जलाये जिसके फलस्वरूप मुझे राम-जैसे प्रियतम मिले।'

[१५]

छ'टि माटि गढ़िया कदम जुरि र
ललना ताहि तर ठाट गोपाल खेलत फूल गेरूल हे
उड़ल गरूआ अकाश लागु अआरो पताल लागु हे
ललना श्रीकृष्ण जी गिरल हयमान, न गेरूला जलं निच हे
नाग सुतल नागिन जगवल बेनिया डुलावत हे
केकर आँख केर पुतरि थकर तोहि बालक हे
ललना कान कान अयलौं पताल कहाँ रे कय जायर हे

देवकी क ओख के पुतरिया नन्द जी कें बालक हे
ललना गेरुआ कारन अयन पताल गोकुल कए जायब हे
भागिए बालक तोहिं जाहुआ दया मोर लागल हे
बालक नगवा छोड्त फुफुकार भसम होय जायब हे
नगवा कें नथवों कुसुम डोरि गेरुआ लदाएब हे
नागिन पिठिय होएब असवार गोकुल कए जायब हे
कर जोरि नागिनि मिनति करू अओरो मिनति करू हे
बालक सेनुर राखु ने हमार गोकुल जायब हे

हे सखी, कदम का छोटा गाछ है। उसके नीचे श्रीकृष्ण खड़े हैं, और फूल के गेंद से खेल रहे हैं।

खेलते-खेलते गेंद आसमान में उड़ा, और पताल में गिरा। गेंद लाने के लिए श्रीकृष्ण ने यमुना में डुबकी मारी जहाँ नाग सोया था, और नागिन पंखा झल रही थी।

नागिन ने पूछा—'हे बालक तुम किसकी आँखों की पुतली हो? किसके पुत्र हो? यहाँ क्यों आये हो? और कहाँ जाओगे?'

कृष्ण ने कहा—'हे नागिन, मैं देवकी की आँखों की पुतली हूँ। नन्द का पुत्र हूँ। यहाँ गेंद लेने आया हूँ, और गोकुल जाऊँगा।'

नागिन ने कहा—'हे बालक, तुम लौट जाओ। मुझे तुम पर दया आती है। जब नाग उठ कर फूकार छोड़ेगा तब तुम जल कर भस्म हो जाओगे।'

कृष्ण ने उत्तर दिया—'हे नागिन, मैं नाग को फूल की डोरी से नाथूँगा। उस पर गेंद लादूँगा, और उसकी पीठ पर सवार होकर गोकुल जाऊँगा।'

नागिन ने कहा—'हे कृष्ण, मैं तुमसे प्रार्थना करती हूँ। तुम मेरी माँग के सिन्दूर की लाज रख लो, और नाग को गोकुल मत ले जाओ।'

[१६]

नदी जमुना जी क तीर त देवकि रूदन करू हे
ललना मरवों जहर विस खाय त जनम अकारथ हे
तखन जे बोलल जमुना जी करेजल मारल हे

ललना हरसि करुग्र अ्रसनान हरसि घर जाहुग्र हे
पहिलि सपन देवकि देखल पहिलि पहर राति हे
ललना कोमल बाँस केर कोंपर अ्रगन विच जनमल हे
दोसर सपन देवकि देखल दोसर पहर राति हे
ललना सुन्दर कमल केर फूल विधाता मोरा देलथि हे
तेसर सपन देवकि देखल तेसर पहर राति हे
ललना सुन्दर दह पनिया जनमल जुरन बिनु कोन देल हे
आधि राति तिसल पहर राति अ्रधोर भिनुसर राति हे
ललना देवकि कें मेल नन्दलाल अ्रमरित फल पाग्रल हे

यमुना के किनारे देवकी विलाप कर रही है—

'हे सखी, मैं गरल पान कर अपने प्राण का अन्त कर दूँगी। हाय ! मैंने व्यर्थ जीवन धारण किया।'

यह सुन कर यमुना ने कहा—

'हे देवकी, तुम प्रसन्न चित्त से मेरी जलधारा में स्नान कर लो, और खुशी खुशी घर जाओ।'

जब प्रथम प्रहर रात बीत गई तब देवकी ने एक स्वप्न देखा—

'आँगन में बाँस की एक हरी कोंपल उगी है।'

जब दूसरा प्रहर रात गत हुई तब देवकी ने एक दूसरा स्वप्न देखा—

'ईश्वर ने मुझे एक सुन्दर कमल का फूल दिया है।'

जब तीसरी प्रहर रात बीत गई तब देवकी ने एक तीसरा स्वप्न देखा—

'एक सुन्दर सरोवर है जिसका स्वच्छ जल बिना जोड़न के ही दही की तरह जम गया है।'

आधी रात बीत गई। एक पहर रात बची। जब सुबह हुई तब देवकी ने एक पुत्र जना।

[१७]

गोखुला में नन्द के लाल मधुर बंशी बाजय हे
ललना नाचि-नाचि बंसिया बजावय गोपि कें रिझावय हे

जमुना के शीतल बेअरिया कदम जुरि छँहियान हे
ललना वृन्दावन में मयूरवा जे नाचए कोयलि कुहुकय हे
ललना कृष्ण के सीस पै मुकुटवा अति छवि सोहय हे
ललना हरे हरे बाँस के बँसुलिया अधर बिच सोहय हे
गले बिच मोतियन मलवा नयन बिच काजर हे
ललना राधे जुगुल सोहय जोरी त मदन गोपालय हे
ललना हुनक चरन पद गाविय जनम फल पाविय हे

गोकुल में नन्द के पुत्र कृष्ण मधुर स्वर में वंशी बजा रहे हैं।
हे सखी कृष्ण नाच नाच कर वंशी बजाते हैं, और गोपियों को रिझाते हैं।
अहा! यमुना की शीतल हवा और कदम की ठंडी छाँह कितनी सुखद है!
हे सखी, वृन्दावन में मयूर नृत्य करता है और कोयल 'कुहु कुहु' कूकती है।
कृष्ण के सिर पर मुकुट सुशोभित है, जो अति आकर्षक प्रतीत होता है।
उनके दोनों होंठों के बीच हरे बाँस की बाँसुरी शोभा देती है। उनके गले में मोतियों का हार है, और आँखों में काजल।

हे सखी राधा और मदनमोहन श्रीकृष्ण की यह युगल जोड़ी कैसी खिल रही है। हम क्यों न उनके चरण-कमल की वन्दना करें और अपने अभीष्ट को पावें।

[१८]

नन्द घर डंका बाजए सुख उपजावय रे ललना
जनमल श्री यदुनाथ कि नयन सुहावल रे
आयल उबटने, तेल, कजरौटिया, काजर रे ललना
होरिला लहुरवा के दूध के हुलसि पिआएव रे
लहरत लाल पटोर पहिरि घर जायब रे ललना
नृत्य करय नट नागरि सब गुन आगरि रे
बाजूबन्द बेसरि पैजनी रूनुझुनु बाजय रे ललना
अवम पुलकि लगाय कि पलना झुलाएव रे
लेव निछावर नन्द जी सों हैत गज रथ मणि रे ललना
केओ सुपारी पान कि सुवरनक बेसरि रे

हे सखी, नंद के घर डंका बज रहा है जिसे सुनकर हृदय गद्गद हो रहा है। आज श्रीकृष्ण का जन्म हुआ है। हमारे नयन जुड़ा गये।

हे सखी, उबटन, तेल, कंघी, काजल आदि सभी उपयुक्त सामान शिशु श्रीकृष्ण का शृङ्गार करने के लिए लाये गये।

नवजात शिशु को हुलस कर दूध पिलाऊँगी और लहराते हुए लाल पटोर पहन कर घर जाऊँगी।

शिशु जन्म के उत्सव में सर्वगुण सम्पन्न सुन्दरी नर्त्तकियाँ नन्द के घर नृत्य करने लगीं। उनकी बाँहों में बाजूबन्द और नाक में बेसर है तथा उनके पैर की पैंजनी रुनझुन बज रही है।

हे सखी, प्रसन्न होकर शिशु को छाती से लगाऊँगी, और उसे पालने पर झुलाऊँगी। नन्द से हाथी, रत्न, और मणि निछावर लूँगी। हमारी हमजो- लियों में किसी को तो पान और सुपारी मिलेगी और किसी को सोने की नथ।

[१६]

उतरि साओन चढ़ु भादव चहुँ दिशि बादर रे ललना
मेघवा झरी लगावे कि दामिनि दमसय रे
जब जनमल यदुनन्दन कंस निकन्दन रे ललना
छुटि गेल बज्र कपाट पहरू सब सूतल रे
शंख चक्र गदा पद्म देवकी देखल रे ललना
आजु सुदिन दिन भेल कृष्ण अवतारल र
कोर कै लेल वसुदेव कि यमुना उछलि बहु रे ललना
चरण देल छुआय नन्द घर पहुँचल रे
नन्द भवन आनन्द भेल यसुमति जागल रे ललना
'सूर श्याम' बलि जाए कि मङ्गल गाओल रे

श्रावण का महीना बीत गया। भादों आ पहुँचा। चारों तरफ कीचड़ ही कीचड़ दीखने लगा।

हे सखी, मेघ मूसलाधार बरस रहा है। बिजली कौंध रही है।

जब कंस निकन्दन श्रीकृष्ण का जन्म हुआ तब बन्दीखाने का बज्र कपाट

स्वयं खुल गया, और पहरू खर्राटे लेने लगे।

हे सखी, देवकी ने शंख, चक्र, गदा और पद्मधारी श्रीकृष्ण को जी भर कर देखा। सचमुच आज का दिन कितना मंगलमय है कि श्रीकृष्ण पृथ्वी पर अवतरित हुए।

वसुदेव श्रीकृष्ण को गोद में लेकर नन्द के घर गये। रास्ते में यमुना तरंगित हो उन्हें डुबोने लगी। हे सखी, यह देख कर श्रीकृष्ण ने यमुना को अपने कोमल चरणों का स्पर्श करा दिया, और वसुदेव नन्द के घर निर्विघ्न पहुँच गये।

नन्द के घर आनन्द मनाया जाने लगा। यशोदा की नींद टूट गई। कवि 'सूर स्याम' कहता है – हे सखी मैं श्रीकृष्ण की बलैया लूँ कि उनके जन्मोत्सव पर यह मंगल गाया गया।'

ऊपर का गीत मुज़फ़्फ़रपुर के पूर्वी भाग के गाँवों में प्रचलित है। दरभंगा जिला के गाँवों में यह इस रूप में प्रचलित है—

उतरि मास आन चढु भादव चहुँ दिशि कादव रे ललना
मघवा झरि लगावै कि दामिनि दमकय रे
रामकि झमकि बुन्द बरिसय दादुर हर्षित रे ललना
देवकी वदन बेयाकुलि दगरिनि आनिय रे
एतय कहाँ दगरिनि पाविय विधि सों मनाविय रे ललना
यमुना निकट एक गाम जतय बसु दगरिनि रे
नव जनमल यदुनन्दन बन्धन छूटल रे ललना
खुजि गेल वज्र केबाड़ पहरू सब सूतल रे
मोर मुकुट श्रवनि कुण्डल ओढ़न पिताम्बर रे ललना
देवकी गर्लाह ढगाय की देव देलन्हि रे
ननु नाहिं देखकि टराय जनु पछतावह रे ललना
हदय र बालिक दुखमोचन जगत निरञ्जन रे
'रामनाथ' कवि गाओल गावि सुनाओल रे ललना
गोकुल भेल उछाह कृष्ण जी जनमल रे

कहीं कहीं यह गीत इस प्रकार भी गाया जाता है—

उतरि साओन चढ़ु भादव चहुँ दिशि कादव रे ललना
दामिनि दमकि सुनावय दादुर हर्षित रे
पहिलि पहर जब बीतल पहरू सूतल रे ललना
सूतल नगरक लोक क्यौ नहिं जागल रे
दोसर पहर केर बितितहिं पहरू जागल रे ललना
देवकी वेदन व्याकुलि कि दगरिनि आनिय रे
एतय रत दगरिनि पाविय विधि सौं मनाविय रे ललना
पुरविल जनम तप सुकलहुँ तैं दुख पाओल रे
जब जनमल यदुनन्दन बंधन छूटल रे ललना
जनमल त्रिभुवननाथ अनाथक पालक रे
बालक हाथ हम देखल शंख चक्र गदा पंकज रे ललना
गर वैजन्ती माल कान शोभे कुण्डल रे
अगन कृष्ण मेल गोविन्द वसुदेव लय सिधारल रे ललना
यमुना तीर अथाह थाह नहिं पाविय रे
तखन कृष्ण मेल कौतुक यमुना उराइलि रे ललना
छमित्र मर अगाध पार निकें जाइ रे
'मोदनाथ'[१] कवि गाओल गावि सुनाओल रे ललना
धनि यसुमति तोर भाग प्रभु पुत पाओल रे

[२०]

चार चऊगठिया कै बलमु पोखरिया खिनै चनन केर गाछ
ललना दतवन करै राजा रामचन्द्र नऊआ मस डिठ पर रे
कहमा रे छै तहुँ नऊआ न देहि पाँती लिखल रे
ललना रे खिनकाहि मेल नन्दलाल त खिनका अनन्द मेल रे
मन कु न छिकि हम हनमा मितए पाँति लिखल रे

१ पं० मदनाथ झा उनान ग्रामवासी थ। आप स सार वर्ष पूर्व बड श्रोत्रिय कुल में उत्पन्न हुए थे। आप संस्कृत के उच्च कोटि के विद्वान थे।

ललना सीता के भेल नन्दलाल कि मुनि घर अनन्द भेल रे
कोशिला रानी देलथिन मुनरिया सुमितरा गिरमलहारनु रे
ललना लछुमन देल सिर कें पगिया कि नगर लोग जय बोलु हे
घर पछुअरवा सनरवा भइया तोहि मोरा हित बनु रे
ललना रे डाला भर सोना ताहि देबश्रो कान कुंडल गढ़ि देहु रे
सूरदास सोहर गायल गाबि सुनाश्रोल रे
ललना एको मनोरथ नहिं पूरल राम घर नीर भेल रे

हे बालम चार कोन का चौकोन पोखरा है। उसके बीच में चन्दन का गाछ है। उसके किनारे बैठ कर राजा राम दातुन करते हैं। सहसा उनकी दृष्टि नाई पर पड़ती है। राम पूछते हैं

'हे नाई, तुम किस देश के रहनेवाले हो? यह चिट्ठी किसने दी है? किस सौभाग्यवती ने पुत्र जना है? और किसके घर उत्सव हो रहा है?'

नाई ने कहा—'हे राम, मैं वन का वाशिन्दा हूँ। सीता ने यह चिट्ठी दी है। सौभाग्यवती सीता ने पुत्र जना है, और मुनि वाल्मीकि के आश्रम में उत्सव हो रहा है।

जब यह खबर कौशल्या को मिली तो उसने नाई को पुरस्कार में अँगूठी दी। सुमित्रा ने मोतियों के हार दिये। लक्ष्मण ने सिर की पगड़ी दी, और गाँव के लोगों ने 'जय ! जय' के नारे बुलन्द किये।

कौशल्या ने कहा—'हे घर के पिछवाड़े बसे हुए सोनार, तुम मेरे हितू हो। मैं तुम्हें डाला भर सोना पुरस्कार दूँगी। तुम सीता के नवजात शिशु के कान के कुंडल गढ़ दो।

'सूरदास' ने यह सोहर गाया है, और गाकर लोगों को सुनाया है। हे सखी, सीता के बिना अयोध्यावासियों की एक भी साध पूरी न हुई, और राम का घर उजाड़ हो गया।

[२१]

घरवा जे निपला गोबरसए अगोरा धरि ठाढ़ि भेलश्रो रे
ललना हेरथि नइहरवा कें नाउ त भइयो नहिं श्राएल रे

ललना सासु मोर गलथिन दाल दरर ननद मोर पानी भरय रे
ललना अवगर प्रभु छेकलन दुअरिया रे हमे तोहि अवगर रे
खन—खन दाढ़ि धरथि खन—खन पइयाँ परय खन—खन रे
ललना चनु धनि लालि रे पलंगवा कि हमे तोहिं विहूँसब गे
खेलिते-खुलइते माहि के नाक लागु आओरो से रूप लागु गे
ललना रे दिने दिने देह गन्आएल मुँह पियरायल रे
एक मास गिनल दोसर मास अओरो तेसर मास रे
ललना रे चऊठे पचम मास बीतल देह गन्आयल रे
छओं महीना राम बिति गेल छओ अग भारि भेल रे
ललना धनमा के भतवा ने सुहाय त दाल देखि हुलि आवय रे
सात महीना राम गिति गेल सातो अग भार भेल रे
ललना रे निठुरि बढ़नियां कइसे छूअब विपति कइसे काटब रे
ललना आठों महिनमा मोहि विति गल आठों अग भार भेल र
ललना रे डेंड़वा क चिरवा खरवि गेल कइसे कय बान्हुअ रे
नवा महिनमा हमरो क बिति गेल नवो अग भारि भेल रे
ललना डेंड़वा सँ उठल वेदनमा त केहि के जगाएव रे
सासु मोरा सुतल अधोरवा ननद गज भीतर रे
ललना हुनि प्रभु सुतल मंदिरवा त कइसे क जगाउअ गे
चूरा फेंकि मारलौं पएरिया अओरो गहनमा फेंकि रे
ललना एतना अभरनमा फेंकि मारलौं दहिजरवो नहिं उठल रे
एमकि वेदनमा हम काटव गोसइया गोर लागव रे
ललना फेर ने करब अइसन काम पिया सेजि जायव रे

कोई नायिका गोबर से घर लीप कर ओसारे पर खड़ी है, और अपनी सखी से कहती है—

'हे सखी, मैं नैहर जाने को आकुल प्रतीक्षा में हूं। न जाने क्यों मेरा भाई अब तक मुझे विदा कराने नहीं आया।

'हे सखी, मेरी सास दाल दलने गई, और ननद जल भरने। मुझे अकेली

देखकर प्रियतम ने मेरी राह रोक ली। वह कभी मेरी ठुड्डी पकड़ने लगे, कभी मेरे पैर और कभी दंडवत् लेट कर अनुनय विनय करने लगे—

'हे प्रियतमे, चलो हम लाल पलंग पर क्रीड़ा करें।'

इस प्रकार उनके साथ हँसी-खेल में ही मेरा भोली मन उलझ गया। धीरे-धीरे मेरे पैर भारी हो चले। मुँह पीला हो गया।

एक महीना बीता। दूसरा महीना बीता। तीसरा महीना बीत गया। हे सखी, जब चौथे और पाँचवें महीने भी बीत गये तो मेरा शरीर शिथिल होने लगा।

धीरे धीरे छठा महीना भी बीत गया। मेरे सब अंग भारी हो गये। खाते खाते तबीयत ऊब गई और दाल देखकर जी मिचलाने लगा।

सातवाँ महीना बीता। मेरे सातों अंग भारी हो गये। हे सखी, मैं झुककर आँगन कैसे बुहारूँ, और कहो ये पहाड़-से दिन-रात कैसे काटूँ?

आठवाँ महीना बीता। मेरे आठों अंग भारी हो गये। कमर की घुँघरी खिसकने लगी। हे सखी, अब उसे किस तरह सम्हाल कर रक्खूँ?

नवाँ महीना बीत चला। मेरे नवों अंग भारी हो गये। सहसा कमर में जोरों का दर्द उठा। हाय! इस कुसमय में मैं किसे जगाऊँ? मेरी सास ओसारे पर सोई है। ननद घर के भीतर और मेरे प्रियतम रंगमहल में सोये हैं।

कलाई की चूड़ियाँ और शरीर के अन्य गहने बार बार फेंक कर उन्हें मारती हूँ जिससे उनकी आँखें खुल जायँ। किन्तु, उनकी कुम्भकर्णी नींद नहीं टूटती।

काश, इस बार इस विपत्ति से छुटकारा मिला तो देव पितर पूजूँगी, और कभी प्रियतम की सेज पर नहीं जाऊँगी जिससे कि यह प्रसव वेदना सहनी पड़े।

[२२]

केकर अँखिया बरोरग, केकर नामि-नामि केश
केकर पिया परदेश गेल, केकर अलप वयस
राम जी के अँखिया बरोरे, सीता के नामि-नामि केश
सीता के पिया परदेश गेल, सीता के अलप वयस

सुनु लछुमन देवर • सुनु, देवर वचन हमार
केकरा झरोखा चढ़ि बइसब, बिसरि जयता श्रीराम
सुनु सुनु सीता भउजी हे, सुनु भउजी वचन हमार
बाबा के झरोखा चढ़ि बइसब, बिसरि जयता श्रीराम
सुनु सुनु लछुमन देवरे, सुनु देवरे वचन हमार
के मोरा अयोध्या देखायत, के मोरा राखत मान
केकरहि कोरा पइसि सुतबौं, बिसरि जयता श्रीराम
सुनु सुनु सीता भउजी हे, सुनु भउजी वचन हमार
हमे तोरा अयोध्या देखायब, गोतिनि राखत तोहर मान
अम्मा के कोरा पइसि सुतबह, हे बिसरि जयता श्रीराम
सुनु सुनु लछुमन देवरे, सुनु देवरे वचन हमार
नथिए के आँगठन गेल्हा नथिए ने आँगठन भाय
घइलि कें आँगठन गेल्हा, बहिनि के आँगठन भाय
कहमा सँ अयता नऊआ दऊर-दऊरि, कहमा सँ बतिसो कहार
कहमा सँ अयताह कओन भइया जिनि भइया डोलि क सिंगार
नइहर सँ अयता नऊआ दऊरि दऊरि, नइहर सँ बतिसो कहार
नइहर सँ अयताह कवन भइया, जिनि भइया डालि न सिंगार

'किसकी आँखें बड़ी बड़ी हैं ? किसके लम्बे लम्बे केश ? किसके प्रियतम प्रवासी हैं ? और किसकी उम्र कच्ची है ?

'राम की आँखें बड़ी-बड़ी हैं ? सीता के लम्बे लम्बे केश। सीता के प्रियतम प्रवासी हैं, और सीता की वयस कच्ची है।'

'हे देवर लक्ष्मण, सुनो। मैं किसके झरोखा चढ़ कर बैठूँ कि प्रवासी *रामको क्षण भर के लिये भूल जाऊँ।'*

'हे भावज सीता, सुनो। तुम पिता के झरोखा चढ़ कर बैठो, और प्रवासी राम की याद क्षण भर के लिए भूल जाओ।'

'हे देवर लक्ष्मण, सुनो। कौन मुझे अयोध्या ले चलेगा ? कौन मेरी देख भाल करेगा ? मैं किसकी गोद में सोऊँ कि जिससे प्रवासी राम की याद क्षण-

भर के लिए भूल जाऊँ ?'

'हे भावज सीता, सुनो। मैं तुम्हें अयोध्या ले चलूँगा। तुम्हारी गोतिनी तुम्हारी देख भाल करेगी। तबीयत हल्की करने के लिए तुम माँ की गोद में सो जाया करो, और प्रवासी राम को याद क्षण भर के लिए भूल जाओ।'

'हे देवर लछमण, सुनो। किस वस्तु का उठँगन गेरुआ है ? और किस वस्तु का उठँगन भाई ?'

घड़ा का उठँगन गेरुआ है, और बहिन का उठँगन भाई।'

कहाँ से नाई दौड़ दौड़ कर निमंत्रण लायेगा ? कहाँ से बत्तीस कहार आयेंगे ? और कहाँ से मेरे अमुक भाई आयेंगे, जो मेरी डोली के शृङ्गार हैं।'

'नैहर से नाई दौड़ दौड़ कर निमंत्रण लायेगा ? नैहर से बत्तीस कहार आयेंगे और नैहर से ही तुम्हारे अमुक भाई आयेंगे जो कि तुम्हारी डोली के शृङ्गार हैं।'

[२३]

तलफि-तलफि उठय जियरा कोना विधि बोधब हे
ललना हमरा बलमु परदेश उदेश न पावल हे
चाँदनी रात इजोरिया से भेल अँधेरियान हे
ललना पापि रे पपीहा आधि रात त 'पिऊ पिऊ' सुनावल हे
सूतल रहलो में सेजया त निर्दियो ने आवय हे
ललना चमकि चमकि उठँ गात हिया मोर शूल चुभय हे
काट नहिं सग सहेलिनि घरवा अकेलिन हे
ललना छिनहिं बाहर छिन भीतर बलमु विरहमेन हे
धीर धरु अचल सोहागिनि सासु समुझावहि हे
ललना नोहर ननमु फिरि अरहेन मास घुँमारहि हे

हे सखी, मेरा जी रह-रह कर तलफ उठता है। मैं उसे किस तरह सान्त्वना दूँ ! मेरे प्रियतम प्रवास में हैं। उनकी कोई ख़बर नहीं मिली।

चाँदनी रात अँधेरी हो गई। और हे सखी, यह पापी पपीहा आधी आधी रात को (बड़ी सुरीली ध्वनि में) 'पी कहाँ ? पी कहाँ ?' की रट लगाता है।

'मैं सेज पर सोई थी, लेकिन नींद नहीं आई। हे सखी, मेरा शरीर जाने क्यों अनायास ही चौंक उठता है, और हृदय में कुछ शूल-सा चुभ रहा है।

'मैं घर में अकेली हूँ। साथ में कोई नहीं है। हे सखी, मैं प्रियतम की जुदाई में कभी घर के बाहर और कभी भीतर पगली सी दौड़ रही हूँ।'

सास कहती है— हे चिर सुहागिन, तुम धीरज धरो। क्वार में तुम्हारे प्रियतम वापिस आयेंगे।'

[२४]

पुरइन कहए हम पसरब अपने रग पसरब हे ललना
पसरब देवकी के आगन अपने रग पसरब हे
दुभिया कहए हम चतरब अपने रग चतरब हे ललना
चतरब देवकी के आगन अपने रग चतरब हे
बजना कहए हम बाजब अपने रग बाजब हे ललना
बाजब देवकी क अँगना अपने रग बाजब हे
हरदी कहए हम रगब अपने रग रगब हे ललना
रगवौं देवकी के चुदर अपने रग रगब हे

पुरइन—'मैं खिलूँगी। मैं अपने स्वाभाविक रूप में खिलूँगी। देवकी के आँगन में मैं अपने प्राकृत रूप में खिलूँगी।'

दूब—'मैं चतरूँगी। मैं अपने स्वाभाविक रूप में चतरूँगी। देवकी के आँगन में मैं अपने सहज रूप में चतरूँगी।'

बाजा—'मैं बजूँगा। मैं अपनी स्वाभाविक लयध्वनि में बजूँगा। मैं देवकी के आँगन में स्वाभाविक लयध्वनि में बजूँगा।'

हलदी—'मैं रँगूँगी। मैं अपने स्वाभाविक रंग में रंगूँगी। मैं देवकी की चुँदरी अपने सहज रूप में रँग दूँगी।'

[२५]

काहु घर देलन राम दुइ-चार काहु घर दश पाँच रे ललना
हमरहुँ बेरिया राम भुललन हमर कओन गत हे
सासु के तोहि नकारल ननद धुकारल रे ललना

भँइसुर के लाँघल छँहिया तेहि रे राम भोर गेलन हे
सासु के आरति उतारब ननदि दुलारब रे ललना
भँइसुर क कर जोरि मिनति अर राम बुझतन हे

राम ने किसी को दो चार दिये और किसी को दस पाँच। लेकिन हे, सखी, जब हमारी बारी आई तो उन्होंने आँखें मूँद लीं। हाय! हमारी क्या दशा होगी?

'हे सखी, तुमने अपनी सास की बेअदबी की। ननद का तिरस्कार किया, और अपने भँसुर की छाया का लघन किया। इसीलिए राम ने तुम्हारी सुधि नहीं ली।'

'हे सखी, अब मैं सास की आरती उतारूँगी। ननद को प्यार करूँगी, और अपने भैंसुर की प्रतिष्ठा का ख़याल रक्खूँगी। आशा है, अब राम मुझ पर अनुग्रह करेंगे।'

[२६]

उगइत आर्वाध गिरनिया त भइइस बादर रे ललना
बारह बरिस पर पिया अयलन त धनियो ने बोलय हे
किये तोंहि अम्मा मारल धनि गरियाओल रे ललना
कथिए के मातलि बहुरिया धनियो ने बोलय हे
नइ हम धनिया के मारल नइ त गुरारल रे ललना
तोर धनि विरहा के मातल तेहि ते न बोलथि हे
घर पछुअरवा सोनार भइया तोंहि मोरा हित बसु रे ललना
गढ़ि देहि धनि जोग सिकरिया धनियो ने बोलय हे
घर पछुअरवा रँगरेज भइया तोहि हित बसु रे ललना
रंग देहि धनि जोग चुनरिया धनिया ने बोलय हे
बाँस जाँत लेलन राजा सुँदरि हथिआन लेलन रे ललना
चलि भेलन धनिया मनाव धनियो ने बोलय हे
रुआरि चुँदरिया राजा भइया पेन्हथि टिकुलिया ब इनि पेन्दयु रे ललना
राजा हम त बचनिया के भूखल दरसन चाहिय हे

प्रकाश बिखेरती हुई किरणें आ रही हैं। कहरते हुए मेघ आ रहे हैं।

आज बारह वर्षों के बाद किसी विरहिणी का परदेशी साजन घर लौटा है। किन्तु, वह प्रियतम से सीधे मुँह बोलती तक नहीं।

'हे माँ क्या तुमने अपनी पतोहू को पीटा या अकारण गाली दी? जाने वह क्यों इस तरह रूठ बैठी है कि मुझसे सीधे मुँह नहीं बोलती।'

हे पुत्र, न तो मैंने तुम्हारी प्रिया को पीटा। न अकारण गाली दी। सच तो यह है कि तुम्हारी प्रिया विरह से मतवाली है। यही कारण है कि वह तुमसे सीधे मुँह नहीं बोलती।'

'हे मेरे घर के पिछवाड़े बसे हुए सोनार, तुम मेरा हितू हो। मेरी प्रिया मुझसे रूठ गई है। तुम उसके लिए एक अच्छी सी सिकड़ी गढ़ दो।'

'हे मेरे घर के पिछवाड़े बसे हुए रँगरेज, तुम मेरा हितू हो। मेरी प्रिया मुझसे रूठ गई है। तुम उसके लिए एक सुन्दर चुँदरी रंग दो।'

सिकड़ी और चुँदरी लेकर परदेशी अपनी रूठी प्रिया को मनाने चला।

'*हे राजा, तुम्हारी यह चुँदरी तुम्हारा भाई पहने, और यह सिकड़ी तुम* अपनी बहन को पहना दो। मैं तो तुम्हारे प्रेम की भूखी हूँ। गहने लेकर क्या करूँ? मुझे तो सिर्फ तुम्हारे दर्शन चाहिये।'

[२७]

घर से बोललथिन कओन देइ
प्रभु हे आव ने सुतन रउरा सग कि रतिया उखम लागु हे
वोझि देवौं जिरवा के बोरसि लओंग के पाचक हे
धनि हे लेमि देवो मानिक दियरा कि रतिया सुखम लागु हे
जरि जइहैंन जिरवा के बोरसि लओंगक पाचक हे
प्रभु हे जरि जइहैन मानिक दियरा कि रतिया उखम लागु हे
पिठि लागल सुतथि ननदिया देहरि पै सासु बइसि हे
धनि दुआरे बइसत कोतवाल कि रतिया सुखम लागु हे
मुलि जइहैंन पिठि लागल ननदि देहरिया पर सासु जी हे
प्रभु मुलि जइहैंन दुआर कोतवाल रतिया उखम लागु हे

ऑओ हम जनितऊँ कन्त राय कौर सुनतन दुलार करतन हे
ललना हँसि खेलि सोएवो सेजरिया कि रतिया सुखम लागु हे

नायिका अपने प्रियतम से कह रही है—

'ओ प्रियतम, मैं अब तुम्हारे साथ नहीं सोऊँगी। रात बहुत उष्ण प्रतीत होती है।'

'हे प्रिये, जौ की अगीठी जला दूँगा। लौंग भास्कर चूर्ण बनवा दूँगा। तुम्हारे शयन मन्दिर में माणिक दीप जलाऊँगा। जिससे तुम्हें रात शीतल प्रतीत होगी।'

'ओ प्रियतम जौरे की अगीठी जल जायगी। लौंग भास्कर चूर्ण समाप्त हो जायगा। माणिक दीप बुझ जायगा, और फिर रात उष्ण प्रतीत होगी।'

हे प्रिये, तुम्हारी ननद तुम्हारे साथ सोयेगी। देहली पर सास सोयेगी। दरवाजे पर तुम्हारी देख भाल के लिए कोतवाल पहरा देगा और रात शीतल हो जायगी।'

'ओ प्रियतम, साथ में सोई हुई ननद बिछुड़ जायगी। देहली पर सोई हुई सास मुझे भूल जायगी। दरवाजे पर बैठा हुआ कोतवाल ऊँघने लगेगा, और फिर रात उष्ण हो जायगी।

यदि मैं तुम्हारी गोद में लेट कर सोऊँ, और तुम मुझे प्यार करो, तब मैं सेज पर आनन्दपूर्वक सोऊँगी, और मुझे रात शीतल प्रतीत होगी।'

[२८]

पान अइसन पिया पातर फुलवा अइसन सुकुमार हे
से हो पिया देखलौं फुलवरिया मलिनिया सग निहुँसधि हे
आहे आहे भइया कओन भइया अओर कओन भइया हे
कहिएक बान्हु बहिनोइया मलिनिया सग निहुसधि हे
बान्हल पिया करजारिया करे अओर मिनतिया करे हे
धनि अब ने जायब फुलवरिया मलिनिया सग ने निहुँसब हे
आहे भइया आहे भइया कओन भइया अओर कओन भइया हे
फुलके बान्हु बहनोइया बहनोइया सुकुमार ह्युन हे
आगे आगे बहिनो कओन बहिनो तु त कलयुग लयल हे

अपन पिया अपने बन्हयलह पाछु पछतावल हे

मेरे सजन पान की तरह पातर और फूल की तरह कोमल हैं।

हे सखो, ऐसे सलोने सजन को मैंने फूल के बगीचे में मालिन के साथ आँखें लड़ाते हुए देखा।

'ओ मेरे अमुक भाई, अपने बहनोई (मेरे सजन) को ज़रा कस कर बाँधना। वह फूल के बगीचे में मालिन के साथ आँखें लड़ाया करते हैं।'

रस्से में बँधा हुआ नायिका का सजन अपनी प्रिया से आरज़ू मिन्नत कर रहा है

'हे प्रिये अब मैं फूल के बगीचे में नहीं जाऊँगा, और न मालिन के साथ आँखें लड़ाऊँगा।'

'ओ मेरे अमुक भाई, मेरे सजन का बन्धन ज़रा ढीला कर देना। वह अत्यन्त कोमल है।'

'आ बहन, तुमने तो प्रत्यक्ष कलयुग ला दिया। तुमने स्वयं अपने प्रियतम को बँधवाया, और अब आँसू पोंछ रही हो।'

[३६]

पातर धनि पतरयलन्हि कुसुम रंग चुदर रे
ललना चुदरि के घएलन्हि पलंग पर अआर पलंग पर हे
ललना तकिया बलमु जी के छतिया आयल सुख निनियो हे
भेल परात पआ फाटल चुचुहिया बोल लागल रे
ललना छाड़ु छाड़ु प्रभु मोरा आँचर पनिया के जायब ह
किय अहाँ धइलि अँचरवा त अँचरा भयावन हे
होरिला जनम जब हयत त अँचरा सोहावन हे
पलगा सुतलि अहाँ देवर अओर लेहुर देवर हे
देवरा बोलिया के करु न विचार पुरुख बोलि मारल हे
भउजो हथवा मे लेलन्हि अछत अआर बेलपत्र हे
भउजो सुति उठि सुरुज मनइहा सुरुज तोहरा पुत दिहैंन हे
सुरुज मनावहुँ ने पयलि सुरुज मोरा पुत देल हे

देओर जनमल हमरा हारिलवा सँहीन केँ ओठगन हे

पतरी कमरवाली नायिका दिन दिन पतराती गई। उसकी पतरी कमर में कुसुम रंग की चुँदरी है। उसने अपनी चूँदरी पलंग पर रख दी।

प्रियतम के वक्षस्थल—गल तकिया को सिरहाने रख कर नायिका शीघ्र सुख की नींद सो गई। सुबह हुई। पौ फटी। पुचुहिया बोलने लगी।

'ओ प्रियतम, तुम मेरा आँचल छोड़ दो। मेरा आँचल मलिन लगता है। मैं जल भरने जाऊँगी।'

'हे प्रिये, जब तुम पुत्र जनोगी तब तुम्हारा आँचल सुहावना लगेगा।'

पलंग पर सोये हुए ओ छोटे देवर, तुम ज़रा उनकी बोली पर गौर तो करो। मेरे प्रियतम ने मुझे बोली की गाली मारी है।'

'ओ री भावज अक्षत और बिल्व पत्र से तुम नित्य प्रात काल सूर्य्य की पूजा करो। तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी।'

मैंने सूर्य्य की पूजा भी नहीं की, और सूर्यदेव ने मुझे पुत्र दिये। हे देवर, मैंने पुत्र जना है, जो तुम्हारी बहन के मनोरंजन का कारण होगा।'

[२०]

अँगना म ठाढ़ि पिया सिर हरय अँगना म
दउरि दउरि जाय पिया भइया बोलाय लाय
चलु-चलु हमार घर देखता पुजय
दउरि-दउरि जाय पिया गोतिनि बुलाए लाय
चलु-चलु हमार घर झाड़ पुजय अँगना म
अँगना म ठाढ़ि पिया दरदा हरय अँगना म
दउरि-दउरि जाय पिया बहिनि बोलाय लाय
चलु चलु हमार घर काजर सेद अँगना में
अँगना मे ठाढ़ि पिया पिरा हरे अँगना म
ए जगतारन, ए कुलतारन काजर सेतु अँगना में
दउरि-दउरि जाय पिया चेरिया बोलाय लाय
चलु चलु हमार घर मोट कुटय अँगना म

ए जगतारन, ए कुलराखन सोंठ कुट आँगन में

हे सखी, आँगन में प्रियतम खड़े हैं। आँगन में खड़े हैं—मेरी प्रसव पीड़ा हर लेने के लिए।

मेरे प्रीतम दौड़ दौड़ कर जाते हैं। माँ को बुला लाते हैं।

'ओ माँ, चल। गृह देवता का पूजन कर दे।'

प्रियतम दौड़ दौड़ कर जाते हैं और मेरी गोतनियों को बुला लाते हैं।

री गोतनियो, चल। घर में छठी का पूजन कर दे।'

हे सखी, आँगन में मेरे प्रियतम खड़े हैं। आँगन में। मेरा दर्द हेर लेने के लिए आँगन में खड़े हैं।

मेरे प्रियतम दौड़ दौड़ कर जाते हैं, और अपनी बहन को बुला लाते हैं।

'चल री बहन, आँगन में बैठ कर काजल सेंक दे।'

मेरे प्रियतम आँगन में खड़े हैं—आँगन में। मेरे जगतारण और कुलराखन खड़े हैं—मेरी पीड़ा हरने के लिए।

मेरे सजन दौड़ दौड़ कर जाते हैं—बाँदी को बुला लाते हैं।

ओ री बाँदी चल। आँगन में बैठ कर सोंठ कूट दे।'

[२१]

क

हरषि गोपाल यशोमति अङ्कम लाओल रे ललना
जनि पथ परल परस मणि निरधन पाओल रे

छन्द

निरधन धन पावि मगन मन आनन्द उर ने समाए यो
कहथि हरषि गधर्व अवनरु थिकाह यदुवरराय यो

ख

पहिलहि तुरित यशोमति तनय नहाओल रे ललना
सुनि नन्द दगरिनि सहित धाय रहि आयल रे

छन्द

धाय गृहि पहुँ आय दगरिन आनन्द भेल चहुँ ओर यो
यदुवंश क्षीरसमुद्र सम जनि प्रगट दोसर चन्द्र यो

ग

नार छेदाओल सोहर दगरिनि पाओल रे ललना
युग युग जीवथु यशोमति बालक ताहर रे

छन्द

देखि तोहर तनय यशुमति मुदित यादवराय यो
आनि हाथ बधाव हुलास गोकुल द्वार दुन्दुभि बाज यो

घ

सुर नर मुनि सब हरखित सकल देवगण रे ललना
कंस निकन्दन हेतु नन्द गृह आओल रे

छन्द

'नन्द लाल' कवि भैल नेहाल गोकुल भेल सनाथ यो
धन्य यशोदा भाग तोहर प्रगट श्री यदुनाथ या

यशोदा ने प्रसन्न होकर शिशु श्रीकृष्ण को गोद में रख लिया, जैसे रास्ते में पड़े हुए मूल्यवान मणि को कोई निर्धन रख ले।

जैसे कोई निर्धन धन पा ले, उसी तरह यशोदा श्रीकृष्ण को पा कर फूली न समायी। वह आनन्द विभोर होकर कहने लगी—'निस्सन्देह यह गन्धर्व तुल्य बालक यदुकुल का भावी सम्राट है।'

यह कह कर यशोदा ने पहले शिशु श्रीकृष्ण को नहलाया। श्रीकृष्ण के जन्म की खबर पाकर नन्द दगरिन को साथ लेकर प्रसूति गृह में आये।

चारों ओर आनन्द मनाया जाने लगा। यदुवंशरूपी क्षीरसमुद्र में श्रीकृष्ण द्वितीय चन्द्रमा के सदृश उत्पन्न हुए।

नाल छेदने के पुरस्कार में दगरिन को सोहरें मिलीं। हे यशोदा, तुम्हारा बालक श्रीकृष्ण युग-युग जीये। तुम्हारे बालक श्रीकृष्ण को देख कर नन्द फूला नहीं समाते। गोकुल में धूमधाम के साथ उत्सव मनाया जा रहा है। द्वार पर

दुन्दुभि बज रही है।

हे सखी, मनुष्य, ऋषि और देवगण सब प्रसन्न हो गये। (सच पूछो तो) कंस का विनाश करने के लिए ही श्रीकृष्ण का नन्द के घर अवतार हुआ।

कवि 'नन्दलाल' कहता है कि श्रीकृष्ण के जन्म से गोकुल वासी सनाथ हो गये। हे यशोदा, तुम्हारा भाग्य सराहनीय है कि तुम्हे श्री कृष्ण जैसा पुत्र रत्न मिला।

[३२]

गिरि जनु गिरइ गोपाल जी के कर मे
गिरि ऐसो गरुइ गोपाल ऐसो कोमल रे ललना
गिरि जनु गिरइ गोविन्द भी के कर से
सात दिवस मेघवा झड़ि लागल रे ललना
मूसर बूँद परै गिरि पर मे
लै लठुरी चहुँ दिशि सँ धावै रे ललना
होहु सहाय गोविन्द जी ऊपर से
'सुकविदास' प्रभु तुम्हरे दरस के रे ललना
श्याम लियो बचाय ब्रज भुजबल से

ऐ पर्वत, श्रीकृष्ण की उँगली से छूट कर मत गिरो।

हे सखी, एक ओर दुर्वह और कठोर गोवर्द्धन पर्वत और दूसरी ओर कोमल श्रीकृष्ण।

ऐ पर्वत, श्रीकृष्ण की कोमल उँगली से छूट कर मत गिरो।

हे सखी, लगातार सात दिनों तक तूफानी बादल सभी ओर कर बरसते रहे। पर्वत के ऊपर मूसलाधार वृष्टि होती रही।

हे सखी, श्रीकृष्ण के मददगार गोप जन चारों तरफ से लट्ठ ले ले कर दौड़ पड़े। हे ईश्वर, इस कठिन अवसर पर तुम हमारी रक्षा करो।

कवि 'सुकविदास' कहते हैं—'हे सखी भगवान श्रीकृष्ण ने अपने बाहुबल से ब्रज की रक्षा कर ली।'

जनेऊ के गीत

जनेऊ शब्द यज्ञोपवीत (यज्ञ + उपवीत) का रूपान्तर है। जनेऊ का पर्याय वाचक एक शब्द और है—उपनयन। उपनयन का अर्थ है—सामीप्य प्राप्त करना। ब्रह्मचर्य विद्या शौर्य और तेज की प्राप्ति के लिए प्राचीनकाल में यज्ञोपवीत पहना जाता था। खादिर, गोभिल और हिरण्यकेशिन गृह्यसूत्रों के अनुसार बाएं कन्धे पर पहना जाता तो यज्ञोपवीत, और दाहिने कन्धे पर पहना जाता तो प्राचीनावीत कहलाता था। पहले कपास के सूत्र के अभाव में वस्त्र और कुश की रस्सी भी यज्ञोपवीत के स्थान पर प्रयुक्त होते थे। आश्वलायन गृह्यसूत्र के देखने से प्रतीत होता है कि जिस दिन जन्म हुआ हो या गर्भ रह चुका हो उसके आठवें वर्ष में ब्राह्मण का, जन्म या गर्भ से ग्यारहवें वर्ष में क्षत्री का और बारहवें वर्ष में वैश्य का यज्ञोपवीत होना चाहिये—

अष्टमे वर्षे ब्राह्मणमुपनयेत् [१]
गर्भाष्टमे वा [२]
एकादशे क्षत्रियम् [३]
द्वादशे वैश्यम् [४]

ब्राह्मण का बसन्त में, क्षत्री का ग्रीष्म में और वैश्य का शरद ऋतु में यज्ञोपवीत होता है। यज्ञोपवीत के एक दिन पहले ब्रह्मचारी व्रत करता है। उन व्रतों में ब्राह्मण के लड़के एक या अनेक बार दुग्ध पान करते हैं। क्षत्री के लड़के यव को मोटा दल कर गुड़ के साथ पतली कढ़ी बनाकर पीते हैं, और वैश्य के लड़के दही में श्रीखण्ड और केसर डाल कर भूख लगने पर पीते हैं, और अन्य कोई पदार्थ नहीं खाते—

'पयाव्रतो ब्राह्मणो यवागूव्रतो राजन्य आमिक्षाव्रतो वैश्य।'

शतपथ ब्राह्मण

इस अवसर पर गाये जानेवाले गीतों की लय, ध्वनि, टेक और छन्द छन्द अन्य गीतों की अपेक्षा भिन्न होती हैं। छन्द, भाषा, उपमा, उपमेय साधारण, सहज सादगी से ओतप्रोत—

[१]

समुया बइसाल थिकौं मोन बाबा सुनु बाबा वचन हमार हे
हमरा के दिअ बाबा जनेऊआ हम हएब ब्राह्मण हे
काना क आरे बरुआ गंगा नहयनह काना करब नेमाचार हे
काना क बरुआ गायत्री सुनयबह वंश क हयत उधार हे
नित उठि आहे बाबा गंगा नहायब नित्य करब नेमाचार हे
साँझ दुपहरिया बाबा गायत्री सुनायब वंश के हयत उधार हे

'हे शामियाने में बैठे हुए मेरे पिता, मेरा यज्ञोपवीत संस्कार कर दो। मैं ब्राह्मण बनूँगा।'

पिता ने कहा— हे ब्रह्मचारी, अभी तुम्हारी उम्र कच्ची है। अगर तुम्हें जनेऊ दूँ तो तुम किस तरह गंगा नहाओगे। किस तरह यज्ञोपवीत संस्कार के दिन की गई प्रतिज्ञाओं का पालन करोगे, और किस तरह गायत्री पाठ कर कुल का उद्धार करोगे ?'

ब्रह्मचारी ने कहा—'हे पिता, मैं नित्य उठ कर गंगा स्नान करूँगा। नित्य नियमानुसार यज्ञोपवीत संस्कार के दिन की गई प्रतिज्ञाओं का पालन करूँगा, और नित्य प्रातः और सन्ध्याकाल गायत्री पाठ करूँगा जिससे कुल का गौरव बढ़े।'

जनेऊ धारण करने के अवसर पर की गई प्रतिज्ञाओं का अल्पवयस्क बालक भली भाँति पालन नहीं करते। पण्डित और बड़े बूढ़े तक ब्रह्मचर्य व्रत का संकल्प करके उन नियमों का पालन नहीं करते। प्रायः देखा जाता है कि उपनयन संस्कार केवल एक स्वांग की तरह कर लिया जाता है। ब्रह्मचारी कुछ घंटों में ही स्नातक बन कर उसी दिन ब्रह्मचर्याश्रम को त्याग गृहस्थ बन जाता है। जब बालक का शरीर और बुद्धि ऐसी हो कि वह पढ़ने के योग्य हो जाय तब यज्ञोपवीत देना चाहिये। इस गीत में बालक अपने पिता से जनेऊ देने के लिए अनुरोध कर रहा

है। पिता जनेऊ के समय की प्रतिज्ञाओं की याद दिला कर उसकी पात्रता में सन्देह करता है।

[२]

नाहि बन सिंकिया ने डोलइ बाघिनि दहारथु रे
ललना ताहि बन पइसलन बाबा बाबू अँगुरि धयल कान बरुआ रे
पहिले उँ मारलन मिरिगवा मिरिगछाल चाहिय रे
ललना तब जाय तोरलन पलसवा पलासदंड चाहिय रे
ललना तब जाय चिरलन मुंजेलवा मुंजेलि डोरा चाहिय रे
कहाँ शोभइन बाबू के मिरिगवा मिरिगछाला चाहिय रे
ललना कहाँ शोभइन बाबू के पलसवा पलासदंड चाहिय रे
ललना कहाँ शोभइन बाबू के मुंजेलिवा मुंजेलडोरा चाहिय रे
ललना कान्हे शोभइन बाबू के मिरिगवा मिरिगछाला चाहिय रे
ललना हाथ शोभइन बाबू के पलसवा पलासदंड चाहिय रे
ललना डाँर शोभइन बाबू के मुंजेलिवा मुंजेलडोरा चाहिय रे

हे सखी, जिस वन में तृण नहीं डोलते और बाघिन दहाड़ती है उस विजन वन में अमुक पिता अपने अमुक ब्रह्मचारी की उंगली पकड़ कर गये।

हे सखी, वहाँ उनने पहले मृगछाला के लिए मृग मारा। पलाश दंड के लिए पलाश की डाली तोड़ ली और हे सखी अंत में मुंज के डोरे के लिए मुंज की पतली पत्तियाँ चीर लीं।

हे सखी, इसी ब्रह्मचारी के किस अंग में मृगछाला सुशोभित होगा ? किस अंग में पलाश दंड, और हे सखी, उसके किस अंग में मुंज का डोरा विभूषित होगा ?

हे सखी, ब्रह्मचारी के कन्धे पर मृगछाला सुशोभित होगा। हाथ में पलाश दंड, और कमर में मुंज का डोरा।

ब्राह्मण के बालक को पलाश का, क्षत्रिय को वट का वैश्य को गूलर के वृक्ष का दंड देने का नियम है। दंड चिकने और सीधे होते हैं। अग्नि में जले या कीड़ों के खाये हुए नहीं। कमर में मुंज का डोरा, बैठने और पहनने के लिए एक मृगचर्म, जल पीने के लिए एक जलपात्र, एक उपपात्र और एक आचम

नीय ब्रह्मचारियों को देने का विधान है।

[३]

कथिग्रहि मरवा छुवाग्रोल कथिए झिनन लागु हे
कथिग्रहिं खम्भ गराऊ त कथिए कलस धरू हे
बँसवहिं मरवा छुवाग्र ल मोतिए झिनन लागु हे
केरा वेर थम्भ गराग्रोल तामे क कलस धरू हे
केहि ज मोढ़ा चढ़ि बइसल केहि मगल गावधु हे
केकरहि हयत जनेऊग्रा त देव लोग हरस्ति हे
मोढ़ा चढ़ि बाशिठ बइसल कोशिला मगल गावधु हे
ग्राहे राम जी के हइन जनेउग्रा त देव लोग हरसित हे

किस वस्तु से मडप छाया गया है? किस वस्तु की झाँझ लगी है? उसमें *किस वस्तु के खम्भे हैं? और किस धातु के कलश रक्खे गये हैं?*

हरे बाँस से मंडप छाया गया है। मोतियों की उसमें झाँझ लगी है। कदलि के थम्भ के खम्भे हैं, और ताम्बे का कलश रक्खा गया है।

कौन मोढ़ा पर बैठा है? कौन मंगल गा रहा है? किस ब्रह्मचारी के यज्ञो पवीत-संस्कार की यह धूम धाम है जिससे देवता प्रसन्न होकर उत्सव मना रहे हैं?

मुनि वाशिष्ठ मोढ़ा पर बैठे हैं। कौशल्या मगल गा रही है। राम के यज्ञो पवीत संस्कार की यह धूमधाम है जिससे देवता प्रसन्न होकर उत्सव मना रहे हैं।

[४]

छोटि मोटि ग्राम गछुलिया त ग्रोरमल डाढ
ताहि तर वग्रोन वरुग्रा धरयिन ध्यान
भर दिन वरुग्रा धयलन्हि ध्यान
साँझ केर वेर वरुग्रा करथि ग्रसनान
समुग्रा बइसल बाबा कोन बाबा
मुरहुँ जे बोलए वरुग्रा जनेऊ त दिऊ
देवौं जनेऊग्रा वरुग्रा हरिद्वार जाय
नीक लगन सोचाय

ग्राम का छोटा-मोटा गाछ। मंजरी से लदा हुआ। उसीके नीचे अमुक ब्रह्मचारी ध्यान कर रहा है। दिन भर उसने ध्यान किया, और संध्या को स्नान।

ब्रह्मचारी ने कहा—'हे शामियाने में बैठे हुए मेरे पिता, मुझे जनेऊ दे दो।'

पिता ने कहा—'हे ब्रह्मचारी मैं कोई शुभ लग्न विचार कर हरिद्वार में तुम्हारा यज्ञोपवीत संस्कार कर दूँगा।'

घर पर जनेऊ न देकर कोई-कोई तीर्थ स्थानों में जाकर भी ब्रह्मचारी को जनेऊ देते हैं।

[५]

वँसवा जे काँपथि अकास विच पुरइनि जल बिच हे
मड़वहि कँपथिन कौन बाबू अपना गोतरा बिनु हे
हाथि चढ़ि अवथिन कओन मामा डोलिय कओन मामी हे
नील घोड़ा अवथिन कओन भइया डोलिय कओन भउजो हे
तब मोरा मनमा हुलास भइया भउजी अयनाह हे

जिस तरह आसमान में बाँस और जल के बीच कुमुदिनी के पत्ते काँपते हैं, उसी तरह अपने दयादों के न आने से मंडप में अमुक पिता काँप रहे हैं।

पति को चिन्तातुर देख कर पत्नी कहती है—'हे पति, तुम चिन्ता मत करो। डोली में अमुक मामी और हाथी पर बैठ कर अमुक मामा आयेंगे, और मंडप की शोभा बढ़ायेंगे।

डोली में अमुक भावज और नील घोड़े पर चढ़ कर अमुक भाई आयेंगे, और भाई और भावज को देख कर मेरा मन प्रफुल्लित होगा।'

[६]

वेदी बइसल छथि कओन बरुआ बहिन बहिन कए हे
आवथु बहिन सुहागिन लागरि परिछथु हे
किए बहिन पहिरब पहिरन अओरो किए ओढ़न हे
कओन बमतर अहाँ पहिरब लागर परिछन हे
नये हम पहिरब पहिरन नये किछु ओढ़न हे
गिरारि बस्तर हम पहिरब लागर परिछन हे

वेदी पर बैठा हुआ अमुक ब्रह्मचारी 'बहन ! बहन !' पुकार रहा है। मेरी सौभाग्यवती बहन कहाँ गई ? लावर परीछ न दे ?

'हे बहन, तुम उपहार में कौन कौन आभरण लेकर लावर परीछ दोगी ?

बहन ने कहा—'हे भाई, मुझे उपहार म कोई ख़ास आभरण तो नहीं चाहिये। मेरे लिए एक पीला वस्त्र पर्याप्त है। मे लावर परीछ दूँगी।'

'लावर परिछन' यज्ञोपवीत संस्कार सम्पन्न हो जाने के बाद की एक विधि है जिसमें ब्रह्मचारी के शिर के बालों का मुडन होता है। मुंडन किये हुए केश दर्भ और शमीपत्र ब्रह्मचारी की बहन अपने आँचल में रखती जाती है। तत्पश्चात् वे मिट्टी से दाब कर गोशाला, नदी या तालाब के किनारे गाड दिये जाते है।

[७]

के मोर जयताह गगासागर केहि जयताह बइजनाथ हे
के मोर जयताह बनारस केहि सग जायब हे
बाबा मोर जयताइ गगासागर पितिए बइजनाथ हे
भइया मोरा जयतन बनारस हुनिक सग जायब हे
समुआ बइसल अहाँ बाबा त करु पद बन्दन हे
कोना विधि आहे बाबा ब्राह्मण होयब कोना विधि परत जनेऊ हे
आरे बँसवा कटाएब मारब छायन हे
आगर चानन निपि आँगन गजमोती चउक पुरि हे
सोने कलस बाबू पुरइर राखब लेसब चऊमुख दीप हे
विप्र बोलाएब वेद भनाएब एहि विधि हयत जनेऊ हे
एहि विधि बाबू ब्राह्मण होयबह एहि विधि हयत जनेऊ हे

कौन गङ्गासागर जायगा ? कौन वैद्यनाथ ? कौन बनारस जायगा ? और मैं किसके साथ गङ्गा पार करूँगा ?

मेरे पिता गङ्गासागर जायेंगे। चाचा वैद्यनाथ। मेरे भाई बनारस जायेंगे, और मै उन्हीं के साथ गङ्गा पार करूँगा।

'हे शामियाने में बैठे हुए पिता, मैं प्रणाम करता हूँ। मैं किस तरह ब्राह्मण बनूं, और किस प्रकार मेरा यज्ञोपवीत-संस्कार सम्पन्न हो ?'

पिता ने कहा—'हे पुत्र, मैं हरे बाँस काट कर ऊँचा मंडप छवाऊँगा। चन्दन से आँगन लीप कर गजमोती चौक पूरूँगा। सोने के कलश लाकर पुरहर सजाऊँगा। चौमुख दीप जलाऊँगा। पंडित बुला कर वेद पाठ कराऊँगा। इसप्रकार तुम्हारा यज्ञोपवीत संस्कार सम्पन्न होगा, और तुम ब्राह्मण बनोगे।'

[८]

सुरपुर से ऋषि नारद फुल एक लायल हे
आहे दिय गय बाभन हाथ त वेद भनाइय हे
काँच बाँस कर माड़व पान छवाइय हे
बइसु पंडित सब आऊ त वेद भनाइय हे
आहे घर घर फिरहुँ नउनिया त गोतिनि हँकारय हे
आहे आजु लला के जनेउआ त मंगल गाविय हे

सुरपुर से नारद ऋषि एक फूल लाये। हे सखी, वह फूल ब्राह्मण को दो, और वेद का पाठ कराओ। काँच बाँस का मंडप बना कर उसे पान के पत्ते से छवा दो।

हे पंडित, आओ बैठो। वेद का पाठ करो।

हे नाउनियो, मेरे सगे-सम्बन्धी और हित कुटुम्बों को न्योत आओ।

आज मेरे बेटे का यज्ञोपवीत-संस्कार है। हे सखी, आओ हम सब मिल कर मंगल गावें।

[९]

पहमे से आयल बरूआ
कहाँ कए जँ जाय
कवन ओझा बाबा दुआरिया
बरूआ धुनिया लगाय
पच्छिम से आयल बरूआ
पुरूब जँ जाय
कवन ओझा दुआरे बरूआ
धुनिया लगाय

।मख ले बहार भेलि दाइ
भिखियो ने लेय
मुरहु ने बोलए
वहि मोरा देत माइ
धोतिया जँ पोथिया
वेहि मोरा देता माइ
काँधे जोग जनेऊआ
बने अहाँक देता वरुआ
धोतिया जँ पोथिया
पुरहित बाबा देता अहाँ के
काँधे जोग जनेऊआ

ब्रह्मचारी कहाँ से आ रहा है? कहाँ जायगा? किसके दरवाजे पर वह धूनी रमायेगा?

ब्रह्मचारी पश्चिम से आ रहा है। पूरब जायगा। अमुक ओझा के दरवाजे पर वह धूनी रमायेगा।

ब्रह्मचारी को भिक्षा देने के लिए अमुक दादी बाहर निकली। उसने भिक्षा लेने से इन्कार किया—

'हे माँ, कौन मुझे धोती और पोथी देगा, और कौन मेरा यज्ञोपवीत सरकार कर देगा?'

'हे ब्रह्मचारी, तुम्हारे पितामह तुम्हें धोती और पोथी देंगे, और तुम्हारे कुल-पुरोहित तुम्हारा यज्ञोपवीत-सस्कार कर देंगे।'

[१०]

हरिअर बँसवा कटाएव मारव छायब रे
आजु मोर लाल के जनेऊआ केहि केहि नेवतब हे
जेकरा के जे कोउ हयता से सब नेवतब हे
नेवतब गोतिया सहोदर जिनका सँ रूसन हे
घोरवहिं अयनाह गोतिया डाँड़िय गोतिन लोग हे

आहे बइसे के देवहन गलइचा
कि बइसु गोतिया लोग हे
मड़वहि भखथिन कौन बाबा
निरा भेल थोर—आदर भेल थोर
मिनतिए बोलथिन कौन आमा
हम न अहांक जोग हे
मड़वहि भखथिन कन्या चाची
आदर भेल थोर सेनुर भेल थोर
मिनतिय बोलथिन कन्या चाची
हम ने अहांक जोग हे

हरे बाँस ला कर मंडप छवाऊँगी। आज मेरे पुत्र का यज्ञोपवीत-संस्कार है। मैं किसे किसे न्यातूँ ?

जिसका जो दिन कुटुम्ब है उन सब को न्योतूँगी, और उन सभी सगे-सम्बन्धियों और देयादों को, जिनसे मेरा मनमुटाव रहा है, न्योतूँगी।

डोली में देयादिन और घोड़े पर हित कुटुम्ब आयेंगे। उन्हें बैठने के लिए गलीचा दूँगी।

मंडप में बैठे हुए अमुक पितामह ने कहा 'मेरा यथोचित आदर नहीं हुआ। मुझे पान की गिलौरियाँ कम मिलीं।'

उलाहना सुन कर अमुक पितामह ने कहा 'मैं तुम्हारे लायक नहीं हूँ तुम मानापमान का विचार मत करो।'

मंडप में बैठी हुई अमुक चाची ने कहा—'मेरा यथोचित सत्कार नहीं हुआ। मुझे सिन्दूर बिन्दी नहीं दी गई।'

उलाहना सुन कर अमुक चाची ने कहा—'मैं तुम्हारे योग्य नहीं हूँ। तुम मान अपमान को भूल जाओ।'

सम्मरि

'सम्मरि' शब्द स्वयम्बर का अपभ्रंश है। 'सम्मरि' गीत शैली की कथावस्तु इस कथन की आधार शिला है। इस शैली के शत प्रति शत गीत स्वयम्बर कालीन युग (विशेषतया त्रेता और द्वापर में प्रचलित) स्वयम्बर प्रथा की याद दिलाते हैं। गीत की कथावस्तु, वाक्य विन्यास, और अभिव्यक्ति की परम्परा में अभूतपूर्व सौन्दर्य है। एक समय था, जब इसकी सजीव भावभंगी और ललित रूप विधान पर रसिक हृदय लट्टू हो जाते थे। किन्तु, अब इस शैली के गीतों में कोई आकर्षण नहीं रहा। छुटपन में न जाने कितनी बार ग्रामीण गायकों की आकर्षक आवाज़ में इन गीतों को सुन कर एक अलौकिक आनन्द का अनुभव किया था। और काफी देर पहले इस पोध क गीतों को पर्याप्त तादाद में संगृहीत कर लेने के बावजूद इन्हें अँधेरे से प्रकाश म लाने की चेतना न हुई।

वैदिककालीन वर्णधर्म के अनुकूल जैसे लाग ब्रह्मचर्य और गृहस्थाश्रम की अवधि समाप्त कर वानप्रस्थ' और वानप्रस्थ से संन्यासाश्रम में प्रवेश करते थे, और सम्पत्ति का उत्तराधिकार अपने किसी सत्पात्र वंशज को सौंप जाते थे, उसी तरह लोक गीत तरुणाई की देहली पार कर संन्यासाश्रम में प्रवेश करने के वक्त अपनी गद्दी नई पीढ़ी के सुयोग्य गीतों को दे जाते हैं, और नई पीढ़ी के नये नये गीत रूप बदल कर ग्रामीण गायकों की ज़ुबान पर अनायास उतरने लगते हैं। पुन जैसे लोग मृत पूर्वजों के नाम भूल जाते हैं, उसी तरह लोक मानस भी पुरातन मृतप्राय गीतों को अपने अजायब घर में बरामद नहीं रखता, और वे सदा के लिए समाधि के पत्थर के नीचे राख बन जाते हैं।

कोई-कोई 'सम्मरि' को विवाहकालीन गीत शैली के दर्जे में बिठा देते हैं। केवल विवाह के ही मंगलमय अवसर पर 'सम्मरि' गाया जाता, तब इन्हें अलबत्ता विवाहकालीन गीत शैली को कोटि में शुमार करना युक्तिसंगत होता।

किन्तु, ऐसा नहीं देखा जाता। होली के उन्मुक्त दिनों में भी ग्रामीण गवैयों के सरस कंठ से 'झमरि' की मस्त तान फूट-फूट कर लोक-जीवन के ऊपर मैं संगीत की सुधा बरसाती है। अत: 'झमरि' शैली के गीत प्रसूनों को लम्ब गीत के गमले में न सजा कर एक अलग-हिस्सा स्थान दिया गया। एक ही बात एक तरह से कही जाने पर उसमें एकात्मता आ जाती है, और वही बात दूसरी जगह दूसरी तरह कही जाने पर मनोरञ्जक लगती है। कुछ नमूने देखिये—

सीता-स्वयम्वर

[१]

राजा जनक जी यज्ञ कियो सखि
धनुषा दियो धराय
जे भूप इहाँ धनुषा तोरय
सिया बिआहब ताहि
—भला सिर मउरी शोभय लाल ध्वजा

सिया स्वयम्बर पाँती फिरि गेल
सुर जग राज मँझार
राम लछुन यग पूरन कारन
चले मुनी के साथ
—भला कठ झिमझिम झिमझिम बाज रहे

हनो ताड़को दानो
तारो पावन गौतम नार
चक्सर जाय मुनी मख राखो
उतर तिरबेनी पार
—भला रामभद्र जर से नाम परयो

राम लछन मुनि सँ आज्ञा माँगथि
माँगतु मांगि कर जोरि
जनकनगर फुलवारी देखन
इहा मनोरथ मोर
—भला तरकस में तीर बिराज रहे

जनकदुलारी गेल फुलवारी
सखि सब संग लगाय
चम्पा बेल चमेली तोरय
चीर जमीरी रंग
—भला रघुवर पर दृष्टि जाए पड़े

रामचन्द्र इहा धनुषा तोड़ल
सिआ दिया जयमाल
सुर नर मुनि सब जय जय बोलथ
धनि दशरथ क लाल
— भला लिखि भेजेऊँ पाँती दशरथ के

ढोल नङ्गेरा बाजन बजि गेल
औ' खुर्दक शहनाई
जनक दोआर बधावा बाजय
मनि सब धूम मचाए
—भला वीरों की छाती कड़क रहे

मंगल मूल सोहाओन पाँती
गया अवधपुर धाम
हमसों किछु न बनाय सके
आपहुँ पिंगल नसि शुद्ध किय
—× × × × ×

रामचन्द्र जी सहित जानकी
साजि लिया बरिआत
साँवल गोर दुइ रूप निहारल
छकित भयो पुर नारि
—भला भौरँपति झुडन गुजि रहय

सजन डालि चढ़ाल पालकी
हौदन श्रा तमदान
मोतियन झालरि श्वेत कियो साजि
तापरि सामधि भयो श्रसवार
—भला थानातहुँ झुम्ह कहारन के

लगय बरात जनक के द्वारे
सखि सब मगल गावि
× × ×
× × ×
—भला सखियन सब झूमर करन लगे

बाँध बाँस कचन के खाम्ही
चारों माँडव छारि
जगमग जालि झलमल मोरी
रघुवर भाँर फिराय
—भला पुरहितगन कगन बान्हि दियो

भेल विश्राह राम चलु कोवर
सखि सब मगल गावि
× × ×
× × ×
—भला भोजन के श्राशा भेज दियो

छप्पन भोग छत्तीसो व्यञ्जन
भाँति भाँति पकवान
गरी छोहारा दाख इलायची
अँचवन बंगला पान
—भला अब दही परय घर सोनन के

रामचन्द्र जी सहित जानकी
गयो अवधपुर धाम।
× × ×
× × ×
भला सखियन सब धैरज त्यागि दियो

कहय कबीर दिगम्बर थाकत
लीला बरनि ने जाय
छूटल अच्छर रघुवर जानथि
हमसों किछु ने बसाय
—भला आपहुँ स मिलि कय शुद्ध किय

राजा जनक ने घोषणा की—'जो वीर भूप इस धनुष को तोड़ेगा उसीसे सीता का ब्याह होगा।'

उनके सिर पर मुकुट और लाल छत्र शोभा पा रहे थे।

सीता के स्वयम्वर में सम्मिलित होने के लिए पृथिवीमंडल के बड़े-बड़े राजा-महाराजाओं को पाँती भेजी गई। उसी समय अयोध्या के राजकुमार राम और लक्ष्मण ने भी ऋषि विश्वामित्र के साथ उनके यज्ञ की रक्षा करने के लिए *प्रस्थान किया।*

मंगलसूचक बाजे बज उठे।

रास्ते में राम ने दानवी ताड़का का बध कर शिला के रूप से तपस्या करती हुई गौतम की पत्नी पाषाणी अहल्या का उद्धार किया। बक्सर जाकर ऋषि

विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा की, और त्रिवेणी नदी पार कर आगे को ओर बढ़े।

उस समय वह भद्र राम के नाम से लोकप्रिय हुए।

राम लक्ष्मण ने ऋषि विश्वामित्र से जनक की फुलवाड़ी देखने की अभिलाषा प्रकट की। उनके तरकश में तीर सुशोभित थे।

जनक की दुलारी बेटी सीता भी सखियों को साथ लेकर फुलवाड़ी गई। वहाँ वह चम्पा, बेली और चमेली के फूल तोड़ने लगी कि उनकी दृष्टि राम पर पड़ी। उनके आभरण से राजसी सौन्दर्य उमड़ रहा था।

राम ने धनुष तोड़ डाला। सीता ने उनके गले में जयमाल पहनायी। देवता मनुष्य और ऋषि सब ने 'जय जय' के नारे बुलन्द किये। दशरथ के दोनों पुत्र राम और लक्ष्मण सचमुच धन्यवादार्ह हैं।

तत्काल दशरथ को पाती लिख कर भेज दी गई।

मृदंग, शहनाई, ढोल और नक्कार आदि बाजे बजने लगे। राजा जनक के द्वार पर बधाई के रूप में अनेक प्रकार के उत्सव हुए, और ऋषियों ने आनन्द-सूचक शब्दों में आशीर्वचन कहा।

यह देख कर बड़े बड़े नरपतियों एवं वीरों की छाती दहल गई।

मंगलमयी सुहावनी पाती अयोध्या भेजी गई जिसमें नम्रतापूर्वक निवेदन किया गया—'मैं अपनी श्रद्धापूर्ण अभिव्यक्ति को भली भाँति क्रमबद्ध नहीं कर सकता। उसमें अनेक दोष हैं। हे सम्राट, आप इसे पिंगल और व्याकरण की कसौटी पर कस कर उसे शुद्ध कर लें।'

राम और सीता की बारात सज-धज कर निकली। साँवली और गोरी—अपूर्व जोड़ी देखकर नगर के स्त्री पुरुष फूले न समाये।

रूप-रस के लोभी मधुकर गुञ्जार करने लगे।

डोली, चण्डोल, पालकी और तामदान गली गली में सज कर निकले। हाथियों की पीठ पर हौदे रख दिये गये। उन पर मालियों की मुरेंद कालर बिछा दी गईं, और उस पर समधी सवार होकर बरात में सम्मिलित हुए।

कहारों के अंग अंग में बनात के कपड़े लहराने लगे।

जनक के द्वार पर आकर बरात रुकी। सखियाँ आनन्द विभोर हो कर

'झूमर' गाने लगीं।

काँच बाँस काट कर चारों मंडप छाये गये। उनमें कंचन के खम्भे लगाये गये। राम के शिर पर मौर रक्खा गया जिसका प्रकाश चारों ओर फैल गया। इस प्रकार दूल्हा राम को भावरी हुई।

कुल पुरोहितों ने उनके हाथ में कंगन बाँध दिये।

अन्त में बड़ी धूमधाम के साथ राम का ब्याह सम्पन्न हुआ। वह कोहबर घर में विदा दिये गये, और सखियाँ मंगल गाने लगीं।

इधर बरातियों को भोजन की आज्ञा भेज दी गई।

छत्तीस प्रकार के व्यञ्जन और छप्पन प्रकार के भोज्यपदार्थ बरातियों का परोसे गये। नारियल की कतरन, छोहारा, दाख इलायची, बगला पान आदि विविध प्रकार की वस्तुएँ बाँटी गई।

श्रोत्रिय ब्राह्मणों के पत्तल पर दही घृत परोसे गये।

राम सीता के साथ अयोध्या गये। इधर सीता की सभी सखियां उनके विरह में शोकातुर हो विलाप करने लगीं।

'कबीर' कहता है कि सीता के स्वयंवर का गुणगान करने में असमर्थ हूँ। इस वर्णन में जो त्रुटियाँ हैं उन्हें ईश्वर जाने। मैं उन्हें दूर करने में असमर्थ हूँ। विज्ञ पाठक स्वयं संशोधन कर लेंगे, ऐसा विश्वास है।

रुक्मिणी-हरण

[२]

प्रथमहि वन्दहुँ विघ्न विनाशन
गिरिजातनय गणेश यो
देवि शारदा चरण मनाविय
देहु सुमति उपदेश यो

कुण्डिनपुर एक नग्र बखानल
जनि इन्द्रासन रूप यो

जनि इन्द्रासन रूप मनोहर
ऊपर मन्दिर छाय यो

दह अति निर्मल पङ्कज शोभित
केलि करत राजा हंस यो
चहुँ दिशि लागल केत बाँस घन
चानन गाछ दुआरि यो

माय मनावथि चरण पखारथि
धिया भेलि व्याहन योग यो
रानि सुमति लै अएला राजा
भीषम हँकरथि कुल परिवार यो

पाणिग्रहण कय कृष्णहिं दीजै
सब मिलि रचथि विचार यो
ओहि अवसर रुक्मद तहँ आयल
रुक्मिणि केर जेठ भाय यो

पाँच तनय दुहिता एक रुक्मिणि
सुर नर मुनि मन मोह यो
इ कन्या शिशुपालहिं दिजै
निन्दित यादवराज यो

धेनु चरावथि वेणु बजावथि
छिर खिच करथि अधार यो
नन्दमहर घर जन्म हुनक छैन्हि
जातिक थीक गोआर यो

कान्हे कम्मल, हाथे सैली
गौआ चरावथि वनमाहि यो
कोन कोन राजा के न्योतब
कोन कोन अरु देश यो

नौतब कनौन छतिस कोटि लय
नौतब दिल्लीक राज यो
मथुरा मोरङ्ग निरहुत नौतब
नौतब सकल समाज यो

गया नौतब गयाधर नौतब
नौतब अयोध्या ग्राम यो
स्वर्गहिं इन्द्र पतालहिं नौतब
मर्त्यभुवन कैलाश यो

ऐलङ्ग, तैलङ्ग सब गढ नौतब
नौतब मगह मुंगेर यो
पूर्वहिं न्योतब गिरि उदयाचल
पश्चिम वीर हनुमान यो

नवा पार नैपाल चम्पारन
काशी सत्रु बरिआत यो
सादर सब ऋषि ब्राह्मण नौतब
सुर नर मुनि सब झारि या

कारनाटपुर ठठ्ठ ओडीसा
पाडव कौरवराज यो
एक नहिं नौतब नग्र द्वारिका
जहाँ बसु नन्दकुमार यो

जे नहि औताह रुक्मिणि न्योता
बान्ह देथिन्ह पनिसार यो
सभ दिशा ता जैह हे ब्राह्मण
एक दिशा चनु जाह यो

अगंहि रन मा लरही मञ्झाओर
वृन्दावन निकट गौन यो
मध्य थानत्य मंडिर ठाइर
ताहि बैसायन पंडिआन यो

रतन जड़ित चारू कोन उरेहल
ऊपर पटम्बर छान यो
धन निशरकमा आनु सम्हारल
मंगल गावथि नारि यो

कैसन बातु रानघर राजन
मोंहि मनि कहु समुझाय यो
राजा भीष्म घर मौह कुमारी
से ताह बातु बचाय यो

इ जब सुनलनि रुकमिनि कामान
उटलेहे हृदय तराम यो
बलपर नागरि दसनि सोहागिनि
मुरुछि खसल महि मांझ यो

कतो मनि छाबय चानन लाबय
कतो धरि बिजन डोलाय यो

सखियन चेतल चेन जगाओल
कर धय लेल उठाय यो

क्रिए तोंहे रुक्मिन मनहि विरोधल
क्रिय न खेमल मुरझाय या
जों जीअत तौ कृष्ण सरन देत
नहि त मरब विष खाय यो

कदलि वन सौ पत्र मगाओल
मृगमद कैल मसिग्रान या
लिखय विलाप विनय कय माधव
हैन हमहुँ तव दास यो

सिद्दक भाग सियार लै भागत
जनम अकारथ जाय यो
कूआँ बावली इह कयल यदि
आवि धरिअ यहो हाथ यो

लिखि पतिया विप्रहिं बोलाओल
तुरन्त द्वारिका जाइ यो
देवउ हे ब्राह्मण अन धन लछमी
और सहस्र धेनु गाय यो

देवऊ हे ब्राह्मण पैरक नूपुर
गारा क मुक्ताहार यो
एक दिवस विप्र द्वारिका रहिअह
दोसरे सागर पार यो

कृष्ण लेवाय तुरत तौ अविह
हम होयब दास त'हार यो
दै पतिया सब बात जनाओल
ब्राह्मण टाट दुआर यो

खन बाँचथि खन हृदय लगावथि
खन पुछथि निज बात यो
पाछाँ मैं बलभद्रहिं आयल
भगवन कयल गोहारि यो

चललि सखी सब गौरि पूजय
रूक्मिणि मन पडि आव यो
हमरा लै कृष्ण कत अओता
हम धनि परम अभाग यो

जौं लाग रूक्मिणि गौरी पूजल
गरूड़ चढ़ि प्रभु धाय यो
कर धै रूक्मिणि रथहिं चढ़ाओल
चलि भेल श्रीभगवान यो

इन्द्र ब्रह्मा सब साक्षी रहब
रुक्मिणि हरल कुमारि यो
रूक्मिणि हरण सुनल शिशुपालहिं
मुर्च्छा खसल महि माँझ यो

बहुत कटक लै रुक्मद धायल
रथ कें घेरल जाय यो

बहुत कटक लै रूक्मद पहुँचल
रथ में ताहि बान्हि यो

इहा सोदर भाय थिक रूक्मद
हिनका दियौन्हि जिवदान यो
द्वारकापति प्रभु द्वारका पहुँचल
रूक्मद कैल कन्यादान यो

'लोकनाथ' भनु चरणाश्रि प्रभु
अवसर ने करिय विचार यो
रुक्मिणि स्वयम्वर गाव सुनाओल
दलितातक दुरिजात यो

गीत की कथावस्तु संक्षेप में निम्न प्रकार है—

'महाराज भीष्मक विदर्भ देश के अधिपति थे। उनके पाँच पुत्र और एक सुन्दरी कन्या थी। सब से बड़े पुत्र का नाम था रुक्मी, और चार छोटे थे—जिनके नाम थे क्रमशः रुक्मरथ, रुक्मबाहु, रुक्मकेश और रुक्ममाली। इनकी बहिन थी सती रुक्मिणी। जब उसने भगवान श्रीकृष्ण के पराक्रम और वैभव की प्रशंसा सुनी, तब उसने यही निश्चय किया कि श्रीकृष्ण ही मेरे अनुरूप पति हैं। श्रीकृष्ण ने भी रुक्मिणी से विवाह करने का निश्चय किया। रुक्मिणी के भाई बन्धु भी चाहते थे कि उनका विवाह श्रीकृष्ण से हो। परन्तु रुक्मी श्रीकृष्ण से बड़ा द्वेष रखता था। उसने उन्हें विवाह करने से रोक दिया और शिशुपाल को ही अपनी बहिन के योग्य वर समझा। जब परम सुन्दरी रुक्मिणी को यह मालूम हुआ तब वह बहुत उदास हो गई। उन्होंने बहुत कुछ सोच विचार कर एक विश्वास पात्र ब्राह्मण को तुरन्त भगवान श्रीकृष्ण के पास भेजा। ब्राह्मण देवता ने रुक्मिणी का निम्न लिखित सन्देश श्रीकृष्ण को सुनाया—'कमलनयन, मैं आप सरीखे वीर को समर्पित हो चुकी। अब जैसे सिंह का भाग सियार छू जाय, वैसे कहीं शिशुपाल निकट से आकर मेरा स्पर्श न कर जाय। मैंने यदि जन्म जन्म में कुएँ,

चान्द्रायण आदि सुव्रत कर तथा दान, नियम, ब्राह्मण और गुरु आदि की पूजा के द्वारा भगवान परमेश्वर की आराधना की हो तो आप आकर मेरा पाणि ग्रहण करें।'

इधर महाराज भीष्मक अपनी कन्या शिशुपाल को देने के लिए विवाहोत्सव की तैयारी करने लगे। राजकुमारी रुक्मिणी को स्नान कराया गया। हाथों में मंगलसूत्र कङ्कण पहनाये गये। कोहबर बनाया गया।

रुक्मिणी ने अपने कुल के नियम के अनुसार कुलदेवी का दर्शन करने के लिए एक बहुत बड़ी यात्रा की। रुक्मिणी इस प्रकार इस उत्सव यात्रा के बहाने मन्द मन्द गति से चल कर भगवान श्रीकृष्ण के शुभागमन की प्रतीक्षा करने लगी। वह रथ पर चढ़ना ही चाहती थी कि भगवान श्रीकृष्ण ने समस्त शत्रुओं के देखते देखते उनकी भीड़ में से रुक्मिणी को उठा लिया और उन सैकड़ों राजाओं के शिर पर पाँव रख कर उन्हें अपने रथ पर बैठा लिया। रुक्मी को यह बात बिल्कुल सहन न हुई कि मेरी बहिन को श्रीकृष्ण हर ले जायँ और बलपूर्वक उसके साथ विवाह करें। अब रुक्मी क्रोधवश हाथ में तलवार लेकर भगवान श्रीकृष्ण को मार डालने की इच्छा से रथ से कूद पड़ा और इसप्रकार उनकी ओर झपटा, जैसे पतिंगा आग की ओर लपकता है। जब श्रीकृष्ण ने देखा कि रुक्मी मुझ पर चोट करना चाहता है तब उन्होंने अपने बाणों से उसकी ढाल तलवार को चूर चूर कर दिया। फिर भी रुक्मी उनके अनिष्ट की चेष्टा से विमुख न हुआ। तब श्रीकृष्ण ने उसको उसीके दुपट्टे से बाँध दिया। इसप्रकार श्रीकृष्ण ने सब राजाओं को जीत लिया, और विदर्भ राजकुमारी रुक्मिणी को द्वारका में लाकर उनका विधिपूर्वक पाणिग्रहण किया।

उषा-स्वयम्वर

[१]

लक्ष्मी सरोसति सहित नरायण
गंगा गौरी गणेशै
गिरिजानन्दन दुरित निकंदन
बन्दौं श्रद्ध गणेशै

बलिनन्दन बाणासुर भूपति
तीन भुवन जिनि वीरे
शोणितपुर एक नम्र बखानल
जनि इन्द्रासन रूपे

हर पूजन चलु बाण महीपति
तेज सकल निज राजे
सहस्रबाहु लय ताल बजावत
गावथि शिवक समादे

शिव प्रसन्न हो बाण पान लय
मागु-मागु वर आजे
मोनक मनोरथ सुफल करब तोहि
रह तोरित तेज धामे

कतय यतन बाणासुर बोलल
नत भय अजलि जोरे
दीनदयाल कृपा एक मिनती
मन दय सुनह मोरे

से सुनि शंकर रोष भयंकर
योजन खसल गय केते
हम सन युद्ध ताहि दिन पएबह
दर्प हरत रन माँझे

ईशर बोल सुनि पुलकि पूरल
मोन पाओल रक निदाने

कइ प्रणाम चलल निज मन्दिर
हरषित वान समाने

लिख लिख नाम ठाम सब दिह देल
गौरि सहित कैलाशी
सुरसरि पैसि नेमि कए गायब
गधर्व देव विलासे

उषा सहित सखि चलु ओहि अवसर
मन्त्रि सुता सखि पासे
सब सखी कर गौरि अराधन
बिहगगन सत गावे

ओहि अवसर हर भिलहेरि खेलथि
नारि सहित नंदि माँझे
देखि उषा मन बाढ़ मनोरथ
करब मिलन मोर नाहे

उषा मनोरथ जान भवानी
हुलसि हकारल पासे
राजकुमारि उसरि तोंह बोलह
सभ विधि पूरत आसे

माधव मास इजोर दोआदशि
घर हर सुतिह एकंते
जे तों पुरुष सुन्दर सपना देखबह
सैह तोहर हैत कंते

इथर ऊपर होऊ सुरसन वसन लिश्र
गौरि सहित चलि गेली
कुमरि विदा भय घर पहुँचाएल
हरसित दरपित देहे

किछु दिन बीतल दाश्रादसि श्रायल
मास बइसाग इजोते
कुमरि सुमरि कय सुतलि धरोहर
सपना पुरुष देख गोरे

सुन्दर वर तन साँवर साँवर
पीताम्बर तनु श्रोढे
बाहु श्रजानु कमलदल लोचन
चित्त हरल जेहि देखै

सकल सुरनि सुत श्रनुभव सुन्दरि
जागि निंदहारए पासे
श्रधर सुधा मधुपान व्यतित कय
त्रिय गेल कन्त उदासे

चिन्ता लाज वेश्राकुलि मानुषि
धाधन धरय न पावय
उसाँस उसाँसि रहु किछु ने कुमरि कहु
नैन तजय जलधारे

मत्रि सुता सखि छथलि पलग लग
चित्ररेखा हुनि नामे

कुमरि बात देखि जाग चकित भेल
पुछए लागल तसु बाते

कोन पुरुष नाग हरल हिया बसि
कोन नागर अभिलाषे
बदन चन्द्र तोर भेल मलिन किय
कह सुन्दरि तज लाजे

अपरूप रूप पुरुष सँ समागम
रंग बढ़इत मोरा लागे
हर्ष विषाद दुहु मोरा उपजल
सुमरि सुचारुक गाते

हम पट लिखि चित्र सखि मन दय
से नहिं हृदय निवारे
तीन भुवन का रचल कुमर वर
आन मिलत नहिं पासे

देवासुर गन्धर्व उपचारल
मानुष सकल उरेहे
यदुकुल लिखल कुमर अनुरुद्धहि
ऊषा चिन्हल वर एहे

हरि घर चोरि मोहि कर्मे परश्चात
तीन भुवन जिन केर
न परवाह रखहु सखि सुन्दरि
जौं जानी कुल शीले

तोहि सखि योगिन लखय के पारै
पाँव परै चल जाहे
जो सखि प्रानक अछहु काज
मोरा आनि देखावह नाहे

कुमर निकट अवकासा ने पावै
भ्रमय तिलो छिन देहे
तौलि पलग पलख म आयल
मनि सुता सखि पासे

कुसुममाल लय कुमरि अनन्दित
कुमर गरां पहिराए
निशि दिन सुख भोग करि सुन्दरि
निसरल घर छव मासे

कोप उठल अँग अँग महीपति
करति कएल सिंहनादे
ओहि अवसर कानवाल पुकारय
कुमरि महल कोइ आवै

सुनि बाणासुर कोइ मोह कय
छुटलि कुमरि घर गेले
देखि कुमरि सग पुरुष महाबल
सारि पाश दुहु खेले

देख कुमर पर उठल मुद्गर
लय जनि दोसर यमराजे

भव भय भजन शरण चरण गति
दिअ प्रभु मोहि हित शाने
उठि जा जर तोरा देल अमय वर
जे परसय मोर नामे

जे मोहि परसय ताहि जनि परसि
नहिं त करब जिव धाते
पाओन तरुवर सयथ छद्धि लय
हरि पर चलल लवाने

हरि लेल चक्र विदारित आनिम
पाओन तरुवरि सेथे
विहुँसि वचन मधुसूदन बोलय
बकसह मोर अपराधे

सेवक हमर परम बानासुर
हम अभिमत वर देलै
अभिमत वर देलौं हुलसि कँ
अवसर करब पुकारे

आनि वानि रथ जोति बरायल
धसलि गेलि रनमाँझे
वर कन्या रथ जोति चढाओल
देल दहेज अनेके

गौरि मिलल जनि इशर महादेव
सिआ मिलल श्रीरामे

लछमी मिलल जनि देवनरायन
तैं में दुहु अभिराम

यदुकुल जीत एला पुरदेवक
पुर भय अन्दानराग
बाजन विविध महल जनु बाजन
घर घर मगल चार

लोकनाथ प्रभु चक्रपाणि लेल
अवसर करब पुकार
लोकनाथ सुत चक्रपाणि लय
अवसर करब सुमार्ते

गीत की कथावस्तु का सारांश नीचे दिया जाता है—

एक दिन बल-पौरुष के घमंड में चूर बाणासुर ने शंकर से कहा—'देवाधिदेव आप समस्त जगत के गुरु और ईश्वर हैं। मैं आपको नमस्कार करता हूँ। आपने मुझे एक हजार भुजाएँ दी हैं परन्तु वे मेरे लिए भारस्वरूप हो रही हैं। त्रिलोकी में मुझे आपको बराबरी का कोई वीर योद्धा ही नहीं मिलता, जो मुझसे लड़ सके।'

शंकर ने तनिक क्रोध से कहा—'रे मूढ़ जिस समय तेरी ध्वजा टूट कर गिर जायगी उस समय मेरे ही समान योद्धा से तेरा युद्ध होगा और वह युद्ध तेरा घमंड चूर चूर कर देगा।'

बाणासुर की एक कन्या थी, उसका नाम था ऊषा। अभी वह कुमारी ही थी कि एक दिन स्वप्न में उसने देखा—'परम सुन्दर युवक के साथ मेरा समागम हो रहा है।' तब से वह विक्षिप्त-सी दीखने लगी। बाणासुर के मंत्री कुम्भाण्ड की कन्या चित्र-लेखा ने अपनी सखी को खिन्न देख कर पूछा—'तुम किसे ढूँढ़ रही हो? अभी तक किसी से तुम्हारा ब्याह भी तो नहीं हुआ?'

ऊषा ने कहा—'मैंने स्वप्न में एक बहुत ही सुन्दर युवक को देखा है। उसके शरीर का रंग साँवला-साँवला सा है। नेत्र कमलदल के समान कोमल हैं। शरीर पर पीताम्बर फहरा रहा है। उसने पहले तो अपने अधरों का मधुर मधु मुझे पिलाया। परन्तु मैं उसे छक कर पी भी न पाई थी कि वह मुझे दु:ख के सागर में डाल कर जाने कहाँ चला गया। मैं अपने उसी प्राणवल्लभ को ढूँढ रही हूँ।'

चित्रलेखा ने कहा—'यदि तुम्हारा चित्तचोर त्रिलोकी में कहीं भी होगा, और उसे तुम पहचान सकोगी, तो मैं तुम्हारी विरह व्यथा अवश्य शान्त कर दूँगी। मैं चित्र बनाती हूँ, तुम अपने प्राणवल्लभ को पहचान कर बतला दो।'

यों कह कर चित्रलेखा ने बात-की बात में बहुत से देवता गन्धर्व, सिद्ध, चारण, पन्नग, दैत्य, विद्याधर यक्ष और मनुष्यों के चित्र बना दिये। जब उसने अनिरुद्ध का चित्र बनाया तब ऊषा ने कहा—'मेरा वह प्राणवल्लभ यही है।'

चित्रलेखा योगिनी थी। वह आकाशमार्ग से रात्रि में ही द्वारकापुरी पहुँच कर, अनिरुद्ध को पलंग समेत उठा कर शोणितपुर ले आई। अनिरुद्ध के सहवास से ऊषा का क्वारपन नष्ट हो चुका। उसके शरीर पर ऐसे चिह्न प्रकट हो गये, जो स्पष्ट इस बात की सूचना दे रहे थे कि जिन्हें किसी प्रकार छिपाया नहीं जा सकता था। पहरेदारों ने समझ लिया कि इसका किसी न किसी पुरुष से सम्बन्ध हो गया है। उन लोगों ने बाणासुर से जाकर इस बात की शिकायत की। वह झटपट ऊषा के महल में जा धमका, और देखा कि अनिरुद्ध वहाँ बेखटके बैठा हुआ है। जब अनिरुद्ध ने देखा कि बाणासुर सुसज्जित वीर सैनिकों के साथ महल में घुस आया है, तब वे उसे धराशायी कर देने के लिए एक भयंकर मुद्गर लेकर डट गये, मानो स्वयं कालदण्ड लेकर यम खड़ा हो। जब बली बाणासुर ने देखा कि यह तो मेरी सारी सेना का संहार कर रहा है, तब उसने क्रोध से तिलमिला कर उन्हें नागपाश में बाँध लिया।

बरसात के चार महीने बीत गये। परन्तु अनिरुद्ध का कहीं पता न चला। एक दिन नारद ने जाकर श्रीकृष्ण को सारा समाचार सुनाया। श्रीकृष्ण ने यदुवंशियों की विशाल फौज लेकर बाणासुर की राजधानी को घेर लिया। घोर युद्ध

हुआ। श्रीकृष्ण ने छुरे के समान तीखी धारवाले चक्र से उसकी भुजाएँ काट डालीं। अन्त में शंकर के प्रार्थना करने पर श्रीकृष्ण ने बाणासुर को अभयदान दे दिया। वह अनिरुद्ध को अपनी पुत्री ऊषा के साथ रथ पर बैठा कर श्रीकृष्ण के पास ले आया। इधर द्वारका में अनिरुद्ध आदि के शुभागमन का समाचार सुन कर झंडियों और तोरणों से नगर का कोना कोना सजा दिया गया। बड़ी बड़ी सड़कों और चौराहों को शीतल जल से सींचा गया, और खूब धूमधाम के साथ उनका स्वागत हुआ।

सीता-स्वयम्वर

[४]

नगर अयोध्या राज उचित थिक[1]
जहँ बसु[2] दशरथ नन्द यो
राम क जोरी बसथि जनकपुर
लखन काटि देब दान यो

गया नेवतव[3] गदाधर नेवतव
काशी नेवतव विश्वनाथ यो
मृत्यु भुवन एक दानी नेवतव
बासुकि नाग पताल यो

राजपाट पर रामजी बइसल[4]
झटकि चतु बरिआत यो
अठारह छौंहिनि[5] बाजन बाजै
सवा लाखहिं ढोल यो

[1]है। [2]रहते हैं, राज्य करते हैं। [3]न्योतूँगा। [4]बैठे। [5]अक्षौहिणी।

जयखन[1] सुनता[2] कतेक बुझावना
धरू ध्यान धन लोक यो
पहिल दान कयल तिल कुस लै
दोसर दान गोदान यो

तेसर दान कैल शाल दोशाला
चारिम दान कन्यादान यो
ऊखर आनल मूसर दै दै
केहन ठक ठक ताल यो

आमक पल्लव कयल बान्हल
ब्रह्मा वेद पढावि यो
भेल विवाह चलल राम कोबर[3]
सीता लै अगुरि धरावि यो

[५]

ऋषि मुनि चलला नहाय[4]
धनुष-तर नीपल हे
अजगुत[5] हम एक देखल
धनुष तर नीपल हे

भल कयलौं[6] आहे सीता भल कयलौं
धनुष-तर नीपल हे
एहि विधि रहब कुमार
जनम कोना बीतत हे

[1]जिस समय। [2]सुनेंगे। [3]कोहबर। [4]स्नान करने। [5]आश्चर्य। [6]किया।

फेरि[1] दिश्र आहे सीता आरति
फेरि दिश्र धुप दीप हे
फेरि दिश्र मखिया-सलेहर
जनकपुर नन्दिनि[2] हे

होयब अयाध्याक रानी
कि तुरही बजाएब हे

[1] वापिस कर दो। [2] सीता

आती है। मण्डप की भूमि प्रायः ढालवाँ होती है, और आसपास की भूमि से एक या आध हाथ ऊँची। विवाह के पहले ही दिन मण्डप बन कर तैयार हो जाता है। मण्डप बनाने की विधि यह है कि उसकी लम्बाई और चौड़ाई बराबर रक्खी जाती है। मण्डप निर्माण में पूर्व दिशा का भी पूरा विचार किया जाता है और ईशान, अग्नि आदि कोनों में मण्डप बनाना हानिकर माना जाता है। मण्डप में चार दरवाज़े होते हैं। दरवाज़े मण्डप की चारों दिशाओं—उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम की ओर बनाये जाते हैं। प्रत्येक दरवाज़े के आगे एक एक तोरण होता है, जो शमी, जामुन, और खैर की लकड़ी के होते हैं। लेकिन जो समर्थ हैं वे उत्तर का तोरण बरगद का, दक्षिण का गूलर का, पश्चिम का पाकड़ का और पूरब का तोरण पीपल का बनवाते हैं। तोरण के दोनों पार्श्व ख़ूबसूरत बेल बूटों और सुगन्धित फूल पत्तियों से सजाये जाते हैं।

मण्डप के हाशिये—किनारे की भूमि तीन भागों में विभक्त कर उसके चारों ओर बाँस के बारह खूँटे गाड़े जाते हैं, और उनके सिरे में एक दूसरे को छूती हुई मुञ्ज की पतली रस्सी बाँध दी जाती है। मण्डप भूमि के जिन जिन स्थानों में रस्सी के छोरों का सम्मिलन होता है, उन-उन स्थानों में भी चार खूँटे गाड़े जाते हैं और इन सोलह खूँटों के समानान्तर मण्डप निर्माण में सोलह स्तम्भ व्यवहृत होते हैं। स्तम्भ किसी यज्ञिय वृक्ष के ही होते हैं, जैसे—देवदार, पीपल, गूलर, पलाश बिल्व आदि। मण्डप का छाजन बगलेनुमा होता है, और फूस तथा चटाई से छाया जाता है। छाजन के भीतरी हिस्से गेंदई, धानी, सुरमई अथवा सलमे-सितारे जड़े चँदोवे और रंग बिरंगी फूल पत्तियों से सजाये जाते हैं। मण्डप की सजावट इतनी सुन्दर होती है कि कोई भी व्यक्ति उस पर गर्व कर सकता है। मण्डप के स्तम्भों में भी वन्दनवार, आम के हरे पल्लव, केले के पत्ते, फूलों के झब्बे, नरम बनात और मख़मल के सुनहरे फरेरे और कृत्रिम फूल लगाये जाते हैं। मण्डप के शिखर पर पाँच से दश हाथ तक की एक लम्बी ध्वजा लगाई जाती है। इसके अतिरिक्त मण्डप के इर्द गिर्द दशों दिशाओं में पौराणिक दश दिक्पालों—इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु,

कुबेर, रुद्र, ब्रह्मा और अनन्त की दश ध्वजाएँ गाड़ी जाती हैं, जिनके रंग दिक्पालों के रंग के से लाल, काले, नीले, सुफ़ेद, काले, हरे, सुफ़ेद, लाल और नीले होते हैं।

मण्डप निर्माण के उपरान्त कुण्ड और वेदी निर्माण होता है। वेदी पर एक मण्डल बना कर बीच में अष्टदल कमल बनाते हैं। उसी पर अपने प्रधान इष्टदेव को पूजते हैं। जिस जगह कलश स्थापन होता है, ठीक उसी के समीप वेदी बनाई जाती है, जिस पर हलदी से स्वस्तिक की आकृति बना कर फूल फल और अक्षत-सुपारी से गणेश का आवाहन करते हैं। इस समय जो गीत गाये जाते हैं, वे 'वेदी के गीत' के नाम से प्रसिद्ध हैं।

मण्डपादि निर्माण के बाद वर की यात्रा का शुभ मुहूर्त आता है। बरात की तैयारियाँ हफ़्तों से होने लगती हैं। दूल्हे के भाई बान्धव, हित कुटुम्ब और दायाद सब आमन्त्रित होते हैं। चारों ओर चहल पहल रहती है। रिश्तेदारों के यहाँ विवाह की तारीख़ का ढिंढोरा पिट जाता है और बरात की सुनिश्चित तिथि पर सब आलकी पालकी, डोली, ताम, घोड़े और हाथी लेकर बरात की सजावट के लिए जुट आते हैं। रंगरेज़ दुपट्टे रँगते हैं। मालिनें गजरे बनाती हैं और दूल्हे को भेंट करती हैं। जब दूल्हा पालकी में बैठ कर अपने रिश्तेदारों और भाई बान्धवों के साथ श्वसुर गृह के लिए प्रस्थान करता है तो पालकी के दोनों ओर दो नाई अदब से चँवर लिए दौड़ते चलते हैं। इस प्रकार जब वर पक्ष शाम को कन्या के दरवाज़े पर आता है, तो कन्या पक्ष की नगर निवासिनी महिलाएँ आभूषणों से अलंकृत हो कर दूल्हे की अगवानी में 'स्वागत सगीत' गाती हैं। 'स्वागत-सगीत' गाने के लिए ग्राम की हर उम्र की देवियों की संगीत-महफ़िलें जुटती हैं। फिर आमोद की नदी इस तरह उमड़ती है कि कुछ न पूछिये।

अगवानी और द्वार पूजा के अनन्तर रास्ते की थकी माँदी बरात दूल्हे को लेकर जनवासे (वर पक्ष के ठहरने का स्थान) को लौट आती है। और जब वर कन्या के विवाह का उपयुक्त अवसर आता है तब कन्या पक्ष की औरतें सिर पर आम के हरित पल्लवों से परिवेष्टित कलश लेकर अपनी हमजोलियों के साथ

मगल गाती हुई दूल्हे को निमंत्रित करती हैं। इस समय जो मंगलात्मक गीत गाये जाते हैं, वे मिथिला में 'शकर के गीत' के नाम से मशहूर हैं। ये हमें मिथिला के गौरवपूर्ण अतीत और उसकी प्राचीन सार्वभौमिक आर्य संस्कृति के उत्कर्षापकर्ष की याद दिलाते हैं। बॉदियों के लौट आने पर दूल्हा पालकी में बिठा कर विवाह मण्डप में लाया जाता है। इस प्रकार बाजे गाजे के साथ वर के मण्डप के निकट पहुँचते ही पहले शान्ति पाठ होता है। इसके बाद वर मधुपर्क पूजा का सत्कार करता है।

मधुपर्क पूजा की समाप्ति के बाद भी अन्य अनेक विधि-व्यवहार होते हैं, जिन्हें विस्तार-भय से छोड़ रहा हूं। विवाह-संस्कार के समय जब दुलहिन का भाई वर के गले में चादर डाल कर उसे मंडप के चारों ओर मंडलाकार घुमाता है, उस समय भी कुछ गीत गाये जाते हैं, जो 'भाउर के गीत' के नाम से प्रसिद्ध है। इस प्रकार 'कोवर, खीर भोजन, चुमावन' आदि पृथक् पृथक् कर्मों में पृथक् पृथक् शैलियों के गीत गाये जाते हैं।

यहाँ मिथिला के कुछ चुने हुए लोक गीत दिये जाते हैं, जो विवाह के अवसर पर गाये जाते हैं—

[१]

निम्न लिखित गीत सिन्दूर दान के पूर्व विवाह पंडाल में कन्या पक्ष की ओर से गाया जाता है। पुरातन ग्राम संस्कृति इस गीत की पृष्ठभूमि है—

कहमहिं जनमल आगर-चानन
कहमहिं उपजय बगला पान हे
कहमहिं जनमल सीता अइसन सुन्दरि
कहमहिं जनमल श्रीराम हे
बनहिं म जनमल आगर चानन
बनहिं म उपजय बगलापान हे
जनकपुर म जनमल सीता अइसन सुन्दरि
अयोध्या म जनमल श्री राम हे
आउ धाउ नउआ है आउ धाउ बाभन

आउ धाउ अयोध्या के लोग हे
सउँस अयोध्या मे राम जी दुलरूआ
हुनके क तिलक चढाऊ हे
आउ धाउ नउआ हे आउ-धाउ बाभन
धाउ धाउ अवध क लोग हे
हमरा अयोध्या मे सोने क मरऊआ
सोने क मरऊआ मँगाऊ हे
मरवा के ओते ओते सीता मिनति करथि
गोसाँईजी स अरज हमार हे
सोने क मरऊआ से बिआह न होयत
हरदी क माड़व छवाउ हे
आउ धाउ नउआ हे आउ धाउ बाभन
धाउ धाउ अयोध्या क लोग हे
हमरा अयोध्या म सोने क मऊरिया
सोने क मऊरिया मँगाऊ हे
मऊरी क ओते ओते सीता मिनति करथि
गोसाँईजी स अरज हमार हे
सोने क मऊरिया स बिआह न होयत
फुलवा के मऊरि मँगाऊ हे
धाउ धाउ नउआ हे धाउ धाउ बाभन
धाउ धाउ अयोध्या क' लोग हे
हमरा अयोध्या मेँ सोने क कलसवा
सोने क कलस मँगाऊ हे
कलसा क ओते ओते सीता मिनति करथि
गोसाँई जी स अरज हमार हे
सोने क कलसा से बिआह न होयत
माटी के कलस मँगाऊ हे

कहाँ मलयागिरि चन्दन पैदा होता है, और कहाँ बंगला पान ?

कहाँ सीता-सी सुन्दरी अवतरित हुई, और कहाँ श्रीराम पैदा हुए ?

वन में मलयागिरि चन्दन पैदा होता है और वन ही में बंगला पान।

जनकपुर में सीता सी सुन्दरी अवतरित हुईं, और अयोध्या में श्रीराम पैदा हुए।

हे हज्जामो ! आओ ! दौड़ो !! हे ब्राह्मणो ! आओ ! दौड़ो !! हे अवध के रहनेवालो ! आओ ! दौड़ो !! सारे अयोध्या के राम प्यारे हैं। उनको तिलक चढ़ाओ।

हे हज्जामो ! आओ ! दौड़ो !! हे ब्राह्मणो ! आओ ! दौड़ो !! हे अयोध्या के रहनेवालो ! दौड़ो ! दौड़ो !! हमारे अवध में सुवर्ण का मण्डप है। जाओ। ला दो।

सीता मण्डप की ओट में अपने पति से निवेदन करती है कि सुवर्ण निर्मित *मण्डप में हमारा ब्याह न होगा। कुश और बाँस पत्तियों में मण्डप सजा दो।*

हे हज्जामो ! आओ ! दौड़ो !! हे ब्राह्मणो ! आओ ! दौड़ो !! हे अवध के रहनेवालो !! दौड़ो ! दौड़ो !! हमारे अवध में सुवर्ण निर्मित मुकुट है। जाओ। *ला दो।*

मुकुट की आड़ में सीता अपने पति से अनुरोध करती है कि सुवर्ण रचित मुकुट से हमारा ब्याह न होगा। इसलिए फूल का मुकुट ला दो।

हे हज्जामो ! दौड़ो ! दौड़ो !! हे ब्राह्मणो ! दौड़ो !! हे अवध के बाशिन्दो ! दौड़ो ! दौड़ो !! हमारे अवध में सोने का कलश है। ला दो।

कलश की ओट में सीता अपने पति से निवेदन करती है कि सोने के कलश से हमारा विवाह न होगा। *अतः मिट्टी का कलश मँगवा दो।*

यह गीत हिन्दू-सभ्यता के उस समय का स्मरण दिलाता है, जब लोग सुवर्ण निर्मित मण्डप और मुकुट की अपेक्षा बाँस-पत्तियों तथा फूल के मुकुट और मण्डप को ही उत्कृष्ट समझते थे। यह गीत गाँवों की प्राचीन संस्कृति का एक सुन्दर प्रमाण है। इसमें गाँव के प्राचीन आदर्श का परिचय सीता के मुख से अपने स्वाभाविक रूप में कराया गया है।

पिपरक पात मचामलि हे
बहै बेन निरमल बतास
ताहि तर कनि बाबा पलगा ओछाओल
बेटी के आयल सुख नाद हे
चनिहन-चन्दन अइलि बेटी औन बेटी
पटिया के पउआ धयल ठाढि हे
जाहि घर आहे बाबा धिआ हे कुमारि
से हो रहले सुताय निचित हे
ओतना वचनिया जब सुनलन औन बाबा
चढ़ि चलल घेरा असवार हे
खोजल मैन मगह मुगेर हे
पुरुब खोजल बेटा पछिम खोजल
खोजल म मगह मुँगेर हे
ताहिरा जुगुति वर कहीं नहिं भेटल
गाल अपनी तपसु निरार हे
निरधन तपसिया हम न बिआहब
मरि जएबो जहर चबाय हे

पीपल के झिलमिल पत्ते हैं। मन्द मन्द शीतल हवा बह रही है। उस पीपल की ठंडी छाँह में अमुक पिता पलंग बिछा कर बैठा और ठंडी हवा के झोंके से गाढ़ी नींद में सो गया।

यह देख कर अमुक बेटी वहाँ पलंग का पाँव पकड़ कर खड़ी हुई, और बोली—

'हे पिता, जिसके घर में कुँआरी कन्या है, भला वह किस तरह सुख की नींद सोयेगा ?'

यह सुन कर उसका पिता घोड़े पर सवार हुआ, और दूल्हा की तलाश में निकला। उसने पूरब ढूँढ़ा, पच्छिम ढूँढ़ा, मगध और मुंगेर भी ढूँढ़ डाला, लेकिन उसकी कन्या के उपयुक्त वर नहीं मिला।

अन्त म उसने लौट कर अपनी कन्या से कहा—'हे बेटी, तुम्हारे उपयुक्त वर नहीं मिला। अत मैंने तुम्हारे लिये एक निर्धन वर तलाश किया है।'

कन्या ने कहा—

'हे पिता, निर्धन तपस्वी को मै नहीं व्याहूँगी। (निर्धन को व्याहने के पूर्व ही) मे गरल पान कर मर जाऊँगी।'

इस गीत से मालूम होता है कि जिस समय का यह गीत है, उस समय कन्या अपना जीवन सगी चुनने के लिए स्वतन्त्र थी और वह अपनी इच्छा के अनुरूप योग्य वर का वरण करती थी। इसीलिए जब पिता ने अपनी कन्या के उपयुक्त वर न ढूँढ कर एक निर्धन तपस्वी को तिलक चढाया तो कन्या ने उसका विरोध किया। इसके अतिरिक्त कन्या के विवाह के लिए पिता को कितनी चिन्ता होती है, यह कवि ने 'जाहि घर आहे बाबा धिया हे कुमारी, से हो कइसे सुतथि निचित हे' म बड मार्मिक ढग से चित्रित किया है।

[३]

देखु देखु दखु सखिया श्यामल पहुनमा हे
जिनका देखइत सखी माहि जात मनमा हे
मिथिला के असहीं दुसहीं डारे ने टाइ टोनमा हे
ताते सहेलिया मोरी दई दिउ दिठौनमा हे
धारवा चन्दन आवे छयला अलबेलवा हे
धारवा गुमान भरे करे फनकनमा हे
जोहर जरित जिन जेवर भनभनमा हे
भुकि भुकि चुचुकारे भुले मोरिया छागनमा हे
भाल विशाल पर तीन रेखनमा हे
मनहु जनावे तीन लोकन अइसनमा हे
गोल गोल गाल पर डोले अलकनमा हे
भुकि भुकि पूछे मानो केहि मन ठेकनमा हे
मुसकन मद पीके डोले मोतिया कुडलनमा हे
बोलिया अनमोलिया पर अग पुलकनमा हे

मलवा अलबेलया सखी देरव छिखनमा हे
आउ-आउ शरनिया हुनिक चाहु कल्यनमा हे
जनके हित करते करते बड़े थर कमलनमा हे
अँखिया म रहत रहते श्याम भेल रगनमा हे
मुट्ठी एक ऊँच छुधिन सिया से सजनमा हे
एके गन्थैया गढ़े दुहुँ के गढ़नमा हे
धन धन किशोरी मारा जेहि लागि लगनमा हे
आयहिं सं बनि श्ययनन मिथिला मेहमनमा हे
जुग-जुग जियें सखिया दुलहिन दुलहनमा हे
मङ सखी मगल गावे हरसे सुमनमा हे

हे सखी, देखो। साँवरे दूल्हे को देखो, जिसे देखने ही मन आकर्षित हो जाता है। मिथिला की कोई डायन दूल्हे पर टोना न कर दे। हे सखी, नज़र से बचाने के लिए दूल्हे के माथे में काजल का टीका लगा दो।

हे सखी, देखो वह अलबेला दूल्हा घोड़ा पर सवार होकर आ रहा है। घोड़ा गुमान से भरा है। फुरती से अकड़ कर कूद रहा है। उसकी पीठ पर जवाहर से जड़ा हुआ ज़ीन है। गहने से लदे हुए उसके अग प्रत्यग झकृत हो रहे हैं।

दूल्हे के मुकुट के झूलते हुए छोर झुक झुक कर घोड़े को पुचकार रहे हैं।

दूल्हे के विशाल ललाट पर चन्दन की तीन रेखाएँ हैं, जैसे वे तीनों लोक की विशालता की सूचना दे रही हों।

दूल्हे के गोल गोल गाल पर काले काले घुंघरेदार बाल बिखर रहे हैं, जैसे वे झुक झुक कर दूल्हे के मन की बात पूछ रहे हों। दूल्हे की मद भरी मुसकान पीकर मोती से जड़े हुए कुंडल डोल रहे हैं, और उसकी अनमोल बोली सुन कर श्रोता आनन्द विभोर हो जाते हैं।

हे सखी, लगता है जैसे दूल्हे के बेशकीमती हार कह रहे हों—'हे मनुष्य, यदि कल्याण चाहते हो तो दूल्हे की शरण आओ।'

सज्जनों का हित करते-करते दूल्हे के कर-कमल घिस गये हैं, और श्रद्धालु भक्तों की आँखों में रहते रहते उसका रंग साँवला हो गया है।

हे सखी, दूल्हा दुलहिन सीता से एक मुट्ठी ऊँचा है। मालूम होता है, एक ही कारीगर ने दोनों की सृष्टि की है।

हे सखी, हमारी सौभाग्यवती सीता धन्य है जिसके लिए ऐसा सुन्दर दूल्हा स्वयं मिथिला का मेहमान बन कर आया।

हे सखी, दूल्हे और दुलहिन की यह युगल जोड़ी युग-युग जीवे।

इस प्रकार सखियाँ प्रफुल्लित होकर मंगल गाने लगीं, और दूल्हे पर बार बार फूलों की वर्षा की।

[४]

वर की माँगे — वर सोने क अगुठी
रूमाल माँगे
वर चन्दन मे रोली लगाय माँगे
वर की माँगे
वर सिकरी माँगे—
वर सिकरी म करी लगाय माँगे
वर की माँगे
वर दुलहिन माँगे—
वर दुलहिन म परदा लगाय माँगे

दूल्हा क्या माँगता है?
सोने की अँगूठी माँगता है—रूमाल माँगता है।
चन्दन मे रोली लगा कर माँगता है।
दूल्हा क्या माँगता है?
सिकड़ी माँगता है—सिकड़ी में कड़ी लगा कर माँगता है।
दूल्हा क्या माँगता है?
दुलहिन माँगता है—दुलहिन में पर्दा लगा कर माँगता है।

[५]

जरी क टोपी म रूपा लगे
पेन्हु त रामजी देखन भरि नजरो

हँसु त रामजी देखब भरि नजरी
चलु त रामजी देखब भरि नजरी
आजु त रामजी अवधपुर नगरी
काल्हु त रामजी जनकपुर नगरी
सोने के कुंडल में मोती जड़े
पेन्हु त रामजी देखब भरि नजरी
चलु त रामजी देखब भरि नजरी
सोने के माला में हीरा जड़े
पेन्हु त रामजी देखब भरि नजरी
इतर के पानी में चन्दन घिसे
करु त रामजी देखब भरि नजरी

ज़री की टोपी में रूपा खिल रहा है। हे दूल्हा ज़रा पहन तो लो, आँखें भर कर देखूँ ?

हे दूल्हा ज़रा हँस तो दो, आँखें भर कर देखूँ !

ज़रा चलो तो आँखें भर कर देखूँ !

आज दूल्हा अवध में है। कल जनकपुर रहेगा।

सोने के कुंडल में मोती सुशोभित है। हे दूल्हा, ज़रा पहन तो लो, आँखें भर कर देखूँ !

सोने के हार में हीरा सुशोभित है। हे दूल्हा ज़रा पहन तो लो, आँखें भर कर देखूँ !

ज़रा चलो तो, आँखें भर कर देखूँ !

इत्र के जल में चन्दन घिसा हुआ है। हे दूल्हा, ज़रा लगा तो लो, आँखें भर कर देखूँ !

[६]

दुलहा आए दुआरिया में—घन बाजु हे सखिया इजोरिया में
दउरि चलल प्रभु हँसत सखी सब जनमाए बाजीगरिया से

दुमुकि चलत कहत सखी सब जनमाए हाथि हथिसरिया मे

टारि भए प्रभु कहत सखी सब जनमाए शैल सगरिया मे

दूल्हा द्वार पर आ गया। हे सखी, चलो हम जमात मे सज धज कर चाँदनी रात में दूल्हे का स्वागत करें।

दूल्हा दौड़ कर चलता है तब सखियाँ ताली पीट देती है। कहती है—'लगता है जैसे दूल्हे की माँ ने दूल्हे को अस्तबल में घोडे के साथ प्रसंग कर पैदा किया है।'

दूल्हा द्वार पर आ गया। हे सखी, चलो हम जमात मे सज धज कर चाँदनी रात में दूल्हे का स्वागत करें।

दूल्हा धीरे धीरे पाँव उठाता है तो वे कहती हैं—'लगता है जैसे दूल्हे की माँ ने दूल्हे को हाथी के साथ प्रसग कर फीलखाना मे पैदा किया है।'

और जब दूल्हा सकोच मे पड कर रुक जाता है तो वे कहती हैं— मालूम होता है जैसे दूल्हे की माँ ने पहाड के साथ प्रसग कर दूल्हे को समुद्र में पैदा किया है।'

दूल्हा द्वार पर आ गया। हे सखी, चलो हम जमात मे सज धज कर चाँदनी रात मे दूल्हे का स्वागत करें।

[७]

चितचोरवा आजु रूठैलनि हे
एहि चितचोरवा के शिर मणि मउरवा
छोरवा छवि छहरओलनि हे
एहि चितचोरवा के चोखे दगोरवा
अठवा अनुठवा कहओलनि हे
सोने के उखरिया मे मणि के मुसरवा
आठे चोट चउरवा छोरओलनि हे
ओहि रे चउरवा क बान्हु शुभ ररवा
सिया प्यारी वरवा कहओलनि हे
एहि चितचोरवा के लालि लालि ठोरवा

मनमोरवा मरमथोलनि हे
चितचोरवा आनु बन्हैलनि हे

हे सखी, आज यह चित्तचोर बाँध दिया गया।

इस चितचोर के शिर पर मणि का मुकुट है, जिससे सौन्दर्य उमड़ा पड़ता है।

हे सखी, इस चितचोर की आँखों की कोर नुकीली है। होंठ अनूठे हैं।

सोने के ऊखल में मणि का मूसल है जिससे छाँट छाँट कर चावल छुड़ा लिया गया। उस चावल को सुन्दर हाथों में रख कर राम सीता का दूल्हा बन गया।

हे सखी, दूल्हे के होंठ लाल लाल हैं जो दर्शकों के चित्त को आकर्षित कर लेते हैं।

हे सखी, आज यह चित्तचोर, बन्धन में बाँध दिया गया।

[८]

धरि अरु मुसर सम्हारि अठोंगर विध भारी हे
आठ हो चाद अहाँ कसि कसि मारु
देखु अहाँ के बरिआरी
सार मडप चहुँ ओर घुमाओल
वेदी क नगर निहारी
एहि विधि करत अठोंगर चारु दुलहा
सखी सब गावत गारी
अठोंगर विध भारी हे

हे दूल्हे, मूसल सँभाल कर पकड़ो। अठोंगर की विधि (अत्यन्त) कठिन है।

मूसल की मोटी धार से आठ बार कस कस कर धान कूटो। देखूँ, तुम्हारे बाहू में कितना बल है।

हे दूल्हे, अठोंगर की विधि (अत्यन्त) कठिन है।

साला—दुलहिन का भाई दूल्हे को (उसकी गरदन में चादर लपेट कर) वेदी के चारों ओर (वेदी पर दृष्टि रख कर) घुमा रहा है।

इस प्रकार चारों दूल्हे—राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न अठोंगर की विधि सम्पन्न कर रहे हैं। सखियाँ गाली दे रही हैं।

हे दूल्हे, अठोंगर की विधि (अत्यन्त) कठिन है।

[९]

दुलहा देखन म अयह छोट, पिढ़ा गुनन मे अयह मोट
दुलहा अहाँ लिय खाऊ बरफी, कोबर में मिलत अशरफी
दुलहा अहाँ लिय खाऊ पेरा, न अइ में करू बखेरा
दुलहा तनि लिय खाऊ बताशा, मन करू बहुत तमाशा
दुलहा तनि लिय खाऊ धनिया, अहाँ क कोबर मे मिलत कनिया

दूल्हा देखने में छोटा है। पढ़ने में खोटा।
हे दूल्हा, तुम बर्फी खाओ। कोहबर में तुम्हें अशरफी मिलेगी।
हे दूल्हा, पेड़ा खाओ। बखेड़ा मत करो।
हे दूल्हा, बताशा खाओ। तमाशा मत करो।
हे दूल्हा, धनिया खाओ। कोहबर में तुम्हें कनिया (दुलहिन) मिलेगी।

[१०]

मोर पछुअरवा लवग केर गछिया
लवगा चुअए आधि रात हे
लवगा म चुनि चुनि सेजिया डँसाओल
इगुर टेउरल चारू कोन हे
ताहि सेजिया सुतलन दुलहा कओन दुलहा
सगे भडुअबक धिआ हे
आशुर सुतु आशुर रहसु कन्या सुहवे
घाम से चादर हाेय मइल हे
अतना वचनिया जब सुनलन कन्या सुहवे
कमनि नइहरवा के जाथि हे
एक कोस गेलि दोसर कोस गेलि
सेसर कोस नदि छछकाल हे

आ रे आ रे केवट मलहवा रे भइया
जल्दी से नइया लय आउ रे
आजुर रतिया सखरि यतरि गँवाऊ
सिहने उतारब पार रे
आ रे आ रे फूटर मलहवा रे भइया
नाग डालि मोहि ने सोहाय रे
मेनडोह छोलन कुँअर कन्हैया
नइय सुन्दरा के गीत ह
एक लवंग आवय आनन भानन
दारा आरथ माजन लाग हे
तमर लावन आवर दुलहा से कान दुलरा
मर्हि मनावन हार रे

मेरे सिक्कवाड़ जाम का गाछ है। लौंग आधी आधी रात को चूता है।

लौंग चीन-चीन कर मैंने सेज सजाई और काहवर के चारों किनारे ईंगुर और चौआ चन्दन से चर्चित किया।

उस सेज पर अमुक दूल्हा सोया और उसके साथ (उसकी प्रियतमा) अमुक कन्या सोई।

दूल्हे ने कहा--'हे प्यारी, तुम मुझसे हटकर सोओ। हटकर बैठो। पसीने से मेरी चादर मैली हो जायगी।'

यह सुनकर उसकी प्रियतमा रूठ कर नैहर चली। वह एक कोस गई। दो कोस गई। जब वह तीसरा कोस तय करने लगी तो सामने भयानक नदी दीख पड़ी।

नायिका ने कहा—'रे केवट भाई, जल्दी नाव लाओ, और मुझे पार लगा दो।'

मल्लाह ने कहा—'हे सुन्दरी, आज की रात तुम मेरे ही साथ बिताओ कल प्रात काल तुम्हें पार लगा दूँगा।'

नायिका ने उत्तर दिया—'रे केवट भाई, मुझे ऐसी कलुषित बोली नहीं

भानी। मैंने अपनी सेज पर (तुमसे सुन्दर) सूर्य के प्रकाश की तरह देदीप्य-मान अपने प्रियतम का परित्याग कर दिया, और मुझे वापिस ले जाने के लिए हित-कुटुम्ब, मेरे पुरजन परिजन और मेरे प्रियतम अमुक दूल्हा आ रहे हैं।'

* इस गीत में प्राचीन आर्य संस्कृति का एक क्षीण आभास वर्तमान है, जब आर्य ललनाएँ लाख प्रलोभन मिलने पर भी धर्म से च्युत नहीं होती थीं। गीत की नायिका जब अपने पति से अपमानित होकर नैहर चली तो रास्ते में उसके सौन्दर्य पर एक मल्लाह लट्टू हो गया। इस पर उस सती साध्वी स्त्री ने उस मल्लाह को जो उत्तर दिया वह उसके उच्च चरित्र बल का परिचायक है।

[११]

साँवली सुरतिया बिलोकु सखिया
हे बिलोकु सखिया
जादूवाली अपन जदुआ रचाए रखिह
हे बचाए रखिह
अपन टोनावाली टोनमा सम्हार रखिह
हे सम्हार रखिह
शिर प मउरिया बिलोकु सखिया
हे बिलोकु सखिया
लाल पीत जामा जोरा देखु सखिया
हे देखु सखिया
मुखवा के पनमा बिलोकु सखिया
हे बिलोकु सखिया
जादू भरी अँखिया निहारु सखिया
हे निहारु सखिया

हे सखी, इस साँवरी मूरत को तो देखो। हे सखी, तनिक देख लो।
हे जादूवाली जोगन, अपने अपने तंतर-मंतर रोक रक्खो।
रोक कर रक्खो अपने अपने तंतर मंतर!
हे टोनेवाली जादूगरनी, अपने अपने टोने सँभाल कर रक्खो।

सँभालकर रक्खो अपने अपने दोने। दूल्हे पर कोई वशीकरण टोना ना डालें।

हे सखी, दूल्हे के सिर के मुकुट को तो देखो। तनिक सिर के मुकुट को देख लो।

हे सखी, उनके लाल पीले आभरण को तो देखो। हे सखी, तनिक उन्हें देख लो।

हे सखी, उनके होंठ के पान की लाली तो देखो। हे सखी, तनिक उन्हें देख लो।

और हे सखी, उनकी जादू-भरी आँखें भी देखो! हाँ हे सखी, तनिक उन्हें देख लो।

[१२]

मिथिला नगरिया की चिकनी डगरिया
सखि धीरे धीरे
चले जात दुनु भइया, सखि धीरे धीरे
दाएँ बाएँ गौर श्याम
ठुमुक धरत पाँव, सखि धीरे धीरे
डहरन डहर डगरिया, सखि धीरे-धीरे
निरखत धवल धाम
हरषित कहि कहि ललाम
चिलकत कलस अटरिया, सखि धीरे-धीरे
देखन मह देव योग
हँसि-हँसि कहन लाग, सखि धीरे धीरे
जादू भरी नजरिया, सखि धीरे धीरे

मिथिला नगर की चिकनी डगर पर—जा रहे री सखी, धीरे-धीरे!
दोनों भाई—दाएँ बाएँ
साँवले और गोरे, राम और लक्ष्मण।
री सखी, थम थम कर उठाते हैं पाँव, धीरे धीरे।
शहर की गली-गली और डगर डगर में—

विहर रहे हैं, री सखी, धीरे धीरे !
लो घूर-घूर कर निहार रहे हैं धवल प्रासादों को—
और उसके लावण्य की दाद दे रहे हैं—पुलक पुलक कर !
हेर रहे हैं एक टक अट्टालिकाओं की मुँडेर को—
अपनी चितवन से, री सखी, धीरे धीरे !
लोग हँस हँस कर कह रहे हैं—
देवता के तुल्य हैं वे देखने में।
आह, उनकी आँखें जादू भरी हैं, री सखी, धीरे धीरे !

[१३]

बिजुवन बिजुवन तलिया खनावल
तलिया कॅ चिकनियो माटि हे
ताहि पइसि मालिन कमल रोपावल
भँओरा पइसि रस लिऊ हे
आँखि अइसन देखु दुलरुआ कमल कॅ फुलवा
ओंठ अहाँक लगै बिमफल हे
दाँत अहाँक देखु दुलरुआ
अनार केर दनमा
गरदन शीशा कॅ हार हे
एतना सुरनिया के दुलहा से कौन दुलहा
कोन विधि रहलि कुमार हे
बाबा जॅ हमर दर रे देवनिया
पिनिया जातथि कुँर खन हे
भाय ज हमर जीरा कॅ लदनिया
तेहि सामु रहलि कुमार हे
बाबा जे छोड़लन्हि दर रे देवनिया
पिनिया क्यल कुँर खेन हे
भइया जे छोड़लन्हि जीरा के लदनिया

कथि बिनु आहे अमा चउरवा ने सीझल
कथि बिनु अँखिया ने नींद हे
दूध बिनु आहे बेटी चउरवा ने सीझल
पुत्र बिनु अँखिया ने नींद हे
जाहि दिन आगे बेटी तोहरो जनम भेल
भरला भदउआ के रात हे
दादी तोहर गे बेटी मनहि बेदिल भेल
घर घर ढाकल केवार हे
फूआ तोहर गे बेटा मनहि कुपित भेल
गोरे-सुरे चादर लपटाय हे
माइहो रहिय गाल बोरसि भरवलन्हि
दुख में काटलि रात हे
जाहि दिन आगे बेटी पुत हे जनम लेल
भेल पूर्णिमा के रात हे
दाइ तोहर गे बेटी मनहि हुलसि गेल
घरे घरे खोलल किंवार हे
फूआ तोहर गे बेटी मनहि हरखित भेल
सब सखी सोहर उठाउ हे
बाप तोहर गे बेटी मनहि हरखित भेल
कउड़ी मोहर लुटाउ हे
धुप भरिए बेटी बोरसि भरयलन्हि
सुख सँ काटल आहे रात हे

बेटी ने पूछा—'हे माँ, किस वस्तु के अभाव में चावल नहीं सीझा, और किसके बिना आँख में नींद नहीं आई ?'

माँ ने कहा—'हे बेटी, दूध के अभाव में चावल नहीं सीझा, और पुत्र के बिना आँख में नींद नहीं आई। हे बेटी, जिस दिन तुम्हारा जन्म हुआ, उस दिन

भादों की अँधेरी रात थी। तुम्हारी दादी का चित्त उदास था। उसने घर घर के द्वार बन्द कर शोक मनाये। तुम्हारी फूआ आगबबूला हो गई और सिर से पैर तक चादर लपेट कर सो गई। और, मैंने जंगल के गीले कंडे लेकर अँगीठी जलाई और बड़ी बेचैनी में रात काटी।

लेकिन हे बेटी, जिस दिन मेरे पुत्र का जन्म हुआ उस दिन पूर्ण चाँदनी खिल गई। तुम्हारी दादी बाँसों उछल पड़ी। उसने घर घर के द्वार खोल कर उत्सव मनाये। *तुम्हारी फूआ आनन्द विह्वल हो गई। सखियों ने मिल कर* मंगल गाये। तुम्हारे पिता बड़े प्रसन्न हुए, और कठौता भर मुहरें दान कीं। और हे बेटी, मैंने सुगन्धित धूप भर कर अँगीठी जलाई तथा बड़े सुखपूर्वक रात काटी।'

[१६]

निम्न लिखित गीत (विवाह के बाद दूल्हा के विदा होने के समय) कन्या पक्ष की ओर से गाया जाता है—

आज दैव विहि बाम हे सखि
मोहि तेजि पहुँ चलल गाम
पहु भेल हृदय कठोर हे सखि
घूरि ने तकय मुख मोर
जाहि बन सिकियो ने डोल हे सखि
ताहि बन पिय हँसि बोल
भनहि 'विद्यापति' भान हे सखि
पुरुषक नहि विश्वास

हे सखी, आज विधाता वाम हो गये। प्रियतम मेरा परित्याग कर अपने गाँव जा रहा है।

हे सखी, प्रियतम कितने निठुर हैं कि पीछे घूर कर एक बार देखते तक नहीं।

हे सखी, जिस वन में तृण तक नहीं हिलते, उस निबिड़ स्थान में मेरा प्रियतम हँस कर बोल रहा है।

कवि 'विद्यापति' कहते हैं—'हे सखी, पुरुष के प्रेम का विश्वास नहीं।'

नचारी

'नचारी' के गाने का कोई ख़ास मौसिम, कोई ख़ास मुहूर्त नहीं। अन्त:पुर में सूनी सेज पर, बेटी के विवाह के अवसर पर, पावस ऋतु में खेतों की मेंड़ पर, संध्या और प्रात काल चौपाल में बैठ कर प्राय हर समय 'नचारी' गाया जाता है। भुक्खड़ और भिखमगे साधु समर्थ गृहस्थों के द्वार पर इन्हें गा-गाकर भीख माँगते हैं, और शिव की प्रार्थना की ओट में अपनी आर्थिक दुरवस्था का नग्न चित्र खींच कर श्रोताओं में करुणा का भाव जागृत करते हैं। इसलिए इन गीतों में श्रमजीवी किसान और मज़दूरों का दर्द भरा हुकार भी सुनने को मिल जाता है।

'नचारी' शैली के गीतों में शिव की उपासना का भाव बड़ी उत्कृष्ट रीति से निरूपित हुआ है। किसी-किसी पद में शिव की बरात का उल्लेख किसी किसी में उनके स्वभाव चरित्र और रहन सहन का परिचय, किसी किसी में उनके ताँडव नृत्य का चित्रण और किसी किसी पद में कवियों ने दार्शनिक और धार्मिक आदर्शवाद का स्तर निर्धारित किया है। हाँ आत्म-निवेदन, स्तुति और आत्मबोध का भाव प्रबल हो जाने के कारण इनमें दर्शन का रंग गहरा नहीं है।

अक्सर कन्या-पक्ष की तरफ़ से दूल्ह शिव को दुलहिन पार्वती से हीन और लघु प्रदर्शित करने का प्रयास किया जाता है। और यह सब गहरे व्यंग्य के रूप में इतनी कुशलता से कहा गया है कि उन्हें पढ़ते ही बनता है। पदावली में यत्र तत्र सरल और शिष्ट हास्य का भी पुट मिलता है। जहाँ इस तरह के पदों में प्रयुक्त शब्दावलियाँ अपनी व्यंजनावृत्ति के द्वारा दूल्हे के रूप रंग और उसके हृदय की न जाने कितनी भावनाओं का मनोवैज्ञानिक अध्ययन उपस्थित करती हैं, वहाँ दूसरी ओर मैथिल स्त्रियों के तर्जवशान और उनकी अनोखी भाव-भंगिमा का सूक्ष्म रेखा चित्र भी खींचती है। इन दोनों बातों का इतना सफल

समन्वय अन्यत्र कम देखने में आता है। सरल भाव विश्लेषण और स्वाभाविक विदग्धितापूर्ण वर्णन 'नचारी' गीत शैली की सबसे बड़ी व्याख्या है।

यहाँ इस शैली के कुछ मधुर सुन्दर गीत दिये जाते हैं—

[१]

आजु नाथ एक व्रत महा सुख लागत हे
तोहें शिव धरू नट वेष डमरू बजाबहु हे
तोहे गौरि कहैछह नाचए हम कोना नाचब हे
चारि सोच मोरा हाय कोना सिंध बाँचत हे
अमिय चुविय भूमि खसत बघम्बर जागत हे
होयत बघम्बर बाघ बसहा के खायत हे
सिर सों ससरत साँप दहो दिशि जायत हे
कात्तिक पोसल मयूर से हो ने धरि खायत हे
जटा सों छिलकत गंग भूमि पर पाटत हे
हेत सहस मुख धार समेटियो ने जायत हे
रुण्डमाल टूटि खसत मसानी जागत हे
तोहे गौरि जएबह पराए नाच के देखत हे
भनहिं 'विद्यापति' गाओल गावि सुनाओल हे
राखल गौरी केर मान चारि बचाओल हे

हे शिव, आज एक महान त्योहार का मुहूर्त्त है। तुम नटराज का वेष धारण करो, और डमरू बजा कर ताडव नृत्य करो।

हे गौरी, तुम नृत्य करने का अनुरोध करती हो। नृत्य कैसे करूँ? सोच समझ लो। चार प्रकार की चिन्ताएँ नृत्य में बाधक होंगी।

नृत्य के वेग के कारण अमृत की बूँदें टपक कर पृथिवी पर गिरेंगी जिनके स्पर्श मात्र से निर्जीव व्याघ्र चर्म सजीव हो उठेगा, और बैल को खा जायगा।

जूड़े में लिपटा हुआ सर्प सरक कर दशों दिशाओं में दौड़ पड़ेगा, और कार्तिक का पालतू मयूर उसे पकड़ कर निगल जायगा।

गठीली जटाओं में विराजमान गंगा सहस्र-सहस्र धाराओं में पृथिवी पर फूट

बहेगी, जो लाख सँभालने के बावजूद भी काबू में नहीं आयेगी।

गले की रुण्डमाल टूट कर बिखर जायेगी, और साथ में भूतों की असंख्य सेना नाचने लगेगी।

ऐसी दशा में हे गौरी, तुम डर कर भाग जाओगी। नृत्य कौन देखेगा?

हे सखी, 'विद्यापति' ने यह पद्य गाया है। गा कर सुनाया है। सुनती हूँ, शिव ने गौरी की प्रार्थना स्वीकार कर ली, और उन चार बाधाओं का निराकरण कर अपना विकट नृत्य दिखलाया।

शिव नृत्यों में तीन विशेष प्रसिद्ध हैं

[१] हिमालय का सान्ध्य नृत्य

[२] हिमालय का ताण्डव नृत्य

[३] चिदम्बरम् का नदान्त नृत्य

पहला, सान्ध्य वेला में गौरी को सिंहासन पर बिठा कर कैलाश पर्वत पर शिव नृत्य करते हैं। यह शिव की सात्विक वृत्ति का नृत्य है।

दूसरा नृत्य ताण्डव तामसिक वृत्ति का सूचक है। इसका स्थान श्मशान भूमि है। गीत में इस विकट नृत्य की ओर संकेत मात्र किया गया है।

तीसरा नृत्य नदान्त है। इसका उल्लेख दाक्षिणात्य लोक गीतों में मिलता है।

[४]

सुनिअन्हि हर बड़ सुन्दर
आब देखिअन्हि विभूति भयङ्कर
सुनिअन्हि हर चढ़ताह रथ पर
आब देखिअन्हि बूढ़ बरद पर
सुनिअन्हि पहिरथि पटम्बर
आबे देखिअन्हि फाटल बघम्बर
सुनिअन्हि गारा मोती माल लय
आब देखिऔन्ह रुद्रक हार लय

सुनती थी शंकर बड़े सुन्दर हैं। लेकिन देखती हूँ—भयंकर विकराल स्वरूप।

सुनती थी, शंकर रथ पर आयेंगे। लेकिन देखती हूँ—बूढ़े बैल पर।

सुनती थी, शकर पीताम्बर पहनते हैं। लेकिन देखती हूँ फटा हुआ व्याघ्रचर्म। सुनती थी, शकर के गले में मोती का हार है। लेकिन देखती हूँ—रुद्राक्ष।

[३]

उमा कर वर बाउरि छवि घटा
गला माल रुण्डमाल बसन तन
बूढ़ बयल लटपटा
भसम अग शिर गग तिलक शशि
बाल भाल पर जटा
अति सुकुमार कुमार मोरि गिरिजा
वर तुन्दा पेट सटा
कहत 'कारनाट' सुनिय मनाइनि
काहे करत निव खटा

उमा का दूल्हा बौराहा और देखने में अत्यन्त कुरूप है। उसके गले में मुण्ड माल कमर में व्याघ्र चर्म और सवारी के लिए एक लटपटा बूढ़ा बैल है।

उसके अग प्रत्यग में भस्म है। मस्तक पर गगा विराजमान है। जूड़े के ऊपर द्वितीया का चाँद है। योगियों की ऐसी उसकी जटाएँ हैं।

हे सखी, मेरी बेटी गिरिजा अत्यन्त सुकुमार है। लेकिन उसका दूल्हा बूढ़ा है। उसके पेट में पेट सटा है।

कवि 'कारनाट' कहता है हे मनाइन, सुनो। दिल छोटा मत करो। तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी।'

[४]

हम नहि आजु रहब एहि आङ्गन
जौं बुढ़ होयता जमाय
एक तँ वैरि भेल विध विधाता
दोसर धिआ केर बाप
तेसर वैरि भेल नारद ब्राह्मण
जेहि लायल बूढ़ जमाय

धोती लोटा पोथी पतरा
से हो सब लेबैन्ह छिनाय
जौं किछु बजताह नारद ब्राह्मण
दाढ़ी धय घिसिआय
ऐपन निपलन्हि पुरहर फोड़लन्हि
फकलन्हि चउमुख दीप
धिया लय मनाइनि मन्दिर पैसलि
केओ जनु गाबय गीत
भनहिं 'विद्यापति' सुनिय मनाइनि
इहो थिक त्रिभुवननाथ
शुभ शुभ कय गौरि विआहिय
इहो वर लिखल ललाट

यदि मेरा दामाद बूढ़ा हुआ तो आज हम आँगन में नहीं रहूँगी।

एक तो विधाता टेढ़ा है। तिस पर कन्या का बाप भी दुश्मन हो गया। एक और दुश्मन है— ब्राह्मण नारद जो हाथ धोकर पीछे पड़ गया है, और निपट बूढ़ दामाद ढूँढ़ लाया है।

उसकी धोती, पोथी, लोटा, पत्रा सब छीन लूँगी। यदि उसने रोब दिख लाया तो दाढ़ी पकड़ कर उसे घसीटूँगी।

वेदी लोढ़ दी गई। पुरहर[1] फोड़ दिया गया। चौमुख दीप फेंक दिया गया। मनाइन कन्या को लेकर मन्दिर में जा बैठी। गायिकाओं ने गाना बन्द कर दिया।

'विद्यापति' कहते हैं—'हे मनाइन[2] सुनो। शंकर तीनों लोक के देवाधिदेव हैं। खुशी खुशी गौरी का विवाह कर दो। गौरी के भाग्य में यही दूल्हा विधाता ने लिख दिया है।'

[1] जल से भरा हुआ मिट्टी का कलश। [2] विधि व्यवहार और गानों का तजरबाकार औरत।

हे भोला बाबा केहन कयला दीन
खेती पथारी भोला से हो लेला छीन
भाई सहोदर से हो मे गेल भीन
घर म न खरची बाहर न मिले रीन
गाँव के मालिक न पड़ै दइय नीन
एके गो लोटा छलइ भाइ भेलइ तीन
पनिया पिबइत काल होइय छिनाछीन
एक गो बैल बच गेल महाजन लेलक रीन
कर कुटुम्ब सब भेलइ परमीन

ओ भोले शंकर, तुमने मेरे दिन कितने दुखद बनाये ?

जो थोड़ी बहुत खेती बाड़ी थी, वह भी तुमने छीन ली। और तो और, सगे भाइयों ने भी मुझसे बँटवारा कर लिया। घर मे खर्च नहीं है। बाहर ऋण नहीं मिलता। गाँव का जमींदार रात में चैन की नींद नहीं सोने देता। एक लोटा है, और भाई तीन है। अत: पानी पीने के वक्त छीना झपटी होती है। एक बैल बच गया था, जिसको महाजन ने ऋण मे हड़प लिया। हाय ! हित मित्र और सगे सम्बन्धी सब पराये हो गये।

[६]

योगिया के लालि लालि अँखियान ह
जइसे चम्पा के फूल
ए जी वइसने जे हमरो सुन्दरियान ह
दुनु तालमतूल
जोगिया के गोर में रुँदऊआ शोभै हे
हाथ शोभै करतार
ए जी मुखवा म मोहिनि रमुलियान ह
मोहे जग ससार
जोगिया के शोभैन मृगछालान ह

हमरा   पट   चीर
ए जी दुनु के मिश्रएवदन गुदरिआन हं
होयबइ सगे रे शरीर

योगी की लाल-लाल ऑखें हैं, जैसे चम्पा के फूल। हे सखी, मेरी कुसुम्भी* चुँदरी भी ठीक उन्हींतरह लाल है।

योगी के पैर में खड़ाऊँ और हाथ में कठताल है। मुख में मोहिनी बाँसुरी है जिसकी मीठी तान पर सारा संसार मुग्ध है।

हे सखी योगी के शरीर में मृगछाला सुशोभित है, और मेरी कमर में रेशमी घेरदार घाघरा। मैं दोनों को जोड़ कर गुदड़ी सिलाऊँगी और योगी के साथ ही जोगन हो जाऊँगी।

[७]

दूर   दूर   छीआ
पहन न सग कोना रनित धीआ
दूर   दूर   छीआ
पहन गौराहा सग कोना जयती धीआ
दूर   दूर   छीआ
पाँच   मुख   शोभिछैन
तीन   अँखिया
दिगम्बर वेष देखि फाट मोरा हिया
दूर   दूर   छीआ
जाँघ   तर   भाड़ी   शोभैन
धथुर   क   बीआ
सह सह करैछैन साँप मणिया
दूर   दूर   छीआ
भाँग केर मोटरी हरीम केर बीआ
ओढना बाघम्बर छैन
फाटे   मोरा   हिया

धान लेलथिन दुब लेलथिन
आग्रार लेलथिन दिया
सासु जे परीछन चललनि
साँप कलकैन 'फू' आ
दूर दूर छाआ
जा इ सर्पा विष लागत मोर धीआ
कोहबर में मोर जैतन
असारथ जनम नीआ
दूर दूर छाआ
भनहि 'पद्मापात' सुनु सखिया
गौरी के लिखल छन दुरगा अटमन लिया
दूर दूर छाआ

छी ! दूर ! दूर !! (व्यंग्य और घृणासूचक अभिव्यक्ति)

एस अवगुन—दिगम्बर के साथ मेरी बेटी कैसे रहेगी ?

ऐसे बौराहा के साथ मेरी पार्वती कैसे जायगी ?

दूर ! दूर ! छी !!

दूल्हे के पाँच मुख हैं तीन नेत्र। उसका नङ्ग धड़ङ्ग रूप देख कर कलेजा फट रहा है। उसकी काँख के नीचे झोली है। उसमें धतूर के बीज हैं। हे सखी, उसके समस्त शरीर में सर्प सहर सहर कर रहा है।

छी ! दूर ! दूर !!

उसकी बगल में भंग की झोली है, और उसमें अफ्यून के बीज। ओढ़ने के लिये व्याघ्र चर्म है जिसे देख देख कर मेरा कलेजा फट रहा है।

छी ! दूर ! दूर !!

दूल्हे की सास धान के नवीन अङ्कुर हरित दूर्बादल और दीपक जलाकर परिछन करने चली कि सहसा सर्प ने फन फैला कर क्रोध से 'फू' किया।

हे सखी, संयोगवश यदि सर्प ने मेरी बेटी को डँस लिया तो कोहबर में ही उसकी अकाल मृत्यु होगी, और उसके प्राण व्यर्थ जायेंगे।

छी ! दूर ! दूर !'

कवि 'विद्यापति कहते हैं—'हे सखी, गौरी के ललाट में विधाता ने वृद्ध पति लिख दिया। कोई दूसरा क्या करे ?'

[८]

सब टा खाइय गेलै न भाग
पूजि गेलैन बसहा
बिवाइय गेलैन भाग
सब टा खाइय गेलेन भाग
कार्त्तिक गणपति दुनु छैन नदान
बसहा के सग म रहैछथ बुद फान
सब टा खाइय गेलैन भाग
घुरि फिरि अग्रोतन खोजतन भाँग
किछु शोन छैन अब कि करताह महान
मागि चागि अयतन उठैतम तूफान
बैल सब खाइय गेलैन
मचौतन घमासान
सब टा खाइय गेलैन भाग
भनहिं 'विद्यापति' सुनु हे मनाइन
तेहला कि करबैन
आनि लैतन भाग
सब टा खाइय गेलैन भाग

बैल भंग खा गया। बैल सुन गया, और भंग को बनी हुई पत्ती चबा गया।

बैल सब भंग खा गया।

कार्तिक और गणेश—शिव के दोनों लड़के बड़े लापरवाह हैं। बैल के साथ कूद फाँद करने में ही वक्त गुज़ार देते हैं, और भंग की निगरानी नहीं करते।

बैल सब भंग खा गया।

थोड़ी भी भंग नहीं बची। अब दिगम्बर शिव क्या लेकर रहेंगे?

बाहर से जब वह माग चागकर लौटेंगे, तो आज ज़मीन आसमान एक कर देंगे।

हाय! बैल सब भंग खा गया। नशाख़ोर शिव आज सिर पर आसमान उठा लेंगे।

विद्यापति' कहते हैं—'हे मनाइन चिन्ता मत करो। वह पुन माग चाग कर भंग ले आयेंगे।'

[६]

वर देखि सब क लागल टकाटक
विधि ककरा न सक
पाँच मुख, तीन नेत्र
आग भभा भक
चन्द्रमा ललाट शोभित गंगा भकाभक
कओ जान मोट डाट केओ लकालक
भूत पिशाच देखि सखी लटापट
विधि ककरा न सक
भनहि 'विद्यापति' सुनु हे मनाइन
गौरी बड़, तप केलन
पेलन एहन वर
विधि ककरा न सक

दूल्हे की सूरत देखकर सब की टकटकी बँध गई। हे सखी, ब्रह्मा की लकीर को भला कौन टाले?

शिव के पाँच मुख हैं, तीन नेत्र। अंग प्रत्यंग में भभूत भक भक खिल रहा है। ललाट में द्वितीया का चाँद और गंगा विराजमान है।

हे सखी, ब्रह्मा की लकीर को भला कौन टाले?

बरातियों को तो देखो। कोई उनमें हृष्ट पुष्ट है। कोई दुबला पतला। भूत

पिशाचों की भयावनी जमात को देखकर उमा की सभी सखियाँ एक दूसरे को पीछे की ओर ढकेलती हुई डर के मारे भागने लगीं।

कवि 'विद्यापति' कहते हैं—'हे मनाइन, सुनो। गौरी ने बड़ी कठिन तपस्या की है। फलस्वरूप उसे एसा सुभग दूल्हा मिला है।'

[४०]

माइ हे अजगुत भेल
गोरी क उचित वर विधि नहि देल
तेल फुलेल शिव क
कोवर रखि देल
लगावे के बेर शिव
भसम लेप लेल—माइ हे अजगुत भेल
पेड़ा जलेबा शिव क
कोवर राख देल
भोजन के बेर शिव
भाग पिबि लेल—माइ हे अजगुत भेल
तोसक गलइचा शिव क
कोवर रखि देल
सुत के बेर शिव
मृगछाला रखि लेल—माइ हे अजगुत भेल
हाथी घोड़ा शिव क
बाम्हल रहि गेल
चढे के बेर शिव
बसहा चढि लेल—माइ हे अजगुत भेल

हे सखी आश्चर्य की बात है कि गौरी को, उसके उपयुक्त दूल्हा विधाता ने नहीं दिया।

शिव के कोहबर घर में तेल फुलेल रख दिये गये। लेकिन उनने तेल फुलेल न लगा कर अंग-प्रत्यंग में भस्म लेप लिया।

जलेबी और पेड़े शिव के कोहवर घर में रख दिये गये। किन्तु, खाने के वक्त उनने खूब छक कर भंग छान ली, और नशे में गर्क हो गये।

शिव के कोहवर-घर में तोशक और गलीचे बिछा दिये गये। किन्तु, सोने के वक्त उन्होंने मृगछाला बिछा ली।

हे सखी, उनकी सवारी के लिए हाथी और घोड़े बाँधे ही रह गये। और विदा होने के वक्त उनने बैल पर सवार होकर यात्रा की।

[१९]

अति बुड वर भेल
गौरी के मनक बात मने रहि गेल
अति बुड वर भेल
बुड़बा भुतनी सग करए कलोल
गौरी के भाग ओ विलास रहि गेल
अति बुड वर भेल
कतहुँ जगह नहि साँप क लेल
देखिनो म छथि अकलेल चकलेल
अति बुड वर भेल
एहन धिया के इहो वर किय भेल
हृदय विचारि कोना विधिना देल
अति बुड वर भेल

हे सखी, उमा का व्याह अत्यन्त वृद्ध दूल्हे से हुआ। उमा के मन की बात मन ही में रह गई।

हे सखी, एक ओर उसका बूढ़ा दूल्हा भूतनियों के साथ प्रेम क्रीडा करता है। दूसरी ओर हमारी प्यारी सखी उमा भोग विलास से विरक्त होकर और भस्मशायिनी बन कर दिन रात तप करती है।

हे सखी, उसके दूल्हे का स्वभाव इतना विचित्र है कि जब सर्पों के बैठने के लिए अन्यत्र स्थान नहीं मिलता तो वे उसीके अंग अंग में लिपट कर विश्राम लेते हैं।

देखने में भी वह उजबक, निरा गोबरगणेश है।

समझ में नहीं आता कि आखिर विधाता ने क्या सोच कर ऐसी सुन्दर कन्या की तकदीर में ऐसा उजबक दूल्हा लिख दिया।

[१२]

गौरी दुख भोगता—
भंगिया के संग गौरी दुख भोगती
दिन दिन भंगिया ला भांग पिसती
गौरी दुख भोगती
रैन नहि चैन कखन सुतती
भीख मांग लयथिन धान कुटती
माँड संग गील भात कोना खेती
गौरी दुख भोगती
पूजन बसहा डाँट धरती
एकसर घर में कोना रहती
गौरी दुख भोगती
सासु ससुर मुख न जनती
ओरहन सुनि सुनि नित कनती
गौरी दुख भोगती

बेचारी गौरी दुख भोगेगी। अपने भंगेड़ी पति के साथ गौरी दुख भोगेगी।
नित्य नियमपूर्वक अपने भंगेड़ी पति के लिए भांग पीसेगी। गौरी दुख भोगेगी।
उसे पल भर के लिए भी विश्राम नहीं मिलेगा। जाने वह कब सोयेगी?
इधर उधर से भिक्षाटन कर भीख लायेगी, और धान कूटेगी।
न जाने वह किस प्रकार माँड़ के साथ गीला भात खायेगी?
जब इसके पति का बूढ़ा बैल खुल जायगा, तब वह उसे डाँट डपट कर खूँटे से बाँधेगी, और घर में अकेली ही सोयेगी।

सास ससुर के शायद वह मुख भी न जान सकेगी। उल्टे उलाहना सुन कर नित्य बिसूर बिसूर कर रोयेगी।

वरदा न बाँधे गौरा तोर भगिया
गौरा तोर भगिया
अँगने अँगने खाए पथार
रोम गेलहुँ भुकि भुकि मार
एक मन होए शिव के दियैन उपराग
देहरि बैसल छथिन बासुकि नाग
कार्तिक गनपति दुइ चरवाह
इ हो दुनु बालक बरद हराह
भनहि 'विद्यापति' सुन हे समाज
इ हो दुनु वेकति के एको के ने लाज

हे गौरी, तुम्हारा भंगेरी पति बैल भी नहीं बाँधता।

तुम्हारे भंगेरी पति का बैल हमारे आँगन में घूम-घूम कर पथार खा जाता है। जब उसे डपट कर भगाना चाहती हूँ, तब वह सींगें झाड़ कर मार बैठता है।

सोचती हूँ कि शिव को उलाहना दूँ, लेकिन उनकी देहली पर भयंकर नाग फन फैला कर बैठा है।

कार्तिक और गणेश—ये दोनों बैल के चरवाहे हैं, किन्तु अभी दोनों बच्चे हैं। और बैल मरखहा है।

कवि 'विद्यापति' कहते हैं—'हे समाज के सभ्य पुरुष, सुनो। दम्पति शिव और पार्वती दोनों में एक के भी शर्म नहीं है। दोनों-के दोनों निर्लज्ज हैं।'

[१४]

कहलो ने जाइछइ भोला विपति के हाल
भोला विपति के हाल
माय बाप धय गेलक फिकिर जजाल
नारी निन घर मेलइ नरक समान
भोला विपति के हाल

एक टा पुतर छिरा तिनि जेहन काल
राजा नगर से त दिहलन निकाल
रोजी पूँजी छीन लेलक घर धन माल
वन-वन डोलु शिव नामी कगाल
सुनि तेरो नाम जस दिन प्रतिपाल
तोहर चरन पर टेकब कपाल
भनहि 'विद्यापति' सुन हे कगाल
एक बार भोला हेरथुन हो जयब नेहाल

हे शिव, अपने दुख की बात कहीं भी न जानी। माँ बाप मुझ पर चिन्ताओं का बोझ लाद कर स्वयं विदा हो गये।

स्त्री के बिना घर नर्क के समान प्रतीत होता है। एक पुत्र है, जो साक्षात् यम का स्वरूप है।

राजा ने नगर से निर्वासित कर दिया। उसने मेरी रोजी पूँजी हड़प ली, और धन दौलत लूट ली।

हे शिव मैं वन-वन डोल रहा हूँ। मैं मशहूर कगाल हूँ और तुम हो दीन बन्धु। अब मैं नित्य तुम्हारे ही चरणों की वन्दना करूँगा।

कवि 'विद्यापति' कहते हैं—'हे कगाल, सुनो। यदि एक बार भी शिव तुम्हारी ओर देख देंगे तो तुम्हारा दुख दारिद्र्य दूर हो जायगा।'

[२५]

बइजनाथ दरबार में हम त खुशी सँ रहबइ ए
कोई माँगे अन धन सोना
कोई माँगे रूप
कोई माँगे निरमल काया
कोई माँगे पूत
ब्राह्मण माँगे अन धन सोना
वेश्या माँगे रूप
कोढ़िया माँगे निरमल काया

बाँझिन माँगे पूत—हम त खुशी सँ रहबइ ए
कथिए लागि अन धन सोना
कथिए लागि रूप
कथिए लागि निरमल काया
कथिए लागि पूत—हम त खुशी सँ रहबइ ए
लुटबै लागि अन धन सोना
देखबै लागि रूप
तीर्थ चलएला निरमल काया
जल भरि लावए पूत हम त खुशी सँ रहबइ ए

वैद्यनाथ—शंकर के दरबार में मैं प्रसन्नता से रहूँगा।

कोई अन्न धन और सोना माँगता है। कोई रूप माँगता है। कोई स्वस्थ शरीर माँगता है, और कोई पुत्र की याचना करता है।

शंकर के दरबार में मैं प्रसन्नता से रहूँगा।

ब्राह्मण अन्न धन और लक्ष्मी माँगता है। वेश्या रूप माँगती है। कोढ़ी स्वास्थ्य माँगता है, और बाँझिन पुत्र की याचना करती है।

मैं शंकर के दरबार में प्रसन्नता से रहूँगा।

किसलिए अन्न धन और सोना है?

किसलिए रूप?

किसलिए स्वस्थ शरीर है?

और, किसलिए पुत्र?

अन्न धन और सोना दान करने के लिए है।

रूप देखने के लिए है।

स्वस्थ शरीर तीर्थ-यात्रा करने के लिए है।

और प्यासे को जल पिलाने के लिए पुत्र है।

[१६]

शुभ दिन लगन विआहन गौरा बनि ठनि दुलहा अएला हे
कंठ गरल उर नर सिरमाला अगनाग लपटैला हे

भाल तिलक शशिपाल लगाला जटा में गंग बहैला है
वृद्ध बरद असवार महाशिव डमरु डिमिक बजैला है
भूत प्रेत डाकिन साकिन संग नागिन नाच नचैला है
अधरा बहिरा लगरा लुल्हा भगानन भेस धरैला है
स्वान सूअर सियार मुखानन सम खरआनिया लैला है
नगर निकट चलि आये हैं गज रथ अगुआनन अगुऐला है
नजर परल नर नारि भयंकर सबही विकल परैला है
साहस धार सब सखियन सँग मिलि मैना परिछन कैला है
नाग छुटल फुफकार डरैला खसल परत धर आगला है
कुछ दरक लसा हुलसन छुनिया शिव रनवास मैला है
ब्याह उछाह उमा शिवशंकर विशेश्वर पद गैला है

शंकर पूर्व निश्चित मंगलमय लग्न पर गौरी को ब्याहने के लिये दूल्हा बन कर आये।

कंठ में गरल हृदय प्रदेश पर मनुष्य के मुण्ड की माला अंग प्रत्यंग में भयंकर सर्प ललाट पर द्वितीया के चाँद का तिलक और बड़ी बड़ी जटाओं में गंगा की धारा—इस वेश भूषा में बन ठन कर शंकर दूल्हे के रूप में आये।

वह एक बुड्ढे बैल पर सवार हैं। डिम डिम डमरू बजा रहे हैं। उनके साथ में भूत, प्रेत, डाकिन और शाकिन का असंख्य दल नृत्य करता हुआ आ रहा है। उनमें कितने अन्धे हैं। कितने बहरे। कितने लंगड़े और लूले हैं। बहुरूपिये सा विविध प्रकार के वेश धारण कर वे आ रहे हैं। उनमें कितने के मुख कुत्ते के हैं। कितने के मुख सूअर के और कितनों के स्कन्ध पर गीदड़ और गदहे का मुख जड़ा है।

नगर के निकट आने पर वे सब हाथी, घोड़ और रथ पर सवार हो हो कर दूल्हे के आगे-आगे चलने लगे।

जब कन्या पक्ष के लोगों की दृष्टि इस विचित्र दृश्य की ओर आकृष्ट हुई, तो वे डर कर सिर पर पाँव रख कर भागे।

अन्त में कन्या की माँ मैना ने हिम्मत करके सखियों को साथ लेकर दूल्हे

का परिछन किया। इतने मे नाग ने फन फैला कर भयंकर फूत्कार किया और वे भयभीत हो कर गिरती पड़ती भाग खड़ी हुई।

उधर दूल्हा बरातियों को साथ लेकर प्रसन्न चित्त से जनवासे लौट गया।

'विशेश्वर' ने उमा और शंकर के विवाहोत्सव की उमंग मे यह पद गाया है।

[१७]

शिव एम्हर[1] मुनि जाऊ
एम्हर मुनि जाऊ भोला
एम्हर मुनि जाऊ
पानी लिऊ पैर धाऊ
बाघम्बर बिछाऊ
डमरू बजाऊ नाच देखाऊ
अहाँ तन रहुँ जाऊ
कूड़ा लिऊ साटा लिऊ
भाग घोटवाऊ[2]
एक लोटा रिबिलिऊ[3]
तब रहु जाऊ
भोला एम्हर मुनि जाऊ
दाल लिऊ चाउर लिऊ
खिचरी बनाऊ
हमरा परमेश्वर छथिन[4]
अहाँ आपेग खाऊ
शिव एम्हर मुनि जाऊ
एम्हर मुनि जाऊ शिवजी
एम्हर मुनि जाऊ

[1] यहाँ। [2] जल के साथ बार-बार रगड़ कर और बारीक पीस कर परस्पर मिलाना। [3] पी लो। [4] है।

[१८]

बम वैद्यनाथ गौरी वर
भेला चाकर राम हे
चाकरी में बाग लगाएब
लोटि-लोढि गुलजुन्वा लाएब
ओहि[1] फुलवा कें हार बनाएब
पारवती पहनाएब
पारवती पति आज्ञा पाएब
गंगाजल भरि लाएब
बाबा वैद्यनाथ मस्तक पर
शिसियन ढारि चढ़ाएब[2]
बाबा चाकर राम हे
चाकरी में परसन पाएब
परसन[3] पाएब खरची
राम नाम जागीरी पाएब
तीन वान के अरजी

[१९]

अद्भुत रूप योगी एक देखल
डमरू देल बजाय गे माई
गाल छुइन चकोटल
मुँह छुइन चकोटल
मुँह मधे एको गो ने दाँत गे माई
धऊँसे देह बुढ़वा के घर-घर कँपइन
पुरुष बड भोगिआर गे माई

[1] उम। [2] शीशियों से जल उँडेल कर पूजा करूँगा। [3] स्पर्श करने से

आगे माई तोड़ि देवइनि रूद्रमाला
फोड़ि देवइनि डमरू
टुक टुक करबइन बघछाल गे माई
अद्भुत रूप योगी एक देखल
डमरू देल बजाय गे माई

हे सखी, आज मैंने एक विचित्र योगी देखा है जो डमरू बजा रहा था।

उसके गाल भीतर की ओर धँसे हुए हैं। मुँह सूखा हुआ है। उसके मुँह में एक भी दाँत नहीं है। उस बुड्ढे के अंग प्रत्यङ्ग काँप रहे हैं। (फिर भी) वह देखने में आकर्षक लगता है।

हे सखी, उसकी रुद्रमाल तोड़ डालूँगी। उसका डमरू फोड़ डालूँगी। और उसके व्याघ्र चर्म फाड़ कर चिथड़े-चिथड़े कर दूँगी।

हे सखी, आज मैंने एक विचित्र योगी देखा है जो डमरू बजा रहा था।

[२०]

केहि खोजल वर केहि ढूँढल वर
केहि बूढ लयला बोलाय गे माई
केकरा कहल बूढ चऊका चढ़ि बइसल
केकरा से होइछइन विआह गे माई
इजमे खोजल वर बाभन ढूँढल वर
बबे बूट लयलन बोलाय गे माई
अगुए कहल बूढ चऊका चढ़ि बइसल
गौरी से होयत विआह गे माई
केकरा के मारू केकरा गरिआऊ
केकरा के पँसिया चढाऊ गे माई
इजमे के मारू बभने गरिआऊ
बबे के पँसिया चढाऊ गे माई
कओन कओन धन छओ आहे बूढ वर
कथि लागि करइछा विआह गे माई

धन मे धन हए गोला वरदवा
खेत मधे उपजय भाग गे माई
मरथु हजमा हे मरथु ब्राह्मण
मरथु निर्दय बाबा गे माई
द्वार दगरे पिलुआ अगुआ के परउन
जिनि वर खोजलन भिखार गे माई

हे सखी, किसने बुड्ढे दूल्हे की तलाश की ? किसने बुड्ढे दूल्हे को ढूँढ़ कर पसन्द किया ? किसकी अनुमति से यह बुड्ढा दूल्हा विवाह मंडप की वेदी पर बैठ गया ? और किस रूपवती कन्या से इसका ब्याह होनेवाला है ?

हे सखी हज्जाम ने बुड्ढे दूल्हे की तलाश की। ब्राह्मण ने बुड्ढे दूल्हे को ढूँढ़ कर पसन्द किया। अगुवे की अनुमति से यह बुड्ढा दूल्हा विवाह की वेदी पर बैठा, और रूपवती गौरी से इसका ब्याह होनेवाला है।

हे सखी किसे मारूँ ? किसे गाली दूँ, और किसे फाँसी की तख्ती पर चढ़ाऊँ ?

हे सखी, हज्जाम को मारो। ब्राह्मण को गाली दो, और अपने बाबा को फाँसी की तख्ती पर चढ़ाओ।

रे बुड्ढा दूल्हा, तुम्हारे पास कौन कौन सी सम्पत्ति है, और तुम क्यूँ ब्याह कर रहे हो ?

मेरे पास धन से धन एक गोला बैल है, और जो कुछ थोड़ी बहुत खेती बाड़ी है उसमें भग की फ़सल (अच्छी) होती है।

यह सुन कर कन्या ने कहा—'वह हज्जाम मर जाय, वह ब्राह्मण मर जाय मेरा वह कठोर हृदय बाबा भी मौत की दाढ़ में चला जाय, और अगुवे के अग अग में कीड़े पड़ जायँ जिसने ऐसा लम्पट और भिखमंगा दूल्हा मेरे लिए तलाश किया।'

[२१]

आइ बुढा रूसता गे माई
हमरो बूढ़ दिगम्बर हर
आइ रूसता गे माई

काटल भाग रहए आँगन म
बसहा गेल चिबाई
जगनहे सुनताह बुढा दिगम्बर
करत मे महा लराई—आइ बुढा रुसता ग माइ
पीसल भाग रहे कुंडी मे
गणपति देलन हेराई
जगनहे अग्राताह बुढ़ा दिगम्बर
करब मे कन्नोन उपाई—आइ हर रुसता गे माइ
आँगि तर्रार बुढा देल दमसाई
गणपति गेला पराई
चहुँ दिशि खोजथिन बुढ़ा दिगम्बर
कोई न देत बताई—आइ बुढ़ा रुसता ग माइ

हे सखी, आज बुड्ढे शंकर रूठ जायेंगे। मेरे बुड्ढे दिगम्बर पति आज रूठ जायेंगे।

कटी हुई भग आँगन मे रखी थी, उसे बैल चबा गया।

बुड्ढे दिगम्बर को इसकी खबर मिलेगी, तो वह आगबगूला हो जायेंगे।

पीसी हुई भग कुंडी में रखी थी। गणेश ने कुल की कुल ज़मीन पर गिरा दी। बुड्ढे दिगम्बर आयेंगे तब मै क्या जवाब दूँगी ?

जब बुड्ढे दिगम्बर को इसकी खबर मिली तब उनने क्रोधित होकर गणेश को फटकारा। गणेश नौ दो ग्यारह हो गये। वह उसे चारों ओर ढूँढने लगे। लेकिन कोई उन्हे उसकी टोह नहीं बतलाता।

हे सखी, आज बुड्ढे शंकर रूठ जायेंगे।

[२२]

अनका जे देथ शिव अपने भिखारी
अनका के अन धन सम्पत्ति नारी
अनका के कोठा कोठरी अटारी
अपना टुटल घर चारु दिशा बारी

अनका के खोआ पूरी अओर तरकारी
अपुना के आक भाग धधुर अहारी
अनका के हाथी घोड़ा पालकी सवारी
अपना के बूढ़ बैल बधम्बर धारी

हे सखी, दूसरे को शिव मालामाल कर देते हैं, और स्वय भिक्षुक हैं।

दूसरे को अन्न धन, स्त्री, कोठा, कोठरी और अटारी देते हैं, और स्वयं बाड़ी और टूटी हुई झोंपड़ी में निवास करते हैं।

दूसरे को अनेक प्रकार के मेवा मिष्टान्न देते हैं और स्वयं आक, भंग और धतूर की पत्ती चबाते हैं।

दूसरे को हाथी घोड़ा और पालकी चढ़ने के लिए देते हैं, और स्वयं व्याघ्र चर्म पहन कर बुड्ढे बैल पर सवारी करते हैं।

समदाऊनि

मिथिला का लोक-साहित्य करुण रस से ओत प्रोत है। करुण रस के इतने गीत शायद ही संसार के किसी प्राचीन अथवा नवीन लोक साहित्य में मिल सकें। कविता के आदि अस्तित्व का मूल कारण करुणाजनक परिस्थिति ही है—

मा निषाद ! प्रतिष्ठा त्वमगमः शाश्वती समा
यत् क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्

बाल्मीकि मुनि का यह करुण श्लोक करुणाजनक घटना का ही परिणाम है। भवभूति ने भी करुणरस को मुख्य माना है—

एकोरसः करुण एव निमित्तभेदाद्
भिन्नः पृथक्पृथगिवाश्रयते विवर्त्तान्

एक करुण रस ही निमित्त भेद से शृङ्गारादि रसों के रूप में पृथक् पृथक् प्रतीत होता है। शृङ्गारादि रस करुणरस के ही विवर्त्त हैं।

विवाह संस्कार की समाप्ति के बाद जब दुलहिन डोली में बैठ कर ससुराल जाने की तैयारी करती है, उस समय मिथिला में एक विशिष्ट शैली का गीत गाया जाता है जो 'समदाऊनि' के नाम से प्रसिद्ध है। विदा के समय दुलहिन की माँ, बहन, भावज और उसकी हमजोलियाँ सब उसके गले लिपट कर रोती हैं। उस समय उनके संवेदनाशील गीतों को सुनकर पाषाण-से कठोर हृदयवालों की आँखें भी सावन भादों की झड़ी लगा देती हैं, और उनकी वियोग-वेदना से हृदय पटल फटने लगता है।

'समदाऊनि' का सब से बड़ा गुण है—स्वाभाविकता। इसका शृङ्गार प्रेम और करुणा के मोतियों से हुआ है। वर्णन करने के सात्विक साज और भाषा सीधी तथा साफ़-सुथरी है। वास्तव में कविता वही है, जो पढ़ने और सुनने वालों के दिल पर असर करे।

गैया के बाँधितो में खुटा मे लगाय
बछिया के तेल जाइय भागल जमाय
धिअवा के कनईते मे गंगा बहिगेल
दमदा के हँस इते मे चादरि उड़ि गेल

'बेटी के रोने से गंगा नदी उमड़ बही, और दामाद के क़हक़हा लगाने से राह चलते हुए पथिक की चादर उड़ गई,' में कवि ने कैसी युक्तिपूर्ण एवं कवित्वमयी कल्पना की है। भोली भाली ग्राम देवियों के सरल कंठ से इन पंक्तियों को सुन कर मैं कई बार अश्रु भरी आँखों में डूब चुका हूँ।

[३]

नयन नीर अविरल किय ढारल
कह कह सुन्दरि नारि
कंचन तन झामरि सम देखिय
के धनि पड़लक गारि
केहन चक्मक चानक शोभा
सुरभित अलस समीर
चारि दिशा अलि मदनक बेढल
निख तिख पुहुपक नीर
की दुख पड़लह कह कह नागरि
आन तेजह अनुताप
कनइत देखि सेज पर सूतलि
मोर मन थर-थर काँप
आजु सुनिय पति मातु पिता मुए
हेरल सपनहि माँझ
छोटि मोर बहिन भाय मन पारल
कछमछ काटल साँझ
माइक नेह जखन मन पारल
जे देलक प्रतिपालि

देखब सुन्दर नारि
'कुमर' भनहि पुन घर घुरि श्रायब
रहि नइहर दिन चारि

'हे सुन्दरी, कहा तुम्हारी आँखों से इस तरह लगातार आँसुओं की झड़ी क्यों लग रही है? तुम्हारा यह कुन्दन सा दमकता हुआ शरीर मैला क्यों हो गया? हे प्रियतमे, क्या तुम्हें किसी ने गाली दी?

देखो, आसमान में चमकते हुए चाँद की मन्द मुसकान छा गई। सुगन्ध से तर ठंडी हवा मन्द मन्द बहने लगी, और दिशा विदिशाएँ मदन के फूल के तीखे बाणों से बिंध गईं। हे सुन्दरी इस समय तुम्हारे हृदय में कौन ऐसी पीड़ा है, जो तुम इस प्रकार सेज पर बिसूर रही हो? सेज पर तुम्हें इस तरह बिसूरते देख कर मेरा मन थर थर काँप रहा है।'

नायिका ने कहा— हे सजन, आज मैंने स्वप्न में माता पिता का दर्शन किया। छोटी बहन और प्रिय भाई की याद भी ताज़ी हो उठी, जिससे रात बड़ी बेचैनी में कटी। स्नेहमयी माँ के निःस्वार्थ प्रेम की सुध हो आई, जिसने मुझे पाल पोस कर बड़ा किया। हाय! ऐसी स्नेहमयी माँ को विलाप करती हुई छोड़ कर मैं कहाँ आ गई? हाय! इस संसार की लीला कैसी विचित्र है?

हे प्रियतम, माँ बाप, भाई बहन और सभी सखियों से तुमने मुझे जुदा कर दिया। वे सब मेरा स्मरण कर रहे होंगे। मेरा हृदय पीपल के पत्ते की तरह काँप रहा है।

मैं नित्य अपनी छोटी बहन को गोद में लेकर पुचकारती थी। लेकिन वहाँ से विदा लेने के वक्त निर्मम भावज ने उसे मेरे हाथ से छीन लिया। विदा लेने के समय न मालूम मेरे पिता ने क्या कहा? उन्होंने अपना पैर छुड़ा लिया। हृदय थर-थर काँप रहा था। और हे प्रियतम, तुमने मुझे झपट कर डाली में बिठा लिया। आज के स्वप्न ने विदा समय की सभी स्मृतियाँ मेरे हृदय पटल पर एक एक कर अंकित कर दीं। इसीलिए आज मन उदास है।

हे प्रियतम, जिस मैके में मैंने अपने प्रिय कुटुम्बों के साथ शैशव और किशोरावस्था बिताई, उस मैके से तुमने मुझे क्यूँ जुदा किया?'

जब डोँरी चलल पछिम राज
भऊजि मन पड़ि गेल हे
भऊजि मोरा रखिनथि बसिया भात जकि
अब डोँरी चलल समुर घर देश
घर क चालन होएवा हे

कहाँ से यह डोली आई है, और कहाँ जायगी ?

उत्तर से यह डोली आई है, और दक्षिण जायगी।

जब डोली उत्तर की ओर चली, तब अपने बाबा की याद ताज़ी हो आई। बाबा मुझे पगड़ी के पेच की तरह रखते थे। लेकिन अब यह डोली मुझे ससुर के राज्य में ले जायगी जहाँ मैं दूध की मक्खी हो जाऊँगी।

जब डोली पूरब की ओर चली, तब अपने पिता की याद तड़पाने लगी। मेरे पिता मुझे धोती के पेच की तरह रखते थे। लेकिन अब यह डोली मुझे ससुर के राज्य में ले जायगी जहाँ मैं घर की बोहारी हो जाऊँगी।

जब डोली दक्षिण की ओर चली, तब मुझे अपनी माँ की याद ताज़ी हो आई। मेरी माँ मुझे पिँजड़े के सुग्गे की तरह रखती थी। लेकिन अब यह डोली मुझे ससुर के देश में ले जायगी, जहाँ मैं घर की पोतन (कपड़ों का तह किया हुआ एक क़िस्म का कूँचा, जिसे भिंगो कर आँगन लीपा जाता है) हो जाऊँगी।

जब डोली पश्चिम की ओर चली, तब भावज की याद ताज़ी हो आई। भावज मुझे बासी भात की तरह रखती थी। लेकिन अब यह डोली मुझे ससुर के देश में ले जायगी, जहाँ मैं घर की चलनी हो जाऊँगी।

गीत के एक-एक शब्द बेबसी और करुणा में शराबोर हैं। इसमें कवि ने मैके से जुदा और ऐसी जुदा कि अब जीते जी दो चार बार ही मैकेवालों से मिलने की आशा हो, एक वियोगाकुल रमणी की मनोदशा का चित्रण बड़े ही स्वाभाविक ढंग से किया है।

'पिता मुझे धोती के पेच की तरह रखते थे। लेकिन अब यह डोली मुझे ससुर के राज्य में ले जायगी, जहाँ घर की बोहारी हो जाऊँगी', इन पंक्तियों को पढ़ कर कौन ऐसा सहृदय है, जिसकी आँखों से अश्रु प्रवाहित न हो जाय।

केहि रहय एतही भय रहयि
कहि कहय दुर जाऊ हे
बाबा रहयि नित्य बालाएब
भइया कहथि छौ मास हे
अमा कहयि एतहीं भए रह
भऊजि कहथि दुर जाउ हे

गंगा उमड़ आई। यमुना उमड़ कर बह चली। घोंघे और सेवार भी उमड़ बहे। हाय! धर्म का मुहूर्त्त आया, लेकिन अमुक पिता नहीं उमड़े।

पिता ने कहा—'हे बेटी अगर तुम कहो तो मैं शामियाना तना दूँ, रेशम का पर्दा लगा दूँ, और सूर्य की आराधना करूँ कि वह अपनी धूप से तुम्हारा गोरा बदन काला न करें।'

बेटी ने उत्तर दिया—हे पिता, आप क्यों शामियाना तनायेंगे, क्यों रेशम का पर्दा लगायेंगे और क्यों सूर्य की आराधना करेंगे? मैं बगैर किसी कठिनाई के ही प्रियतम के पास चली जाऊँगी।

हे पिता, मेरा और मेरे भाई का एक ही कोख से जन्म हुआ। हमने एक ही साथ कामधेनु गाय का दूध पिया। लेकिन विधाता ने भाई की क़िस्मत में यह चौपाल लिखा, और मेरी क़िस्मत में परदेश।'

किसके रोने से सारे गाँव के लोगों ने रो दिया?
किसके रोने से पृथिवी दहल उठी?

किस निर्बुद्धि के विलाप करने से उसके शरीर की मिरज़ई और टोपी भींग गई, और किसका हृदय पाषाणवत् कठोर है?

पिता के रोने से सारे गाँव के लोगों ने रो दिया।

माँ के रोने से, पृथिवी दहल उठी।

निर्बुद्धि भाई के रोने से उसके शरीर की मिरज़ई और टोपी भींग गई, और मेरी भावज का हृदय पाषाणवत् कठोर है।

किसने कहा—'नित्य बुलाऊँगा?'

गरल-पान कर शरीर त्याग दूँगी। जो सुहागिन हममे पीछे श्वसुर गृह आई, वह भी अपने नैहर चली गई।

यह उक्ति अपनी जन्म भूमि और बन्धु बान्धवों का परित्याग कर श्वसुर गृह में बसी हुई नवोढा नायिका की मनोदशा को खूब दर्शाती है।

[७]

अइसन निरमोहिया से जोराल पिरितिया
बिछुरइत बिलमा न होय आहे सखिया
गोना कराइ पिया देहरा बइसवलन
अपने चलल परदेश आहे सखिया
सासु जी के घर में ननद भेल बइरिन
हमरो गुजारा कइसे होय आहे सखिया
फारवइ मे शला चुरी फारवइ मे चोलिया
से धरवइ जागिनिया के वेष आहे सखिया
दास कबीर एहो गावल समदाऊनि
करवइ मे पिया के उदेश आहे सखिया

हे सखी, मैंने ऐसे निर्मोही से प्रेम किया कि बिछुड़ने में ज़रा भी देर न हुई। द्विरागमन करा कर वह मुझे घर में बिठा गया और स्वयं परदेश चला गया।

सास के घर में ननद मेरी बैरिन हो गई। हे सखी, कहो अब मेरे ये दिन कैसे कटें ?

हे सखी, मैं अपनी यह शस्त्र की चूड़ी ताड़ डालूँगी। कचुकी फाड़ दूँगी। और प्रियतम की टोह में जोगिन बन कर अलख जगाऊँगी।

कबीरदास ने यह 'समदाऊनि गाया है। हे सखी, मैं (अवश्य) कभी न कभी प्रियतम की खोज कर लूँगी।

[८]

जब माधो चललन माधोपुर नगरिया
छाड़ि देल सकल समाज—आहे सखिया

रानियाँ रंग महल में रो रही हैं। राजा दरवाज़े पर विलाप कर रहे हैं। हाथी फ़ीलख़ाने में रो रहे हैं। घोड़े अस्तबल में रो रहे हैं। अड़ोस पड़ोस और सारे गाँव के लोग रो रहे हैं।

हे सखी, चलो हम सीता से अन्तिम विदा ले आवें। वह पुनः इस देश में लौट कर नहीं आयेगी।

[१०]

छुटि अँगनमा माइ बरि परिवार हे
मिलइत जुलइत माइ हे भय गेल साँझ
उठु अमा उठु अमा विदा मोहि दिउ
पऊतिया सठइत अमा लेलि लुलुआय
पथर के छतिया गे बेटा विहुसि न हे जाउ
चलइत क बरि बेटी देलि समुझाए
उठु भउजी उठु भउजी विदा मोहि दिउ
बासना देअइत भऊजी लेल लुलुआय
पथर के छतिया ननदो पर्माभिठो ने जाउ
चलइत के बेरिया ननदा देलि समुझाय
उठु बाबा उठु बाबा विदा मोहि दिउ
दहेजवा देअइत बाबा लेलि लुलुआय
पथर के छतिया बेटी विहुँसि ने जाऊ
चलइत के बेरिया बेटा देलि समुझाय
उठु बाबू उठु बाबू विदा मोहि दिउ
कपड़ा देअइत बाबू लेलन्हि लुलुआय
पथर के छतिया बेटी विहुँसि ने जाउ
चलइत के बेरिया बेटी देलि समुझाय
उठु भइया उठु भइया विदा मोहि दिउ
गहना देअइत भइया लेलन्हि लुलुआय
पथर के छतिया बहिन विहुँसि न हे जाउ

से कोना जइति ससुरार
केन भाय यमुना म नाव खिरआतनि
कान भाय जयता सग साथ
निर्गुण भाय यमुना म नाव खिरआतनि
सगुण भाय जयता सग साथ
नहिरक लोग सब कउरना करथिन
ससुरा म उधम-बधाय

हे सखी आओ एक बार गले लग कर मिल लें। दिन रात हो गये। ससार से चित्त विरक्त हो गया।

सात भाइयों के बीच एक बहन है। हाय ! वह ससुराल कैसे जायगी ?

कौन भाई यमुना के बीच से नाव खेकर पार लगायेगा। कौन भाई साथ जायगा ?

निर्गुण भाई यमुना के बीच से नाव खेकर पार लगायेगा। और सगुण भाई साथ जायगा।

नैहर के लोग विलाप कर रहे हैं, और ससुराल में उत्सव मनाया जा रहा है।

[१२]

बर र यतन सें सीता जा क पोसला
सेहो रघुवशी ने ने जाय
मिल लिय मिलि लिय सखि सब मिल लिय
सीता बेटी जइति ससुरार
काथ केर डोलिया कइसन ओहरिया
लागि गल बतिसो कहार
चनन क डोलिया सनाज ओहरिया
लागि गल बतिसो कहार
आगु आगु रघुबर पाछु पाछु डालया
तकरा पाछु लछमन भाय

बड़े यत्नपूर्वक सीता का लालन पालन किया। उसी सीता को राम लिये जा रहा है।

रे सोनार, तुम कुछ अच्छे अच्छे गहने गढ़ कर दो। बेटी सीता ससुराल जायगी।

कौन पिटारी सौंठ[1] कर देगा? कौन धेनु गाय देगा?

कौन फूटी हाँडी सौंठ कर देगा? और किसका हृदय कठोर है?

मेरी माँ पिटारी सौंठ कर देगी। बाबा कामधेनु गाय देगा।

भाई फूटी हाँड़ी सौंठ कर देगा, और मेरी भावज का हृदय कठोर है।

हे विधाता, कन्या का जन्म मत दो। उसके जीवन की नौका मँझधार में डूब जाती है।

---

[1]दहेज देना। भिन्न-भिन्न प्रकार की वस्तुएँ, जैसे—कंघे, दर्पण, लहँगे आदि सँभाल सँभाल कर पिटारी में रखना।

गीत प्राय: अनमेल लम्बे लम्बे चरणों के संग्रह होते थे, जिनके (गज़ल के पहला शेर—'मतला' की तरह) दोनों चरणों की तुक एक दूसरे से परस्पर मिली होती थी। कोई-कोई 'झूमर' गीत उर्दू शायरी 'कसीदे' की तरह व्यक्ति विशेष की प्रशंसा में लिखे जाते थे, और कोई-कोई अपनी भाव प्रवणता और रागात्मिका शक्ति में रंगारंग की कैफ़ियतें ज़ाहिर करते थे।

'झूमर' की एक अपनी दुनिया है। इसका मज़मून प्रेम से शराबोर और पाक ख्यालातों से लबालब भरा है। पंक्ति-पंक्ति में वारुणी और शब्द शब्द में जादू का असर है। यह हर ऋतु और हर महीने में गाया जाता है। 'झूमर' का अर्थ है—झुमाना मस्ती में नचाना। जब गायिकायें वायु के मन्द मन्द झकोरों सी झूमती हुई अपने कोकिल कंठों से इसे गाती हैं तब पृथिवी का पत्ता पत्ता नाच उठता है, और आनन्द की एक मन्दाकिनी सी फूट बहती है। तिस पर इसकी साहजिकता और स्पष्टता तो सोने में सुगन्ध ला देती है। वह हमें भावार्थ निकालने—अनुसंधान करने का मौका नहीं देती। अपितु उसका उत्तर उसके स्वच्छ हृदय मुकुर में स्पष्ट झलक उठता है। वस्तुतः यही चीज़ है, जो 'झूमर' को लोकोत्तर आनन्ददायक बनाती है।

कुछ उदाहरण लीजिये।

निम्नलिखित 'झूमर'—जो खासकर हिंडोले पर बैठकर गाया जाता है, में देवर, जिसने बड़े प्रेम से रेशम की डोरी गूँथकर हिंडोले लगाये हैं—अपनी भावज से झूला झूलने को कहता है। लेकिन उसकी भावज जो अपने नादान शिशु को गोद में लेकर हिंडोले पर बैठना खतरे से खाली नहीं समझती, उसके प्रस्ताव का स्पष्ट अस्वीकार करती है। पाठक देखें कि महज़ इतनी-सी बात निम्नलिखित 'झूमर' में कितने कामल ढंग से दरशाई गई है—

[१]

छोटका देवर रामा
बड़ रे रंगीलवा
रेशम के डोरिय ना
देवरा बान्हाथ हिंडोरवा

रेशम के डोरिय ना
से झूलि लिअउ ना
मउजी बल के हिंडोरवा
से झूलि लिअउ ना
रइम न झूलू देवरा
बल के हिंडोरवा
से मोर गादा ना
कमल कुसुम बलकवा
से मोर गादा ना
बबुआ सुतइअउ मउजी
सोने के पलंगिया
से झूलि लिअउ ना
मउजइ बल के हिंडोरवा
से झूलि लिअउ ना
सोने के पलंगिया
से गारि जइबइ बबुआ
से टूटि जयबइ ना
देवरा जनम पिरितिया
से टूटि जयबइ ना
देवरा जनम सनेहिया
से छूटि जयबइ ना

इस छोटे-से गीत में कवि ने एक माँ के निस्वार्थ वात्सल्य रस प्रदर्शित हुआ का, जो अपने शिशु के मंगल के लिए विश्व के भारी से भारी प्रलोभनों को भी लात मारने को तैयार है कितना सुकुमार अंकन किया है।

[२]

निम्न लिखित रचना 'झूमर' का एक सुन्दरतम उदाहरण है। इसमें नायिका अपने भाई का विवाह देखने अपने मैके जाना चाहती है। वहाँ जाने के लिए

उसके प्रियतम की रजामन्दी ज़रूरी है। प्रियतम टालमटोल करता है। सुनिये—

पिया हे नइहर मे भाई के विवाह
देखन हम जायव
सुन हे प्राण देखन हम जायव
धनि हे धय•देइ सिरवा पर हाथ
कतेक दिन रहव
सुन हे प्यारी कतेक दिन रहव
पिया हे नय धरवइ सिरवा पर हाथ
बरस बिति जयतइ
सुन हे प्राण बरस बिति जयतइ
धनि हे करवइ सोलहो सिंगार
केही के देखलाएव
सुन हे प्यारी केही के देखलाएव
पिया हे करबइ मे सोलहो सिंगार
सखी के देखलायव
सुन हे प्राण सखी के देखलायव
धनि हे अयतइ मे जाड़ा के रात
केही के गोदी सोएव
सुन हे प्यारी केही के गोदी सोएव
पिया हे अएतइ मे जाडा के रात
अम्मा के गोदी सोएव
सुन हे प्यारे अमा के गोदी सोएव
धनी हे अएतइ मे फागुन के बहार
केहि से रग खेलव
पिया हे अएतइ मे फागुन के बहार
भउजि संग खेलव
सुन हे प्यारे भउजि सग खेलव

दूसरा विवाह करने की बात सुन कर उसकी प्रिया व्यंग्यपूर्वक अपने प्रियतम के प्रश्न का जवाब देती है—

ओ प्रियतम, मैके में मेरा भाई वकील है। तुम दूसरा विवाह कर लोगे तो मैं तुम्हें जेल भिजवा दूँगी।

ओ प्राण, मैके में मेरा भाई दारोगा है। यदि तुम दूसरा विवाह कर लोगे तो मैं तुम्हें सजा दिलाऊँगी। ओ प्राण, मैं तुम्हें सजा दिलाऊँगी।

[३]

बँसिया बजा क कान्हा मार मन हरलन्हि
मधुबन मे गेला ना
मोरा बशीवाला कान्हा मधुबन म गेला ना
आहि मधुबनमा म कुबरी जोगिनिया
त जादू कयलन्हि ना
मोरा बशीवाला कान्हा पर जादू कयलन्हि ना
अपने जँ गेला हरि जी देश रे विदेशवा
त दइय गेला ना
एक सुगना खेलओना त दइय गेला ना
दिन के जँ देवउ सुगना दही चूरा भोजना
त राति के सुगना ना
देवउ सूते के पलंगिया त राति के सुगना ना
अगली पहर राती पिछुली राति ना
सुगना काटय लागल चोलिया त पिछली राति ना
एक मन करइ सुगना बाँहि धरि मरोरितौं
त दोसर मनमा ना
सुगना पिया के खेलनमा त दोसर मनमा ना
इहँमा के उडल सुगना जाय परदेशवा
त बइसे सुगना ना
हाथ लेल प्रभु जँघिया बइसओलन्हि

ओ मोर राजा अबा जाइ कएलौं
इ देहिया मोर अमा के पोसल
कइसे हक लगएलौं
ओ मोरे प्यारे कइसे हक लगएलौं
फुलवा अइसन हम चमकइत रहलि
धूरमइल कइ देलौं
टिक्वा पहिनि हम सोएलौं अँगनमा
अबा जाइ कएलौं
ओ मोर राजा अबा जाइ कएलौं
इ देहिया मोर चाची के पोसल
कइसे हक लगएलौं
सोनमा अइसन हम चमकइत रहलि
पीतर कइ देलौं
ओ मोर राजा पीतर कइ देलौं

अजी ओ प्रियतम, मैं कर्णफूल पहन कर आँगन में सोई थी। तुमने आना-जाना किया। यह शरीर मेरी माँ का पाला हुआ था। तुमने कैसे हक़ जताया ? अजी ओ प्यारे, तुमने कैसे हक़ जताया ? मैं फूल की तरह सुगन्धित थी। तुमने धूल की तरह नीरस बना दिया।

अजी ओ प्रियतम, मैं मांगटीका पहन कर आँगन में सोई थी। तुमने *आना-जाना किया। यह शरीर मेरी चाची का पाला हुआ था।* तुमने कैसे हक़ जताया ? मैं सोने की तरह चमकती थी। तुमने पीतल बना दिया। अजी ओ प्यारे, तुमने पीतल बना दिया।

[५]

कौन वन हारि बाँस झुरमुट गे सजनी
कौन वन पिक कुहु कुहुकल गे सजनी
बाबू वन हारि बाँस झुरमुट गे सजनी
सँइए वन पिक कुहु कुहुकल गे सजनी

हे सखी, किसके उपवन में यह बाँसों का हरा भरा झुरमुट है, और किसके उपवन में यह कोयल कूक रही है ?

हे सखी, तुम्हारे पिता के उपवन में यह बाँसों का हरा भरा झुरमुट है और तुम्हारे प्रियतम के उपवन में यह कोयल कूक रही है।

हे सखी यदि मैं जानती कि मेरे धन के लोभी प्रियतम परदेश जायेंगे, तो मैं उन्हें कलेजे में रखती। अब उन्हें प्रणय संदेश लिख कर भेजूँगी, लेकिन मेरे पास न तो कोरा कागज़ है और न स्याही।

मैं किस वस्तु का कोरा कागज़ तैयार करूँ, और किस वस्तु की स्याही ?

हे सखी, अपने आँचल को फाड़ कर कोरा कागज़ बना लो, और अपनी आँखों के काजल की स्याही।

नायिका अनपढ़ है। अपनी अनुभूतियों को क़लम पर उतारने में असमर्थ। इसलिए वह जिज्ञासा करती है—

हे सखी, मैं पत्र लिखने के लिए किस लेखक की मदद लूँ और उसको किसके हाथ प्रियतम को भेजूँ ?

उसकी सखी ने कहा—तुम्हारे तो घर में ही तुम्हारा देवर पत्र लेखन कला में पटु है। उसीसे पत्र लिखा लो और उसे किसी राह चलते हुए मुसाफ़िर के हाथ भेज दो।

नायिका देवर के पास जाती है, और पत्र का मज़मून बतलाती है—हे देवर, पत्र के चारों कोने पर कुशल क्षेम लिखो और उसके बीच में मेरे प्रियतम का वियोग।

हे पथिक, तुम मेरे भाई हो। मेरा प्रणय संदेश मेरे प्रियतम के पास लेते जाओ। उन्हें मेरा सन्देश भली भाँति समझा देना।

पथिक ने कहा—हे बहन, तुम्हारे प्रियतम की मैंने सूरत तक नहीं देखी। मैं उसे तुम्हारा प्रणय संदेश कैसे कहूँगा ?

नायिका ने कहा—हे पथिक, मेरे प्रियतम घुटने तक धोती पहनते हैं और ऐसे ठाट बाट से रहते हैं, जैसे कोई बाबू ज़मींदार रहे। जहाँ उन्हें मित्रों की

गोठी में देखना, वहाँ चिट्ठी छिपा रखना और जहाँ अकेला देखना, वहाँ चिट्ठी खोल कर दे देना।

पथिक नायिका का पत्र लेकर उसके प्रियतम के पास गया। पत्र पढ़ कर उसका प्रियतम मुसकिराया और बोला—मेरी प्रियतमा ने कितना वियोग लिखा है?

पथिक ने कहा—मुझे पुरस्कार मिले। मैं अपना रास्ता नापूँ। मैं आपकी वियोगिन प्रिया का प्रणय सँदेश लाया हूँ।

'अँचरा फारिए कोरा कागज़ गे सजनो, नयना काजर मसिहान' (आँचल को फाड़ कर कागज़ बना लो और आँखों के काजल की स्याही।) में वियोगिन का हृदय उमड़ पड़ा है। इन पंक्तियों से वेदना तड़प उठी है। पुरानी 'फूमर'-शैली का यह गीत विरह का एक सजीव वर्णन है।

[६]

बोलिया सुना क कहाँ गेलौं रे
माटी के सुगनमा
उड़ि उड़ि सुगना कदम चढ़ि बइसल
कदम के सब रस ले लेल हे
माटी के सुगनमा
उड़ि-उड़ि सुगना लवंग चढ़ि बइसल
लवंगा के सब रस ले लेल हे
माटी के सुगनमा
उड़ि उड़ि सुगना जोवन चढ़ि बइसल
जोवना के सब रस ले लेल हे
माटी के सुगनमा

रे मिट्टी के सुग्गे, अपनी बोली सुना कर तू कहाँ चला गया? मेरा मिट्टी का सुग्गा उड़ कर कदम की डाल पर बैठा, और कदम का सब रस चूस लिया। मेरा मिट्टी का सुग्गा उड़ कर लौंग की डाल पर बैठा और लौंग का सब रस चूस लिया। मेरा मिट्टी का सुग्गा उड़ कर जोबन की डाल पर बैठा, और जोबन का

मब रस चूम लिया। रे मिट्टी के सुग्गे, तू अपनी बोली सुना कर कहाँ चला गया ?

[७]

नयना में शीशा लगाउ
बलमु नयना में शीशा लगाउ
जेकरा दुआरि पर गंगा बहय
से कइसे कुँइया पर जाय
बलमुआ नयना मे शीशा लगाउ
जेकरहिं घर मे पतिबरता तिरिया
से कइसे बेसरा मँग जाय
बलमुआ नयना मे शीशा लगाउ
जेकरहिं हिया परमात्मा बसय
मे कइसे रन-बन भरमाय
बलमुआ नयना मे शीशा लगाउ

रे सजन, ज़रा अपनी आँखों में शीशा लगा कर तो देख। जिसके दरवाज़े पर गंगा बहती है, भला वह कुएँ पर क्यों जायगा ?

रे सजन ज़रा अपनी आँखों में शीशा लगा कर तो देख।

जिसके घर में पतिव्रता नारी है, भला वह वेश्या के पास क्यों जायगा ?

जिसके हृदय मन्दिर मे परमात्मा है, भला वह जंगलों में उसकी खोज क्यों करेगा ?

रे सजन, ज़रा अपनी आँखों में शीशा लगा कर तो देख।

[८]

सोने क भारी गंगाजल पानी
पिऊ पिया पानी पिलाउ जल्दी सँ
दिल अति व्याकुल भेल गरमी सँ
सोने क थाली में जेओना परोसल
जेंउँ पिया भोजना जेवाउँ जल्दी सँ
दिल अति व्याकुल भेल गरमी सँ

लवंगा मे चुनि चुनि खिड़िया लगएलौं
चाभु पिया चभाऊ जल्दी मैं
दिल अति व्याकुल भेल गरमी मैं
फुलवा क डाली मैं सेजिया डँसवला
सोऊ पिया सेजिया सुलाऊ जल्दी मैं

मेरा दिल गर्मी से व्याकुल हो गया। ओ प्रियतम, सोने के घड़े में गंगा का जल है। पी लो, और मुझे भी पिलाओ।

सोने की थाली में भोजन परोसे हैं। ओ प्रीतम, खाओ। और मुझे भी खिलाओ।

लौंगों से सजा सजा कर पान की गिलौरियाँ लगाईं। ओ प्रीतम, खाओ और मुझे भी चबाओ।

ओ प्रीतम, फूलों की डाली से सेज सँवारी है। सोओ और मुझे भी सुलाओ।

मेरा दिल गर्मी से व्याकुल हो गया।

[६]

जहाँ क नजर दुनु अँखिया
बलमु दुपहरिया गँवा लिऊ है
चार महीना पिया जाड़ा रहइछ
थर थर काँपे कलेजा
बलमु दुपहरिया गँवा लिऊ है
चार महीना पिया गरमी रहइछ
टोपे टापे चुए पसीना
बलमु तनि बेनिया डोला दिऊ है
चार महीना पिया बरसा रहइछ
टोपे टापे चुए मन्दिरवा
बलमु तनि बगला सुता दिऊ है

ओ प्रीतम, जरा मैं तुम्हारी दोनों आँखों की शीतल छाँह में खिलखिलाती हुई दोपहरी तो बिता लूँ!

ओ प्रीतम, चार महीने तो कड़ाके का जाड़ा पड़ता है और मेरा कलेजा थर थर काँपता है। इसलिए तुम्हारी दोनों आँखों की शीतल छाँह में ज़रा दोपहरी तो बिता लूँ।

ओ प्रीतम, चार महीने तो भीषण गर्मी पड़ती है और मेरे शरीर से बूँद बूँद पसीना टपकता है। ज़रा पखा तो झल दो। ओ प्रीतम तुम्हारे युगल नयनों की कोमल छाँह में ज़रा दोपहरी तो बिता लूँ।

चार महीने तो पावस ऋतु रहती है और मेरी यह घास फूस की झोंपड़ी टप टप चूने लगती है। ओ प्रीतम, एक बँगला तो बनवा दो। ओ प्रीतम, तुम्हारी दोनों नज़रों की शीतल छाँह में ज़रा दोपहरी तो बिता लूँ।

[१०]

पूर्व में पौ फटती है। तालाब में कमलिनी खिलती है। चिड़ियां धीरे-धीरे खुशी का सन्देश सुनाती हैं। निम्न लिखित गीत में एक तरुणी अपने प्रीतम से, जो अभी गाढ़ी निद्रा में खर्राटे ले रहा है, पर्दे की जटिलता और लोक लाज के कारण शयनागार से उठ जाने का अनुरोध कर रही है—

भोर भेल हे पिया भिनुसरवा भेल हे
पिया उठु न पलंगिया अर कोइलिया बोले न
उठबे करब गे धनी उठबे करब हे
देही न मुरेठवा हम कलकतवा जयबइ हे
कलकतवा जयर हे पिया कलकतवा जयब हे
हम नाथा के बुलवाइए नइहरवा जयबइ हे
नहिहरवा जइब गे धनी नहिहरवा जइब हे
जेतना लागल अयह रुपइआ तेतना धइए देहि न
धइए जयओ हे पिया धराइए जयओ रे
जेहन अयतौ वाबा घरसँ तइसन बनाए देहु हे
बनाए देवौं गे धनी बनाए देवौं हे
हम अंगूर के शरवतवा पिनाए देवौं हे
हम मोतीचूर के लड्डुआ खिलाए देवौं हे

नहिंए बनबद हे पिया नहिंए बनबइ हे
जइसन अयलौं बाबा घर मैं तेइसन नहिंय बनवौं हे

कालिमा फट गई। उजेला छा गया। कोयल कूकने लगी। ओ प्रीतम, अब पलंग छोड़ो और जाओ।

प्रिये, मैं तो जाऊँगा ही, पर पहले मुरेठा तो बाँध दो। मैं कलकत्ते जाऊँगा।

उसकी प्रियतमा कहती है—ओ प्रीतम, यदि तुम मेरी बातों से नाराज होकर कलकत्ते जाओगे तो जाओ। पर मैं भी अपने पिता को बुला कर नैहर चली जाऊँगी।

पति ने जवाब दिया—प्रिये, यदि तुम नैहर जाती हो तो जाओ। पर तुम्हारी शादी में मेरे जितने रुपये लगे हैं, सब रख दो।

पत्नी कहती है—मेरे प्रीतम, मैं तो वे रुपये रख जाऊँगी, अथवा रखवा दूँगी, पर मैं यहाँ जैसी अपने पिता के घर से आई, तुम भी ठीक वैसी ही बना दो।

पति जवाब देता है—प्रियतमे, मैं तुम्हें मोतीचूर की मिठाई खिला कर और अंगूर का शरबत पिला कर ठीक वैसी बना दूँगा। उसी प्रकार की बना दूँगा। पर तुम्हारी शादी में मेरे जितने रुपये लगे हैं, सब रख दो।

उसकी प्रियतमा कहती है—ओ प्रीतम, मैं वैसी कभी नहीं बनूँगी। कभी नहीं बनूँगी। मैं यहाँ जैसी अपने पिता के घर से आई फिर वैसी कभी नहीं बन सकूँगी।

[११]

एक ओरि बिके राम दही चूरा चीनिया
त एक ओरि हे राम
बिके सोने क टिकरिया
त एक ओरि हे राम
अपना महलिया मे निकलल सुन्दरिया
त कह सोनरा राम
कहू टिकरी के मोलवा
त कह सोनरा राम

तोरा से न होतश्रा मुन्दरि
सिकरी के मोलवा
त भेज दिश्रउन हे सुन्दरि
श्रपन ससुर जी क
हमरो ससुर जी सोनरा
राजा के नोकरिया
त हुनि कि जनिहैंन हे सोनरा
सिकरी के मोलवा
तोरा से न होतश्रो सुन्दरि
सिकरी के मोलवा
त भेज दिश्रऊन हे सुन्दरि
श्रपन देवरवा
हमरो देवरवा सोनरा
पढल पडितवा
त हुन कि जनिहैंन हे सोनरा
सिक्री के मोलवा
तोरा से न होतश्रो मुन्दरि
सिकरी के मोलवा
त भेज दिश्रऊन हे सुन्दरि
श्रपन बलमु जी के
हमरो बलमु जी सोनरा
लरिका श्रबोधवा
त हुनि कि जनिहैंन हे सोनरा
सिक्री के मोलवा
कइ सिकरी के मोलवा
त कइ सोनरा राम
त रोश्रत होइहैंन हे सोनरा

हे सुन्दरि, तुम्हारी वयस कची है। तुम्हारे बालम की उम्र भी कची है। फिर तुम्हारी गोद में बचा कहाँ से टपक पड़ा!

रे सोनार, मेरे बाबू और भाई बड़े निर्बुद्धि हैं। उनने दूल्हा के रूप पर लट्टू होकर बगैर उसकी उम्र का ख़याल किये ही—मेरा व्याह कर दिया। और यह बचा तो ईश्वर की विशेष कृपा का फल है।

[१२]

कहमा लगएलों में जुही चमेली
कहमा लगएलों अनार हे
नारियर क गछिया
दुअर लगएलों म जुही-चमेली
अगने लगएलों अनार हे
नारियर के गछिया
कय फूल फूले जुही चमली
कय फूल फूलै अनार हे
नारियर के गछिया
दस फूल फूलै जुही-चमेली
दुइ फूल फूलै अनार हे
नारियर के गछिया
केहि सखि चिखलन जुही चमेली
केहि सखि चिखलन अनार हे
नारियर के गछिया
देवरा छुहेला चिखै जुही-चमेली
सँइया रगीला अनार हे
नारियर के गछिया

हे सखी, तुमने कहाँ जुही चमेली लगायी, कहाँ अनार और कहाँ नारियल लगाये?

हे सखी, दरवाज़े पर मैंने जुही-चमेली लगाई, और आँगन में अनार तथा

नारियल लगाये।

हे सखी, जूही-चमेली में कितने फूल खिले? और अनार तथा नारियल में कितने फल आये?

हे सखी, जूही चमेली में दस फूल खिले, और अनार तथा नारियल में छे, फल आये।

हे सखी, किसने तुम्हारी जूही चमेली की खुशबू ली, और किसने अनार तथा नारियल चखा?

हे सखी, मेरे मौजी देवर ने जूही चमेली की खुशबू ली और मेरे रंगीले साजन ने अनार तथा नारियल चखा।

[१२]

दुइ चारि सखि सब साँवरि गोरिया
कुसुम लोढ़ै ना
चललि खेतवा के ओरिया
कुसुम लोढ़ै ना
मगवा में ईंगुर शोभै
वाहि पर चोटिया
त पोरिया-पोरिया ना
शोभै अंगुठी मुँदरिया
त पोरिया-पोरिया ना
हाथ में लेल फूल के चंगेरिया
त रहिया चलइत ना
मारै तिरछि नजरिया
त रहिया चलइत ना
कुजन करै झकझोरिया
रसिक सग ना

दो-चार सखियाँ मिल कर जिनमें कोई साँवली है, कोई गोरी—फूल के खेत में फूल तोड़ने निकलीं।

उनके माथे पर ईंगुर बिन्दी शोभा देती है। उसके ऊपर काली चोटी बल खा रही है। उनकी पतली नाज़ुक उँगलियों में अँगूठी शोभा देती है। उनके हाथ में फूल की डलिया है, और वे राह चलती हुई अपनी आँखों से तीर बरसा रही हैं, और कुञ्जों के झुरमुट में अपने प्रेमियों के साथ अठखेलियाँ करती हैं।

[१४]

तेरा बेलो की जाति बहार
मलिनिया बाग में
केहि लगावै बेली चमेली
केहि लगावै अनार—मलिनिया बाग में
देवरा लगावै बली चमेली
सँइया लगावै अनार
कइसन लागै बेली चमेली
कइसन लागै अनार
महमह लागै बेली चमेली
बड़ मीठ लागै अनार—मलिनिया बाग में

हे मालिन, तुम्हारी बाड़ी में बेलों की जाति के फूलों की बहार है।
हे मालिन, तुम्हारी बाड़ी में कौन बेली-चमेली लगाता है? कौन अनार?
मेरा देवर मेरी बाड़ी में बेली-चमेली लगाता है, और प्रियतम अनार।
ली चमेली कैसी होती है? अनार कैसा लगता है?
बेली चमेली खुशबूदार होती है। अनार मीठा लगता है।
हे मालिन, तुम्हारी बाड़ी में बेलों की जाति के फूलों की बहार है।

[१५]

हमरो बलमु जी के लामि लामि केशिया
घुँघुर शोभय ना
माथे कालि रे जुलुफवा
घुँघुर शोभय ना

हमरो बलमु जी के कारि कारि अँखिया
गजब करय ना
मारय तिरछी नजरिया
गजब करय ना
हमरा बलमु जी के साँवर सुरतिया
तिलक डारय ना
लाले माथे रे चननिया
तिलक शोभय ना

हमारे साजन के लम्बे घुँघराले बाल हैं जो उनकी कान्ति को चार चाँद लगाते हैं।

उनके माथे पर काले-काले अलकें हैं जो बड़े भले लगते हैं।

हमारे साजन की काली-काली आँखें हैं जो सितम ढाती हैं। उनकी घायल करनेवाली तिरछी आँखें सितम ढाती हैं।

हमारे चन्दन का लेप किये हुए साजन साँवले वर्ण के हैं। उनके माथे पर लाल चन्दन भला लगता है।

[१६]

कास फूल फूले आधा आधी रतिया
कास फूल फूले भिनुसार मधुबन म
बेली फूल फूले आधा आधी रतिया
चम्पा फूल फूले भिनुसार मधुबन म
घर पछुअरवा लोहरवा भइया हित बसु
लालि पलंग बिनि देहु मधुबन म
पुलवा में लोटि-लोटि सेजिया डसलो
राजा बेटा खेलइअ शिकार मधुबन में
हटि सुनु हटि बइसु सासुजी के बेटवा
घामे चालिया हयत मलिन मधुबन में
होय दिअऊ होय दिअऊ सासुजी के बेटिया

धोबी घर देइ धाआय मधुवन म
धोबिया के बेटा पिआ हे बा रगरसिया
चालिया ममारि रस लेन मधुवन म

आधी रात का मधुवन मे कौन फूल खिलता है ? और प्रातःकाल कौन फूल खिलता है ?

आधी रात को मधुवन म बेली खिलती है। और प्रात काल चम्पा खिलता है।

हे मेरे घर के पिछवाड़े बन हुए लोहार तुम मेरा हितू हो। इस मधुवन मे तुम मेरे लिए एक लाल पलग बना दो।

जब पलंग बन कर तैयार हुआ तो फूल चुन चुन कर मैने उसे सजाया। राजा का बेटा—मेरा साजन मधुवन मे शिकार खेलने आया है।

हे मेर साजन, तुम मुझ स हट कर सोओ। हट कर बैठो। तुम्हारे शरीर के पसीने स मेरी चोली मैली हो गयी।

हे मेरी सास जी की बेटी, चोली मैली होने दो। इस मधुवन मे धोबी रहता है। वह तुम्हारी चोली साफ कर देगा।

हे साजन धोबी का बेटा बड़ा रगीला ~। वह इस मधुवन म मेरी चोली मसल कर रस चूस लेगा।

[१७]

नइहरा म सुनइत रहलि पिआ छाड़ लरिकवा
त दिनमा चारि ना
पिया के नइहर म बोलयबौं
त दिनमा चारि ना
बेचइइ मे गल बरदा किनरइ धेनुगइया
त दुधवा पिलाय ना
पिया के करबौ जतनमा
त दुधवा पिलाय ना
पोंमिय पालि पिया के करबौं जतनमा

त भोरा के दिनमा ना
पिया मातल जाय विदेशवा
त भोरा के दिनमा ना
बारह बरिस पर पिया मोरा अयलन्हि
लव जमुनिया पेड़ तर ना
पिया धुनवा रमओलन्हि
लव जमुनिया पेड़ तर ना

नैहर में सुनती हूँ कि मेरे प्रियतम नादान हैं। उनकी उम्र बहुत कच्ची है। इच्छा होती है कि उन्हें दो चार दिनों के भीतर बुला लूँ।

उन्हें दूध पिलाने के लिए लाल बैल वंश का एक गाय खरीदूँगी, और दूध पिला कर उन्हें जवान बनाऊँगी।

जब मैंने उन्हें दूध पिला कर जवान बनाया तब वह ऐन मौके पर प्रवासी हो गये।

बारह वर्षों के बाद वह लौटे और नये जामुन के गाछ के नीचे उनने धूनी रमायी।

[१८]

गोदना गोदइहों बलमु
हम गोदवबों गोदना
गोरि-गोरि बँहिया सबुज रंग चुनिया
प्यारे झलकय मोर कलइया
गोदवबों गोदना
पनिया पियइहों बलमु गोदवबों गोदना

हे साजन, मुझे गोदना गुदा दो। मैं तुम्हें मीठे पकवान खिलाऊँगी।

हे प्रियतम, मेरी गोरी गोरी बाँह है। उस पर सब्ज रंग की चूड़ी एक अजीब रंग ला रही है।

हे साजन, मुझे गोदना गुदा दो। मैं तुम्हें जल पिलाऊँगी।

[१९]

जल्दी से लोटिहो राजा आरा के रात लाल
पछिमहि जइहो राजा पूब मति जइहो लाल
हमरा ला सारी लइह बगलाधारी लाल लाल
चोलिया जे लइह राजा लखनऊ सिलाई लाल
बगला कोर सारी पेन्हि जयबइ बजरिया लाल
तोहरी ला लएबइ राजा बगला खिल्ली पान लाल
लखनऊ के चोलिया पेन्हि जयबइ बजरिया लाल
तोहरो लालएबऊ स्वामी छोटि-छोटि नेमुआ लाल

हे साजन, जल्द वापिस आना। जाड़ा की रात आने ही वाली है।

हे राजा, पश्चिम जाना। पूरब मत जाना। मेरे लिए उपहार में बँगला पार की लाल साड़ी लाना।

और हे राजा, मेरे लिए लखनऊ की सिली हुई चोली लाना।

बँगला किनारी की साड़ी पहन कर मैं बाज़ार जाऊँगी, और तुम्हारे लिए बँगला खिल्ली पान लाऊँगी।

लखनऊ की सिली हुई चोली पहन कर मैं बाज़ार जाऊँगी। और हे राजा, तुम्हारे लिए उपहार में छोटे छोटे बिजौरा नीबू लाऊँगी।

[२०]

चलु गोरिया चलु गोरिया गगा असननमा हे
गाट के बटखरचा लिहो ठेकुआ पकवनमा हे
आरो लिहो आदे गो रया सतुआ पिसनमा हे
घरका भइया तानि दिहलन अपनी चदरिया हे
चादरि के खूँट पकरी गेलि असननमा हे
कोई सखी पेन्हय रामा चीर अभरनमा हे
कोई सखी साटे रामा टिकुली सेनुरवा हे
दलसिंहसराय म जाक सतुआ पिसनमा हे
चलु गोरिया चलु गोरिया गगा असननमा हे

गंगा किनार आर कदलिअद अछनमा है
गंगा मइया दिहलन गमा गोदा म ललकवा है
खेलइते धुपइते गमा अलनआ ललकवा है
दुनहु चन्दरइन गमा पुलवा के मलवा है

चल री गोरी, चल हम गंगा नहा आयें। बाल-बच्चे के लिए ठेकुवे और पकवान ले लें, और थोड़ा सत्तू भी बाँध लें।

हे सखी, मेरे बड़े भाई ने अपनी चादर तान कर पर्दा कर दिया। चादर का खूँट पकड़ कर मैं स्नान करने गई। घाट पर, कोई सखी चीर पहनती है, कोई आभरण। कोई माँग में टिकुली साटती है, और कोई सिर में ईंगुर बिन्दी लगाती है।

कुलमिहरवाय जाकर सत्तू खाऊँगी।

चल री गोरी, चल हम गंगा नहा आयें।

गंगा किनारे जाकर स्नान किया। माँ गंगा ने पुरस्कार में एक बच्चा दिया। हमने खेलते बालक को गोद में लेकर घर आई।

हे सखी, माँ गंगा को फूल का हार पूजा के रूप में भेंट करूँगी।

[२१]

सासु के अँगना म पामा के पेरवा
खेलर हरि झूमरी
पान अइसन पातर मैना ननदी के
रहि गेल गरभ खेलर हरि झूमरी
सचिया बइसल आहीं सासु हे बड़तिन
मैना ननदी के घर देहु नेआर
अइया म्हइअउ भइया म्हइअउ
छोड़कि पनहुआ खेलर हरि झूमरी
मोर मैना लरिका कुँआर
दुअरा बइसल तुहुँ ससुर बड़हता
मैना ननदी के रहि गेल गरभ हे

खेलब हरि झूमरी
जब नरिअतिया अएलइ गोंयरवा
मैना ननदो के उठल वेदन
हे खेलब हरि झूमरी
जब बरिअतिया दुअरिया पर अएलइ
हँसइन कहरिया हँसइन बजनिया
चार गोर कइसे ले जाउ
चुपे रहु बजनिया चुपे रहु कहरिया
चार गोर भले विधि जनइ
हे खेलब हरि झूमरी
कनइन मइया हे कनइन बहिनिया
कहमा से लयल बेटा होरिला
चुपे रहु मइया हे चुपे रहु बहिनि
एक रात गेलि ससुररिया

सास के आँगन में पान का पेड़ है।

पान की तरह पतली मैना ननद के पैर भारी हो गये।

हे मचिया पर बैठी हुई सास मैना ननद के ससुराल जाने की तिथि नियत कर दो। उसके पैर भारी हो गये।

हे मेरी छोटी पतोहू, मैं तुम्हारे भाई को खाऊँ बाप को खाऊँ। मेरी बेटी मैना अभी कुँआरी है। जाने कैसे उसके पैर भारी हो गये?

मैना की भावज ने अपने श्वसुर से चुगली खाई—

हे दरवाज़े पर बैठे हुए मेरे ससुर, मैना ननद के पैर भारी हो गये।

जब बरात गाँव के हलके में आई तब मैना ननद प्रसव-पीड़ा से कराहने लगी।

जब बरात दरवाज़े पर आई तब बजनिये हँसने लगे। कहरिये खिल्ली उड़ाने लगे—

दो पैर से चार पैर हो गये। ओ राम, चार पैर को डोली में बिठा कर हम कैसे चलेंगे?

हे बजनिये, चुप रहो। हे कहरिये, चुप रहो। चार पैर डोली में बैठ कर बड़ी सरल रीति से आयेंगे।

माँ रो रही है। बहन आँसू बहा रही है। हे बेटा, तुम्हारी बहू के पैर से यह बच्चा कहाँ से कूद पड़ा ?

हे माँ, चुप रहो। हे बहन, आँसू मत बहाओ। विवाह की बात पक्की हो जाने पर मैं एक दिन ससुराल गया था, और तभी मेरी बहू के पैर भारी हो गये थे।

[२२]

कओन रंग मूँगिया कओन रंग मोतिया
कओन रंगे
सिया दुलहिन के दूल्हा कओन रंग
लाल रंग मूँगिया सबुज रंग मोतिया
सबुज रंगे ना
सिया दुलहिन के दूल्हा साँवरे रँग
टूटि जयतइ मूँगिया फूटि जयतइ मोतिया
बिछुड़ि जयतइ
सिया दुलहिन के दूल्हा बिछुड़ि जयतइ
बिछि लेवइ मूँगिया बटोरि लेवइ मोतिया
मनाए लेवइ
सिया दुलहिन के दूल्हा मनाए लेवइ
कहाँ शोभे मूँगिया कहाँ शोभे मोतिया
कहाँ शोभे
सिया दुलहिन के दूल्हा कहाँ शोभे
गले शोभे मूँगिया मुकुट शोभे मोतिया
पलंग शोभे
सिया दुलहिन के दूल्हा पलंग शोभे

सखी, किस रंग का मूँगा है ? किस रंग का मोती ? और दुलहिन सीता

का दूल्हा किस रंग का है ?

हे सखी, लाल रंग का मूँगा है। सब्ज रंग का मोती। और दुलहिन सीता का दूल्हा साँवले रंग का है।

हे सखी, मूँगा टूट जायेंगे, मोती फूट जायेंगे, और सीता दुलहिन का दूल्हा बिछुड़ जायेंगे।

हे सखी, मूँगा बीन लूँगी, मोती बटोर लूँगी और सीता दुलहिन के दूल्हे को मना लूँगी।

हे सखी, कहाँ मूँगा शोभित होता है ? कहाँ मोती ? और दुलहिन सीता का दूल्हा कहाँ शोभा पाता है ?

हे सखी, गले में मूँगा शोभित होता है। मुकुट में मोती। और दुलहिन सीता का दूल्हा पलंग पर शोभा पाता है।

[२३]

बारह बरिस के हमरा उमिरवा
बंसा कएलन हे
भइया कएलन हे
सखि मोरा गवनमा भइया कएलन हे
केहि जएतइ हाजीपुर केहि जयतइ पटना
से केहि जयतइ हे
शहरवाले रमुनवा
से केहि जएतइ हे
बंसा जइहेंन हाजीपुर भइया जइहन पटना
से सइयाँ जइहेंन हे
शहरवाले रमुनमा
से सइयाँ जइहेन हे
केहि जइहेंन गरिया मे केहि जइहेंन जोरिया
से केहि जइहेंन हे
पिटिन पाटन सवारी

मे केहि अइहेन हे
बबा अइहेन गरिया मे भइया अइहेन जॅरिया
मे सइयें अइहेन हे
रिटिन फाटन सवारी
मे सइय अइहेन हे
केहि लइहेन बाजुबन्द केहि लइहेन चुरिया
मे केहि लइहेन हे
रंग बेंदुल टिकुलिया
मे केहि लइहेन हे
नव जाली फुंदेनमा
मे केहि लइहेन हे
बबा लइहेन बाजुबन्द भइया लइहेन चुरया
मे भइया लइहेन हे
रंग बेंदुल टिकुलिया
मे सइयाँ लइहेन हे
नव जाली फुंदेनमा
मे सइयाँ लइहेन हे
कहाँ शामे बाजुबन्द कहाँ शामे चुरिया
मे कहाँ शामे हे
रंग बेंदुल टिकुलिया
मे कहाँ शामे हे
नव जाली फुंदेनमा
मे कहाँ शामे हे
बाँह शामे बाजुबन्द पहुँचि शामे चुरिया
लिलार शामे हे
रंग बेंदुल टिकुलिया
सिरा शामे हे

नर जाली फुदेनमा
त वाले शोभे हे

बारह वर्ष की मेरी उम्र है। हे सखी, इतनी थोड़ी उम्र में ही मेरे बाबा और भाई ने मेरा द्विरागमन कर दिया।

कौन हाजीपुर जायगा? कौन पटना? और कौन रंगून जायगा?

बाबा हाजीपुर जायेंगे। भाई पटना और मेरे बालम रंगून जायेंगे।

कौन बैलगाड़ी से जायेंगे? कौन जोड़ी से? और कौन फिटन से जायेंगे?

बाबा बैलगाड़ी से जायेंगे। भाई जोड़ी से, और मेरे बालम फिटन से जायेंगे।

कौन बाजूबन्द लायेंगे? कौन चूड़ी? और कौन बिंदुली, रंग रंग की टिकुली तथा जालीदार फुँदने लायेंगे?

बाबा बाजूबन्द लायेंगे। भाई चूड़ी और मेरे बालम बिंदुली रंग रंग की टिकुली तथा जालीदार फुँदने लायेंगे।

कहाँ बाजूबन्द शोभित होता है? कहाँ चूड़ी? और कहाँ बिंदुली, रंग रंग की टिकुली तथा जालीदार फुँदने शोभा पाते हैं?

बाँह में बाजूबन्द शोभा पाता है। कलाई में चूड़ी, सिर में बिंदुली, रंग रंग की टिकुली और चोटी में जालीदार फुँदने शोभित होते हैं।

तिरहुति

'झूमर' और 'सोहर' को यदि हम ग्राम-साहित्य निर्झरिणी का मधुर कल कल नाद कहें, तो मिथिला के 'तिरहुति' नामक गीत को फागुन का अभिसार कहना पड़ेगा। स्वाभाविकता, सरलता, प्रेमपरता का सामञ्जस्य और उच्च भावों का स्पष्टीकरण—ये 'तिरहुति' की विशेषताएँ हैं। जो साधारणतः नहीं दीख पड़ता, अदर्शनीय और अन्य के अनुमान में भी आनेवाला नहीं है उसीको व्यक्त करना 'तिरहुति' के कुशल कलाकारों का काम है। इसकी नव विकसित सलज्ज कातर यौवन शोभा के आगे साग़री के संगीत और छलकती हुई शीराज़ी सुवर्ण मदिरा के मादक उफान भी फीके पड़ जाते हैं। इसकी रचना पद्धति मुक्तक काव्य की तरह भावों की उन्मुक्त पृष्ठभूमि पर मर्यादित है। जिस तरह महाकवि सूर ने अपने वेदना व्यञ्जक गीतों में विरहाकुल व्रजाङ्गनाओं की मानसिक परिस्थिति का अङ्कन कर अपनी सफल कला का परिचय दिया है, उसी तरह 'तिरहुति' के सफल कला कोविदों ने भावों की सोम-वदन रजतवदना नागरियों के मानसिक चढ़ाव उतराव का चित्रण कर ब्रह्माण्ड में प्रतिक्षण गूँजने वाले प्राकृतिक विचारों को ही व्यक्त किया है। इसमें विरव पिण्डों से सृजितरे गुच्छ जिनके भी इस तरह नैसर्गिक मनोभावों की रचना करते हैं कि वे कैमरे के लेन्स द्वारा भी व्यक्त नहीं हो सकते।

मृगनाभि में अन्तर्हित कस्तूरी के सुगन्ध की तरह सुवासित इस मनोरम गीत-शैली के कुछ नमूने देखिये—

[१]

मोहि तेजि पिय मोरा गेलाह विदेश
कवन विधि सिखब सखि बारि वयस
नयन काजर आँचर काजर नीर

दरकि गमल सखि धनिक शरीर
मेन भेल पारमल फूल लेल बास
कओन देश पिय मोरा पड्ल उपास

मेरे सजन मेरा परित्याग कर प्रवासी हो गये। हे सखी, मेरी यह जवानी कैसे कटेगी?

हाय! मेरे ये नयन सरोवर हो गये हैं, और काजल जल (आँसू) बन गया है।

हे सखी, ये आँसू (काजल) प्रियतम के विरह में (मेरे नयन सरोवर से) दर दर गिर रहे हैं। (यहाँ तक कि) मेरी सेज खुशबू बन कर उड़ गई है, और फूलों में जा रमी है।

हाय! मेरे प्रियतम किस देश में भूले रम रहे हैं?

गीत का उपर्युक्त स्वरूप ग्रामीण है। यही गीत 'विद्यापति' के नाम से किञ्चित परिवर्तन के साथ निम्न रूप में प्रचलित है—

मोहि तेजि पिय गलाह विदेश
कोने परि खेपब बारि बयस
नैन सरोवर काजर नीर
दरकि खसल पहुँ धनिक शरार
सेज भेल परिमल फूल लेल बासे
कोन देश पिय पड़ल उपासे
भनहि 'विद्यापति' सुनु ब्रजनारि
धइरज धय रहु मिलत मुरारि

[२]

प्रथम एकादश दय पहुँ गेल
से हो रे बितल कतेर दिन भेल
श्रृतु अयमान बयस मोर गेल
तै ओ नहि पहुँ मोर दरशन देल
चाँद किरन तन सहलो ने जाय
चानन शीतल मोहि ने सोहाय

आर ने घाम सरिर यौवन भोर
दिन दिन मदन विषम सर जोर

महीने की प्रथम एकादशी तिथि को आने का वायदा कर मेरे प्रियतम परदेश चले गए, लेकिन वह निर्धारित तिथि गुज़र गई और उसे कितने दिन बीत गये ? (वसन्त) ऋतु का अन्त हो गया और मेरी युवावस्था भी बीत गई। हाय ! तो भी मेरे प्रियतम ने दर्शन नहीं दिये।

मेरे कृश (नाजुक) शरीर में अब चन्द्रमा की शीतल किरणें बर्दाश्त नहीं होतीं और चन्दन की शीतलता भी नहीं भाती।

हे सखि (सच कहती हूँ) अब मेरा धैर्य नहीं बचा (क्योंकि) कामदेव प्रतिक्षण अपने तीखे तीरों से मुझे जर्जरित कर रहा है।

उपर्युक्त गीत-शैलियों में स्पष्ट है कि 'तिरहुति' छः छः और आठ आठ पंक्तियों का तुकान्तक गीत है जिसमें दो दो पंक्तियों के एक एक चरण हैं और प्रत्येक चरण की पहली तथा दूसरी पंक्तियों की अन्तिम तुक एक सी है। लेकिन समय की रफ्तार के साथ साथ इन पुरानी गीत शैलियों की रूप रेखा में भी युगान्तर कारी परिवर्तन हुआ। पहले जहाँ दो दो पंक्तियों के एक एक चरण होते थे वहाँ धीरे धीरे चार चार पंक्तियों के एक एक चरण निबद्ध होने लगे और प्रत्येक चरण की पहली तथा दूसरी पंक्तियों की तुक मिलाई जाने के अतिरिक्त दूसरी और चौथी पंक्तियों की तुक भी मिलाई जाने लगी। इतना ही नहीं, 'तिरहुति' के चरणों के विकसित होने के साथ-साथ इसके आकार प्रकार और डील डौल का दायरा भी विस्तृत हुआ। निम्न लिखित गीत 'तिरहुति' की इस परिवर्तित और परिवर्द्धित शैली का एक सुरुचिपूर्ण नमूना है—

[१]

तिरहुति दण्डक छन्द

पहिरि चुनरि चारु चन्दन
चाँगि चहुँ दिशि नयन खञ्जन
देखय हाथ पसारि लागल
हरि न आयल रे

कत कला कय कत जगावल
कतहुँ किछु नहि शब्द पावल
एहन कुपुरुष नींद मातल
जनि रसातल रे
मध्य एकसरि गेल यामिनि
पलटि आयलि निरसि कामिनि
एहनि अवसरि जे न जागलि
धिक अभागल रे
भनथि कवि 'हरिनाथ' मन दए
मागति हाथ पछुताति रहय रन्ध्र
पाछा किदौं नींद टटल
पनर छूटल रे

एक नायिका चुँदरी पहन कर और शीतल चन्दन का लेप कर अपने खञ्जन सदृश नेत्रों को चारों ओर नचाती हुई (अपने प्रियतम के शयन-मन्दिर में) चली। उसने देखा कि उसके प्रियतम सोये हैं और शयन मन्दिर का प्रवेश-द्वार बन्द है।

उसने अनेक तदबीरें कीं और अपने प्रियतम को जगाने का प्रयत्न किया। लेकिन उसे अपने प्रियतम के जागने की आहट तक न मिली। कवि कहता है कि उस नायिका का वह निम्नमति प्रियतम नींद के नशे में इस प्रकार गर्क है कि जैसे वह भूलोक में नहीं, रसातल में हो।

अर्द्ध रात्रि बीत गई। नायिका निराश होकर लौट गई। हाय! इस अवसर पर जो नहीं जगा, वह अभागा ही है।

कवि 'हरिनाथ' कहते हैं कि जब हाथ से अवसर निकल जाने पर आँखें खुलेंगी ही, तो फिर हाथ मल-मल कर पछताने के सिवा और क्या होगा?

धीरे धीरे 'तिहुति' का भावुक हृदय वपन्तकालीन गुलाब की भाँति और भी प्रस्फुटित हुआ। लाक्षणिकता के गुरुतम बन्धन शिथिल पड़ गए। हृदय की आकुल वेदना मधुर गीत बन कर उमड़ आई, कवि की भाव-व्यञ्जना को मनोन्मेषिनी बुद्धि मिली और अस्पष्टता के अवगुण्ठन में छुपा हुआ अन्तहीन

शाश्वत सौन्दर्य शरचन्द्र की भाँति खिल उठा। उदाहरणस्वरूप 'तिरहुति' को इस नव विकसित शैली के कुछ नमूने देखिये—

[५]

श्यामल नयन मनमोहन रे
काहि गेलाह अनेके
रतेक दिवस हम हेराय रे
दुखि बजनाव देह
जहँ-जहँ हार के सिंहासन रे
आसन हँथ दासे
तहाँ बन मलयागिरि रे
लय-लय हरिनासे
आँगन मोर लखे त्रिभुवन रे
भेल ध्वजस अम्हारे
मेत्र लाटय कारि नागिन रे
कमला सहु दुम्ब-भारे
मांगन बसन तन भूषण रे
हार फूअल देशे
नागरि सुगन्ध पथिक से रे
कहु हरि व उदेशे
क पार्वा लै आयन रे
जहाँ बसे नन्दलाले
लाखन हमर त्रिफल येष रे
छाती देल शाले
'आरसराम' रमाश्रोन रे
मनना मझारे
फेरि नहिं एहि जग जनमब रे
मानुष अवतार

कमलनयन मनमोहन अनेक प्रकार की सान्त्वना दे कर चले गए।

उनके वचन पर निर्भर रह कर मैं अब और कितने दिन उनके पथ पर आँखें बिछाऊँ। जहाँ जहाँ हरि का सिंहासन है, वहाँ-वहाँ मेरा आसन भी है। और वहाँ ही अनेक प्रजाङ्गनाएँ हरि का नाम ले-लेकर वास करती हैं।

मेरे लिए मेरा आँगन निर्जन वन है, और श्रीकृष्ण की अनुपस्थिति में मेरे लिए दिन का प्रकाश भी अन्धकार-सा प्रतीत होता है।

उनके विरह में मेरे बिखरे हुए कुन्तल-कलाप काली नागिन की तरह बल खा रहे हैं।

हाय ! मैं इस दुःख का भार किस प्रकार वहन करूँ ? मेरे शरीर के वसन और भूषण मलिन हो चले और मेरे सिर के बाल भी अस्त व्यस्त हो गए।

उस ओर से आये हुए पथिकों से सुन्दरी जिज्ञासा करती है कि कहो मेरे प्राणाधार श्रीकृष्ण कैसे हैं ?

हाय ! जहाँ नन्द नन्दन रहते हैं, वहाँ उनके पास मेरा सन्देश कौन ले जाय ? उन्हें देखने के लिए मेरी आँखें तरस रही हैं, और उनकी याद कलेजे में शूल पैदा करती है।

'साहेबराम' कवि कहते हैं कि यह संसार स्वप्नमय है। इस संसार में नर तन धारण कर फिर नहीं जन्म लूँगा।

[५]

सून भवन हरि गेलाह विदेशे
कातर खेपय बारि बयेसे
सर भेल चचल फूल भेल भार
नित दिन मन एतय रहय उदास
कहि गेला हरि आएब फेर
धुरि नहिं तकलनि एकहुँ बेर
हुनकहु वचनक नहिं विसवास
हमरहु जानि सरि कैल निरास
'वासुदेव' मन भनिता लगाय

हरि हरि कहिक दिवस गमाय

वियोगिन नायिका कहती है—हाय! मेरा घर सूना है। मेरे सजन परदेश चले गये। मैं जवानी के ये दिन कैसे काटूँ?

मेरे सिर की वेणी चंचल हो रही है। फूल भार प्रतीत होता है, और मेरा यह मन सदा उदास रहता है।

मेरे सजन ने वायदा किया था कि मैं परदेश से पुनः वापिस आ जाऊँगा, लेकिन आज तक उन्होंने मुड कर देखा भी नहीं।

हे सखी, अब उनके (झूठे) वचन का कौन विश्वास करे? शायद अबला जान कर उन्होंने मुझे भुला दिया। 'वासुदेव' कवि कहते हैं—हे नायिके, धीरज धरो और 'हरि-हरि' स्मरण करके दिन बिताओ।

[६]

चललि शयन-गहि सुन्दरि रे
आनन्द-उर वृन्दा
शिर सौं ससरल घोंघट रे
जनि ऊगल चन्दा
चमइत नूपुर किंकिनि रे
पिक बल अलसानि
दुर सौं हस शब्द कर रे
घर पिय निज जानि
डरहु ने जानि चकवा शिशु रे
उर कुच युग लाजे
पवन परस उर आँचर रे
जनि भापटल बाजे
नाभि विवर सौं निकसलि रे
रोमावलि साँपे
से सौतिनि वध कारन रे
आँचर रहु झाँपे

कोई (वृन्दा) नाम की सुन्दरी आनन्द-विह्वल हो अपने प्रियतम के शयन मन्दिर में चली। उसके शिर का घूँघट खिसक गया और (बादलों से मुक्त) चन्द्रमा की तरह उसका मुख खिल उठा।

उसके चलने से नूपुर और किंकिणी के जो मधुर शब्द निकल रहे थे, वे (दूर से) ऐसे लगते थे, मानो हंस बोल रहे हों।

उसकी मधुरता ने शयन मन्दिर में सोये हुए उसके प्रियतम को मंत्र मुग्ध कर दिया, और कोयल की काकली भी बन्द हो गई।

कवि कहता है—अरे भाई, उस नायिका के हृदय प्रदेश पर जो युगल उरोज सुशोभित है, उन्हें कहीं तुम भ्रम से चकवा-शिशु न समझ लेना। पवन उद्विग्न हो कर नायिका के आँचल को स्पर्श कर रहा है, मानो बाज नायिका के (चकवा शिशुरूपी) उरोज पर आक्रमण कर रहा हो। और नायिका के नाभि विवर से जो रोमावलि फूट निकली है, वह काली नागिन है, जो नायिका की सौतिन को डँस लेने का कारण है। कवि कहता है—हे नायिके, तुम अपने नाभि विवर को आँचल से ढके रहो (जिससे रोमावलि रूपी नागिन किसी को डँसने न पाये)।

[७]

आयल कारा कारी रे धन गरजय बादल
थर थर काँपय काँपय रे सखि डर अब हारी
बिसरल बिसरल सुधि सब रे मोहि तेजल मुरारी
लहरल लहरल मोहि अब रे विरहा अगियारी
पहुँ मारा सखि कित छाजय रे मोहि करि के भिखारी
बाँचत-बाँचत प्राण नहि रे दुख भेल अब भारी

आसमान में काली-काली मेघावलियाँ उमड़ आईं, और बादल गरजने लगे। हे सखी, मेरा कलेजा थर थर काँप रहा है, और मैं जीवन से निराश हो रही हूँ। हाय! मेरे निर्दय प्रियतम ने मेरा परित्याग कर दिया, और मेरी सुधि बिसरा दी।

मेरे शरीर में विरह की आग ज़ोरों से धधक रही है। हाय! मेरे प्रियतम

मुझे निस्सहायावस्था में छोड़ कर किस देश में जा रहे हैं ? हे सखी, यह दुख मेरे लिए असहनीय है। हाय ! अब मेरे प्राण नहीं रहेंगे।

[८]

पिया अति बालक मैं तरुणी
कोन तप चुकलहुँ भेलहुँ जनी
पहिर लेल गोरी रूप चललि बजार
हटिआक लोग पुछय के इ तोहार
देओर ने मोरा ने छाट भाय
पूब लिखल छल स्वामी हमार
कि बाट र बटोहिया तोहि मोर भाय
हमरो समाद नइया दिह पहुँचाय
कहिहर बबा क किनय धेनु गाय
दुधवा पिआय पोसता लरिका जमाय

मेरे प्रियतम बालक हैं, और मैं तरुणी हूँ। हाय ! मैंने पूर्व में कौन ऐसा पाप किया, जिससे मुझे जवानी का यह अभिशाप मिला। एक दिन मैं अपने प्रियतम को गोद में ले कर बाज़ार गई। नादान बालक को गोद में देख कर बाज़ार के लोगों ने पूछा कि 'यह तुम्हारा कौन है ?' मैंने कहा—'यह न मेरे देवर हैं, और न छोटा भाई। यह मेरे पूर्व जन्म के स्वामी हैं।'

हे राह चलते हुए पथिक, तुम मेरे भाई हो। मेरा एक सन्देश लिये जाओ। तुम मेरे पिता से कहना कि वह एक दुधारू गाय खरीदें। और अपने नादान दामाद को पाल-पोसकर जवान बना दें।

[९]

सादर शयन कदम तरि हो पथ हेरथि राधा
सावन देखत हरि नयन भरि हो मेटल सब बाधा
चानन बन भेल भौंकरि हो भौंकरि भेल नारी
एक हम भौंकरि हरि बिनु हो पीतम भेल त्यागी
सासु ननद घर ससुर ही हो भैंसुर एहि ठामे

एक त गेल मनमोहन हो उधरन मेल टामे
सुनितऊँ हुनक गमनमहीं हो करितऊँ परिचारे
यादव हमरो दय गेल हो भादव सन राते
'नन्दलाल' कवि गाओल हो धीरज धरू नारी
आइ आवत हरि गोकुल हो कुब्जी गट त्यागी

कदम्ब की छाँह में कोमल शय्या पर राधा श्रीकृष्ण की प्रतीक्षा कर रही है। हाय! मैं कब आँखें भर कर प्रिय श्रीकृष्ण को देखूँगी, और मेरे सारे दुःख दूर हो जायेंगे।

चन्दन का वन सूख गया, और स्त्रियाँ भी गमगीन हो गई। एक मैं भी हूँ जो श्रीकृष्ण के बिना सूख गई हूँ, और मेरे प्रियतम विरागी हो गये हैं।

घर में सास, ससुर, ननद और भैंसुर सब मौजूद हैं। पर एक श्रीकृष्ण के अभाव से यह घर उदास मालूम होता है। यदि मैं उनकी यात्रा की बात सुनती, तो उनकी टोह भी लेती। हाय! श्रीकृष्ण की अनुपस्थिति में मेरे सम्मुख भादों की सी काली रात छायी है।

'नन्दलाल' कवि कहते हैं—हे नायिके, तुम धीरज धरो। कुब्जी का साथ छोड़ कर आज श्रीकृष्ण गोकुल अवश्य आयेंगे।

[१०]

कमलनयन मनमोहन हो बसु यमुना क तीरे
वंशी बजा मन हरलक हो चित रहै न धीरै
खन मोहन वृन्दावन हो खन वंशी बजावै
खन-खन रहै अहिर-सग हो खन मुरली लय धावै
जों हम जनितौं एहन-सन हो तजि जयता गोपाले
अपन भवन बरू तजितहुँ हो सेवितहुँ नन्दलाले

कमलनयन मनमोहन यमुना के तट पर बसे हुए हैं। उन्होंने वंशी बजा कर मेरा मन मोह लिया है, और मैं अधीर हो रही हूँ।

कभी तो मोहन वृन्दावन में विहार करते हैं, कभी वंशी बजाते हैं, कभी गोपों के साथ बाल क्रीड़ा करते हैं, और कभी वंशी ले कर दौड़ पड़ते हैं।

यदि मैं जानती कि वे ऐसे हैं और वे मेरा परित्याग कर देंगे तो मैं भले ही अपना घर छोड़ देती, किन्तु नन्द नन्दन की सेवा अवश्य करती।

[११]

जखन चलल हरि मधुपुर हो मन मुरति बिसारी
कौना रहब गोकुल बिच हो बिनु पुरुषक नारी
बन ज्यों डोलै पवन हो जल बिच डोलै सेमार
हम धनि डोलौं मोहन बिनु हो जेहन पुरइनि पात
शून्य भवन लगै मन्दिर हो पलंगो ने सोहाय
केहन करम विधि लिखलनि हो भाखि ब्रजनार

अब प्यारे श्रीकृष्ण सब का विस्मरण कर मधुपुर चले गये तो हम बिना पुरुष की स्त्रियाँ गोकुल के बीच कैसे रहेंगी?

जिस तरह वायु के झोंकों से वन काँपता है, और जल के बीच सेवार काँपता है, उसी तरह मोहन के बिना हम स्त्रियाँ कमल के पत्ते के समान प्रकम्पित हो रही हैं। आज मोहन के बिना हमारा घर आँगन सूना लगता है, और पलंग भी आनन्दमय नहीं मालूम होता।

ब्रज की नारियाँ विलाप कर रही हैं—हाय! विधाता ने हम लोगों का भाग्य कैसा खोटा बनाया!

[१२]

आदर शयन कदम तरि हो पथ हेरउ मुरारी
हरि बिनु भाँभरि भेलहुँ हो सासर भेल भारी
फूजल केश के गान्हत हो के देत सम्हारी
नयन ही काजर दहायल हो जीवन भेल भारी
जाहु ऊधो मधुपुर हो हुनकाहि पचारी
चन्द्रकला नहि जीवन हो बध लागत भारी

कदम्ब के नीचे कोमल शय्या पर आसीन हो श्रीकृष्ण का इन्तजार कर रही हूँ। हरि के बिना मैं खिन्न हो चली हूँ, और मेरा यौवन भार-सा प्रतीत होता है।

हाय! मेरे बिखरे हुए केश कौन सँवारेगा? मेरी आँखों का काजल भी बह

गया, और मेरा जीवन जंजाल हो रहा है।

हे ऊधो, आप श्रीकृष्ण को टोह में मधुपुर जायें। यदि वे नहीं आयेंगे तो मेरे चन्द्रमुख की कला जीवित नहीं रहेगी, और इसकी हत्या का पाप उन्हें ही भुगतना होगा।

[१३]

मुन्दरि चललिह पहुँ घर ना
हँसि हँसि सखि सब कर धर ना
जाइतहुँ लागु परम डर ना
जेसा शशि काँप राहु डर ना
हार टुटिय छिडिआय गेल ना
भूषण वसन मलिन भेल ना
रोय रोय कजरा दहाय गेल ना
अदकहि मिन्दुर मेटाय गेल ना
'भानुनाथ' कवि धीर धरु ना
दुख सहल सुख पाओल ना

कोई नायिका अपने प्रियतम के शयन मन्दिर में चली। उसकी हमजोलियाँ हँस हँस कर (विनोदवश) उसका हाथ पकड़ रही हैं। जिस तरह राहु के डर से चन्द्रमा काँपता है, उसी तरह वह भयाक्रान्त नायिका अपने प्रियतम के पास जाने में काँपती है।

भय से उसके वस्त्राभरण मलिन हो गये हैं और उसके गले का हार टूट कर पृथिवी पर बिखर गया है। रोते रोते उसकी आँखों का काजल और डर से उसकी सिन्दूर बिन्दी बह गई है।

कवि 'भानुनाथ' कहते हैं—हे सुन्दरी, तुम धीरज धरो। दुःख के बाद ही सुख मिलता है।

[१४]

साजि चललि ब्रज बनिता रे कर घट सब धारे
यमुना-तट पथ निहारथि रे घट कटि पर डारे

माँझ भेटल बंशीधर र रोकल हहकारे
माधवि दान यौवन-रस र हठ ठानल गाटे
गोपिन देखि अकोंचित रे मनहिं-मन विचारे
'जीवनाथ' कवि गाओल रे दय दान तोहि भर आ रे

व्रजाङ्गनाएँ हाथों में गागर लिये सज धज कर यमुना की ओर चलीं। जल से भरे हुए अपने अपने अमृत कलशों को कमर पर लिये वे यमुना किनारे किसी का इन्तज़ार कर रही हैं। लौटते समय रास्ते में ही उन्हें श्रीकृष्ण मिल गये, और उनकी राह रोक ली।

उन (कमर पर गागर लिये पनिहारिन) गोपियों से श्रीकृष्ण उनको जीवन सचित यौवन सुधा का दान माँग रहे हैं, और गोपियों के 'ना' करने पर ज़िद पर ज़िद कर रहे हैं। यह देख कर गोपियाँ मन ही-मन चिन्तातुर और शर्मिन्दा हो रही हैं।

कवि 'जीवनाथ' कहते हैं—हे गोपियां, तुम श्रीकृष्ण को अपनी आयदा यौवन सुधा का दान दो, और प्रसन्नतापूर्वक अपने अपने घर जाओ।

[१५]

पटना जाए बेसाहब परिधन पहिराएब धान हाये
भूषण गुहल धिया धरि आँचिर पहिराएब धरि माथ
काशी सौं कंगन धिया आनल दक्षिन चीर मदरासे
हार मँगाएब नूपुर मणिमय कुमारि पुरत तुअ आसे
चुप रहु चुप रहु हेम पुतरि धिया रहु गे घर अलसाए
दश दिन बितन बनवगे कामिनि प्रेम क सुजल नहाए
विमल चन्द्रमुख फूल फुलाएत लागनक बहत बतासे
मृदुल फूल-दल इत-उत डालत पुलकि-पुलकि धिया गावे

मैं पटना जाकर परिधान खरीदूँगा, और उसे अपनी पुत्री को समर्पित करूँगा, और किनारी तथा सलमें सितारे की जड़ी हुई साड़ी से उसे सजाऊँगा।

हे पुत्री, काशी से कंगन लाया हूँ, और मदरास से छींट की साड़ी। मैं मणिमय नूपुर तथा हार मँगाऊँगा, और तुम्हारी आशा पूरी होगी।

हे स्वर्ण प्रतिमा की-सी प्यारी पुत्री, चुप रह ! चुप रह ! प्रसन्न चित्त मे घर मे रह । चन्द दिनों के बाद ही प्रेम के निर्मल जल मे धुल पोंछ कर तू नवोढा कामिनी बन जायेगी । लग्न रूपी वायु के लगते ही तुम्हारा चन्द्रमा की तरह यह मुख फूल की तरह खिल जायेगा । और हे पुत्री, यौवन के आगमन से तुम्हारा प्रफुल्लित मुख रूपी सुमन तुम्हारे शरीर रूपी वृन्त पर पुलक पुलक कर अठखेलियाँ करेगा ।

[१६]

सुन्दर हैं तो सुबुधि सेयानि
मरी पियासँ पियावह पानि
के तो थिकाह कोन गाम केर
बिनु परिचय तों जाडह लिनेह
थिकहुँ पथिक सुनु सुबुधि सेयान
धनिक विरह सों भरमि मसार
सुनि सुन्दरि देल पीढा आनि
बैसु पथिक जन पिबि लिअ पानि
आवह बैसह पिब लैह पानि
जे तों खोजयह से देब आनि
एतहि रहह कतहु जनु जाह
जें तकबह से भैंटतओ बेसाह
ससुर भैंसुर मोर गेलाह विदेश
स्वामी गेल छथि हुनिक उदेश
गामक पहरू से मार हीत
निरधन पड़ोसिन सुतथि निचित
सासु मोर आन्हरि नयन नहि सूझ
बालक ननदि वचन नहिं बूझ
भनहि 'रमापति' अपरूब नेह
जेहन विरह हो तेहन सिनेह

कोई पनिहारिन कुएँ पर जल भर रही है। रास्ते का प्यासा एक पथिक आता है और उससे जल माँगता है—हे सयानी और बुद्धिमती सुन्दरी, मैं प्यास से मर रहा हूँ। मुझे जल पिलाओ। पनिहारिन ने पूछा—हे अनजान, तुम कौन हो? तुम्हारी जन्मभूमि कहाँ है? तुम बिना परिचय के बातों-बातों में ही मुझसे क्यों नेह जोड़ रहे हो?

पथिक ने उत्तर दिया—हे बुद्धिमती तरुणी, मैं पथिक हूँ और प्रियतमा के विरह में दर-दर भटक रहा हूँ।

यह सुन कर उस सुन्दरी ने पीढ़ी लाकर उसे बैठने को दी, और बोली—हे पथिक, बैठो। और यह स्निग्ध जल पी कर तृप्त हो लो। तुम्हें जिस चीज़ की दरकार हो, मैं ला कर दूँगी। तुम यहाँ ही रहो। अन्यत्र कहीं नहीं जाओ। तुम जो ढूँढोगे खरीद कर ला दूँगी। मेरे ससुर और भैंसुर प्रवासी हैं, और मेरे प्रियतम भी उन्हीं की राह में परदेश गये हैं। ग्राम का पहरेदार मेरा मित्र है। मेरी पड़ोसिन, जो कंगालिन है, रात में बेफ़िक्र हो कर सोती है। मेरी सास अन्धी है, और उसकी आँखों के नूर गायब हैं। मेरी ननद बालिका है, और अभी बोलना भी नहीं जानती।

कवि 'रमापति' कहते हैं—उस सुन्दरी नायिका का स्नेह कितना उज्ज्वल है। पथिक का जैसा विरह था वैसी ही उसको स्नेहपात्रिका भी मिल गई।

[१३]

उठु उठु सुन्दरी जाइछी विदेश
सपनहु रूप नहि मिलत उदेश
से सुनि सुन्दरि उठलि चेहाए
पहुक वचन सुनि बैसलि झमाय
उठइत उठलि बैसलि मन मारि
विरहक मातलि खसलि हृदय हारि
भनहि 'रमापति' सुनु व्रजनारि
धइरज धय रहु मिलत मुरारि

हे सुन्दरी उठो। मैं परदेश जा रहा हूँ। अब तुम्हें स्वप्न में भी मेरा दर्शन

नहीं होगा। यह सुन कर नायिका विस्मित हो उठ बैठी, और अपने प्रियतम की भेद भरी बातें सुन कर चिन्ता मग्न हो गई। वह उठने को तो उठी, लेकिन भावी विपत्ति की आशंका से फिर खिन्न हो कर बैठ गई। विरह की मतवाली वह नायिका मूर्च्छित हो कर पृथिवी पर गिर पड़ी। कवि 'रमापति' कहते हैं—हे व्रजाङ्गने, तुम धीरज धरो। तुम्हें भगवान श्रीकृष्ण अवश्य मिलेंगे।

[१८]

सुनु सुनु कोयल एहि ठाँ आऊ
मधुमय षट्रस भोजन खाऊ
कत गय नाह हमर एहि राति
विनति करब तोहर कत भाँति
पाँखि मढ़ाएब मोतिक रेख
अहँ क बनाएब सुन्दर भेख
लय लिय लय लिय लिखलहुँ पाँति
वितय चढ़य पिक आधी राति
काजर मसि नख सँ लिख देल
हृदयक कागद पारिय देल
पवन पाँखि लय लहु लहु जाऊ
मध चटल अहँ झटि दै आऊ
कहब बुझाय सुनब पहुँ बात
कथि लय कैलहुँ कामिनि कात
ओ धनि मरत विरह विष खाय
तिन सै पैंसठि राति विताय
सतत नयन सँ नीरक छोर
चलु-चलु मरद्दल लिय गै कोर
जँ नहिं जाएब आजुक राति
कामिनि देतिह जीवन माति

री कोयल, सुनो—यहाँ आओ। (प्रेम से) मधु में पगा हुआ भोजन

आओ। और, आज रात को मेरा एक काम कर आओ। मैं तुम्हारी कितनी आरज़ू मिन्नत करूँ !

मैं सोने से तुम्हारे पंख मढ़ाऊँगी। जिससे मालामुखियाँ—(तुम्हारे सौन्दर्य पर लट्टू होकर) तुमसे प्रेम करेंगी। मोतियों से अधर मढ़ा कर तुम्हारा बड़ा सुन्दर बनाऊँगा—री कोयल !

यह लो मेरे प्रवासी साजन का पत्र, जो मैंने लिखा है। आधी रात बीता चाहती है,—हृदय का कागज़ फाड़कर और आँखों के काजल की स्याही में नख की कलम डुबोकर मैंने ख़त लिखा है। हवा के पंख पर चढ़ कर धीरे धीरे उड़ ! री कोयल ! मेघ बरसा ही चाहता है, तू जल्द जा—री कोयल !

मेरे प्रियतम से मेरा सन्देश समझा कर कहना, और कान दे कर उनकी बातें सुनना। पूछना—'तुमने क्यों अपनी प्रियतमा की सुधि भुला दी ? २६२ लम्बी लम्बी रातें तुम्हारी इन्तज़ारी में काट कर तुम्हारी प्रियतमा विरह का जहर खा कर प्राण त्याग देगी। उसकी आँखों से अविरल अश्रुपात हो रहे हैं, (अजी ओ बेरहम !) चल तुम्हारी प्रियतमा तड़प रही है उसको गोद में बिठा कर सान्त्वना दे। यदि आज की रात तुमने प्रस्थान नहीं किया तो तुम्हारी प्रिया नहीं रहेगी।

[१६]

कि कहु सखि हम विरह विशेष
अपनहु तनु धनि पाव कलेशे
अरनुक आनन आरसि हेरो
चानन भरम काप कत बेरा
भरमहु निअ कर उर पर आनी
परसे तरस सरोरुह जानी
चिकुर निकर निअ नयन निहारी
जलधर जाल जानि हिय हारी

प्रियतम प्रवासी है। नायिका अपने ही शरीर को देख कर—विरह में भ्रान्त होकर भयभीत हो रही है। दर्पण में अपना ही चेहरा देख कर नायिका उसे

चन्द्र समझती और भय से प्रकम्पित हो रही है। वक्षस्थल पर भ्रम से अपने ही हाथ रख कर विरहिणी उसे कमल समझती और ललचा कर बार बार स्पर्श करती है। अपने ही केशपाश को देख कर काले बादल के भ्रम से उसका हृदय बैठ रहा है।

इस गीत का रचनाकाल सवा छः सौ वर्ष पुराना है। गीत मैथिल नाट्य कला के उद्भावक कविवर 'उमापति' का है। उमापति मिथिला नरेश हरिहरदेव के सभा पण्डित थे। हरिहरदेव का राज्य-काल चौदहवीं सदी का प्रथम चतुर्थांश अर्थात् सन् १३०३ से १३२३ तक माना जाता है। उस समय मुहम्मद तुगलक दिल्ली का बादशाह था।

यह स्थापना विख्यात मैथिल नाटक 'पारिजातहरण' की प्रस्तावना के आधार पर है।

[२०]

जखन चलल गोपीपति रे
गोकुल मेल सूने
निलपति नारि वधू ब्रज रे
रयलन्हि हरि सूने
घुरमि घुरमि घन घहरय रे
दहरय मोर छाती
चमकत चपल चहुँ दिशि रे
रत लिखवौं पाँती
चानन हृदय दगध करु रे
दुर्वह बनमाला
उछलि उछलि मन्मथ मोहि रे
मारय उर भाला
अनिल अनल सन लागत रे
जिव करे अभिघाते
कोकिल कुहुकि कुहुकि रत रे

मारय मिठ बाते
कर सों सहरि-सहरि खमु रे
बलावलि भूमी
हरि हरि कहयि खँसति महि रे
बाला घुमि घुमा
भन 'वशीधर' विरह तनु रे
विरहिनि ब्रजनारी
मन जनु कारय व्याकुल रे
तोहि भेटन मुरारी

जब श्रीकृष्ण मधुपुर चले गये तो गोकुल सूना हो गया। ब्रजाङ्गनाएँ विलाप करने लगीं—हाय! श्रीकृष्ण ने हम लोगों की हत्या कर डाली।

बादल घुमड़-घुमड़ कर—वृत्ताकार चक्कर काट कर घहर रहे हैं। छाती दहर रही है। बिजली चारों ओर चमक चमक कर कौंध उठती है। शीतल चन्दन का लेप हृदय को जला रहा है, और वनमाला दुर्वह भार की तरह खलती है। मदन उछल उछल कर कलेजे में बर्छा चुभोता है। शीतल वायु दहकती हुई अग्नि की तरह प्राणदाहक प्रतीत होती है। कोयल अपनी मीठी कूक से हृदय में शूल पैदा करती है। कलाई से चूड़ियाँ (वला+अवलि) सरक-सरक कर खिसक रही हैं।

इस प्रकार वह विरहाकुल तरुणी बार-बार श्रीकृष्ण के नाम का स्मरण कर मूर्च्छित हो-हो कर पृथिवी पर गिरती है।

कवि 'वशीधर' कहते हैं—हे विरहिणी ब्रजाङ्गने, इतना अधीर मत होओ। तुम्हें भगवान श्रीकृष्ण अवश्य मिलेंगे।

[२१]

जखन चलल हरि मधुपुर रे
ब्रज भेल उदासे
बिन यदुपति नहि जीअब रे
कर धूनय माथे

दृग चित वदन मलिन भेल रे
शिर फूजल केशे
नागरि नयन बरसि गेल रे
जनि जल अगरेसे
प्रेम परस पवि छुटि गेल रे
पहुँ मय गेल चोरा
आब जिवन नहिं जीअब रे
विष पीऊर घोरी
'धनपति' मन धैरज धरू रे
ताहि भेटत सोहागि
माधव मधुपुर आओत रे
पुनि जागत भागे

जब श्रीकृष्ण मधुपुर जाने लगे तब सारा व्रज शोक सागर में डूबने लगा। व्रजाङ्गनाएँ विलाप करने लगीं—हाय ! श्रीकृष्ण की गैरहाज़िरी में हम सब कैसे जियेंगी। सिर धुन धुन कर पछतायेंगी।

व्रजाङ्गनाओं का चित्त उदास हो गया। उनके वदन कुम्हला गये। शिर के बाल खुल कर इधर-उधर बिखर गये। उनकी आँखों से आँसू की झड़ी लग गई, जैसे अश्वलेषा नक्षत्र में बादल बरस रहे हों।

हाथ से प्रेम का पारस प्रस्तर निकल गया, और प्रियतम श्रीकृष्ण चोरी हो गये। हे सखी, अब यह जीवन क्यों धारण करूँ ? ज़हर घोल कर पी लूँगी।

कवि 'धनपति' कहते हैं—'हे गोपाङ्गने, धीरज धरो। तुम्हारा सौभाग्य अटल रहेगा। श्रीकृष्ण अवश्य मधुपुर आयेंगे, और तुम्हारे भाग्य का पुन उदय होगा।

[२२]

साजि चललि सब सुन्दरि रे
मटुकी शिर भारी
पथ मटुकी हरि रोकल रे
जनि करिय बटमारी

अलप बयस तन कोमल रे
रीति करय न जानै
धाए पड़लि हरि चरणहि रे
हठ मनह मुरारी
निसि दिन एहि विधि खेपह हे
ताहि बड़ि बुधिआगरी
आज अधर रस दय लेह हे
तब चलह मटकारी
भौंहिन खँचिय राधा बैठलि रे
देखलि हिय हारी
नदलाल निदय मेल रे
हिरदय मेल भारी
भनहि 'कृष्ण' कवि गावर चउ रे
सुनु गुनमति नारी
आज दिवस हरि सग रहु रे
अनभर जनु छाँड़ी

व्रजाङ्गनाएँ सिर पर भारी गागर लिए सज धज कर निकलीं। श्रीकृष्ण ने गागर पकड़ कर रास्ता रोक लिया।

हे कृष्ण, राहजनी मत करो। मेरी उम्र थोड़ी है, और शरीर कोमल। मैं रीति का मर्म नहीं जानती। इस प्रकार वे सुन्दरियाँ श्रीकृष्ण के चरण पकड़ कर तरह-तरह से अनुनय विनय करने लगीं। हे कृष्ण, तुम अपना यह हठ छोड़ दो।

श्रीकृष्ण ने कहा—हे व्रजाङ्गने, तुम नित्य इसी तरह टालमटोल करती हो। सचमुच तुम बड़ी चतुर हो। आज अपने अधर रस का दान दो, और तब प्रसन्न होकर अपना रास्ता लो।

राधा इस आकस्मिक विपत्ति से मुक्त होने के लिए इधर-उधर झाँक कर और सोच कर अन्त में नाउम्मीद हो कर बैठ गई।

हे सखी, श्रीकृष्ण कितने कठोर हैं। उनको इस नाजायज़ हरकत से दुख

होता है।

कवि 'कृष्ण' कहते हैं—हे गुणवन्ती, सुनो। तुम आज श्रीकृष्ण के साथ प्रेमपूर्वक दिन बिताओ, और इस अवसर पर लाभ उठाने से मत चूको।

[२३]

कतय रहल मोर माधव ना
तनि बिनु कत दुख साधव ना
हरि हरि कह ब्रजनागरि ना
चिकुर कुन्तल लट झाड़ल ना
शिर सों खसलि कारी नागिन ना
चिहुँकि उठनि नव कामिनि ना
फुलल कमल उर जागन ना
ताहि पर जौवन मारी ना
'बुद्धिलाल' कवि गाम्रोल ना
रसिक पुरुष रस बूझल ना

मेरे प्रियतम श्रीकृष्ण कहाँ रह गये ? उनकी गैरहाजिरी में मैं अब और कितने दिन तपस्या की धूनी रमाऊँ ?

ब्रजाङ्गनाएँ 'कृष्ण ! कृष्ण !' की रट लगा कर विरहाकुल हो रही हैं।

उनके सिर की वेणी खुल कर अस्त व्यस्त हो गई है, लट बिखर रही है, जैसे शिर से काली नागिन लटक कर डोल रही हो।

कभी वह नवोढ़ा तरुणी रह-रह कर चौंक उठती है, और कभी उसके युगल उरोज खिल उठते हैं। तिस पर उसकी जवानी और भी सितम ढाती है।

कवि 'बुद्धिलाल' कहते हैं कि रसिक जन ही इस रस का रहस्य समझेंगे।

[२४]

माधव कि कहब कुदिवस मोरा
अपन कर्मफल हम उपभोगल जाहि दोष नहि तोरा
जाहि नगर चानन नहि चीन्हे अइर आदर कैं राखै

जिन गुण बुझलें तनिक निरादर तापर उचित ने कोपै
पण्डल पुरुष यदि नयन गमाओल तैं नहिं करिय अभेला
जौं कामी फुल कौन सराहल तैं कि कमल गुन भेला
सुजन पुरुष निरगुन जग निन्दल जड़ के गौरव बूझै
'नन्दीपति' इहो मन दय बूझिय आन्हर कैं कि दरपन सूझै

हे कृष्ण, मैं अपने बुरे दिन के हालात क्या कहूँ ?

मैं तो अपने किये का फल भुगत रही हूँ। अपने कर्त्तव्याकर्त्तव्य के लिये तुम्हें क्यूँ दोष दूँ ?

जहाँ चन्दन के गुण दोष की परख नहीं होती, वहाँ एरण्ड की ही कद्र होगी। किसी के गुण की उचित परख न कर सकने के कारण ही कोई किसी का निरादर करता है। अतः वह क्रोध का नहीं, दया का पात्र है।

यदि विज्ञ पुरुष ज्ञान के प्रकाश से वञ्चित होकर कुछ का कुछ कर बैठें तो वह अवहेलना के योग्य नहीं। कामी के फूल की कोई कितनी ही तारीफ क्यूँ न करे, किन्तु वह कमल के फूल की समता नहीं कर पाता।

यह निर्गुण संसार विज्ञ जनों की उपेक्षा कर मूर्खों की इज्जत करता है। कवि 'नन्दीपति' कहते हैं—लेकिन यह निश्चित है कि अन्धे के हाथ में दर्पण रख देने के बावजूद भी वह देख नहीं सकता।

[२५]

माधव सब विधि थिक मोर दोष
बयस अछ्ला थिक तनु अति कोमल
तैं नहि दरश परोसे
कांच कली जौं हरि तोड़ब
तौं पुनि हएत उदासे
हयत कली पुनि रंग सुरंगित
दिन - दिन हयत प्रकाशे
निकलि सुवास आस तोहि पूरत
बैसि पिबह रस पासे

किछु दिन और धीर धरू मधुकर
जखन हएत मुबिकासे
'चन्द्रनाथ' भन अरज करू नागर
न करिए एहन गआने
दिन दिन तोहि प्रेम हम लायब
पुरत सकल बिधि कामे

हे कृष्ण, यदि देखा जाय तो सब प्रकार से मैं ही कसूरवार हूँ।

मेरी उम्र थोड़ी है और शरीर नाज़ुक जो स्पर्श करने के भी काबिल नहीं है।

हे प्रियतम, यदि तुम कच्ची कली तोड़ कर इस्तेमाल में लाना चाहोगे तो तुम्हें *निराश होना पड़ेगा। हाथ कुछ नहीं लगेगा। जब कली पूर्णरूप से प्रस्फुटित* हो जायगी तो उसके सौन्दर्य्य में स्वत निखार आ जायगा। उसकी गन्ध चारों ओर फैल कर फूट बिखरेगी। और तुम्हारी आशा पूरी होगी। उस दशा में तुम उसका मधुर रस पान कर सकोगे। अतः हे मधुकर, तुम कुछ दिन धीरज धरो। कली को विकसित हो लेने दो।

कवि 'चन्द्रनाथ' कहते हैं कि नायिका का प्रियतम अर्ज़ कर रहा है—हे तरुणी, तुम्हारा यह ख्याल गलत है कि कली के विकसित होने पर ही मधुकर उसके रस का पान करेगा। मैं तुम से प्रतिदिन प्रेम करूँगा, और मेरी मनोकामना पूरी होगी।

[२६]

प्रथम समागम मेल रे
हठहि रैनि बिति गेल रे
नव तन नव अनुराग रे
बिन परिचय रस जाग रे
से सब सग पिय तजि गेल रे
यौवन उपगत भेल रे
आब ने जिऊब बिनु कत रे

आब कि जीवन भेल अन्त रे
'नन्दीपति' कवि भान रे
सुपुरुष से करथ निदान रे

अर्थ स्पष्ट है।

[२७]

समय वसन्त पिया परदेश
असह सहए कत विरह कलेश
सुमिरि सुमिरि रहुँ नहि रह धीर
मदन दहन तन दगध शरीर
शीतल पंकज चन्द्रक माल
हृदय दहए जनि विषधर ब्याल
श्रवण दहए तन कोकिल गान
चान किरिन दह अनल समान
'हर्षनाथ' कवि मन दे गाव
रसिक पुरुष जन बुझ इहो भाव

वसन्त ऋतु है। प्रियतम प्रवास में हैं। मैं विरह की यह असह्य वेदना कब तक सहूँ!

जब प्रियतम की याद आती है तब धीरज जाता रहता है। काम की लपट से, शरीर भस्मीभूत हो रहा है। शीतल कमल और चन्द्रमा के हार—ये दोनों विषैले सर्प के फूत्कार की ज्वाला की तरह हृदय को जलाते हैं। कोयल का संगीत कानों में दाह उत्पन्न करता है, और चन्द्रमा की शीतल किरणें अंगार की भाँति जलाती हैं।

कवि 'हर्षनाथ' कहते हैं —रसिक पुरुष ही रस का रहस्य समझेंगे।

[२८]

नागर अछथि रहल परदेश
तरुण वयस कत विरह कलेश
मैल वसन तन भस्म लेपि लेल

तन दूरवि अभरन तजि देल
खन खन झाँखथि रहथि मन मारि
कोन दोष तजि गेल मदन मुरारि
भन 'चतुजन' कवि सुनिय व्रजनारि
धैरज धय रहु मिलत मुरारि

मेरे प्रियतम परदेश में ही अटक गये। मैं इस भरी जवानी में अब और कितने दिन दुख का भार वहन करूँ ?

इस प्रकार विरहाकुल हो कर उसने अपने सुन्दर आभरण का परित्याग कर मैला वस्त्र पहन लिया। और शरीर में भभूत रमा ली।

चिन्तातुर हो कर वह अनेक प्रकार के संकल्प विकल्प करने लगी। उसका चित्त उदास हो गया। हाय ! श्रीकृष्ण ने मेरे किस अवगुण के कारण मेरा परित्याग कर दिया।

कवि 'चतुजन' कहते हैं—हे व्रजाङ्गने, सुनो। धीरज धरो। तुम्हें भगवान श्रीकृष्ण अवश्य मिलेंगे।

बटगमनी

'बटगमनी' का अर्थ है—पथ पर गमन करनेवाली। यदि आप मिथिला के गाँवों में किसी मशहूर त्योहार या मेले के उत्सवों पर जायँ, और देहात की ऊबड़-खाबड़ सँकरी पगडंडी पर आँखों में काजल आँजे, सिर पर लहराते हुए बालों की चोटी गूँथे, हाथों में काँच की चूड़ियाँ पहने घेरदार साड़ी का आँचल कमर में खोंसे और एक खास नाज़ोअन्दाज़ से गाँव की युवतियों को कंधे से कंधा मिला कर अपने दर्द भरे लहजों में नशीले नग़मों को गाते हुए सुनें या वीरान दरिया किनारे से अपने घरों को लौटती हुई पनहारियों को माथे पर गागर रखे और अँगड़ाई का नक़्शा बन बन कर गीतों के ख़ज़ाने खोलते हुए देखें, तो समझ लीजिये कि सावन की तरह रस बरसाने वाला वह गीत 'बटगमनी' की पौद का है। 'बटगमनी' के रसीले झोंकों का रस पीने के लिए रसिक श्रोताओं की टोली वैसे ही टूटती है, जैसे शक्कर की गंध पाकर चींटी।

बरसात के मौसम में बाग़ों में झूले पर बैठ कर भी 'बटगमनी' गायी जाती है। क्या ख़ूब होता है उस समय का दृश्य, जब आम के ऊँचे पेड़ों की हरी़ी शाख़ों में झूलों के अड्डे होते हैं, आसमान में उड़ते उड़ते बादल आँखमिचौनी खेलते हैं, बरसाती हवा की लहरों से टकराई के नौ उम्र पौदे हिलते हैं, और देहात की कुमारी नवयुवतियाँ झूलों पर पेंगें ले-लेकर तितलियों की तरह लहराती हैं।

'बटगमनी' देहात की उस सरलहृदया कन्या की तरह है जो हरे बाजरे के खेत में बगल में टोकरी दाबे गोबर के कंडे बिछाती है। अर्थात् इसका कलाम ख़ालिस देहाती है। इसका मज़मून मँजा हुआ है जो उर्दू शायरी के 'मामला बंदी' के ढंग पर चलता है। इसका रचयिता काव्य की बारीकियों से बेख़बर है, ऐसा नहीं। वह मानव प्रकृति के सब प्रसंगों का जानकार है। उसकी प्रत्य

महीन, और आँखें दुरबीन-सी तेज़ हैं। वह जानता है कि कवि अथवा चित्रकार को अपनी कूँची बारीकी से इस्तेमाल करनी चाहिये। वरना थोड़ा भी रंग हल्का या गाढ़ा हुआ कि तस्वीर बिगड़ी। उसका मस्तिष्क पचनशील है। इस लिए *वह ओस से धुली हुई पत्तियों में भी उतना ही सौन्दर्य पाता है, जितना* कि प्रकृति के सूखे ठुंठ में। कवि शेक्सपियर के शब्दों में—प्रेमी की तरह वह सब पदार्थों को उन्मत्त की तरह देखता है। वह मिश्र देश के हबशियों में भी हेलेन की सुंदरता के देखने का आदी है।

'बटगमनी' के उपमान, उपमेय नपे तुले हैं। ईरानी शायरों की तरह उसका रचयिता हरिणी-सी बड़ी-बड़ी आँखों की उपमा नरगिस से देने की गलती नहीं करता। उसकी शायरी में 'अपनेपन' का रंग है। जिस मुल्क की हवा में वह साँस लेता है, तशबीहात—उपमाएँ भी वह वहीं से चुनता है। अपने घर के *नीम, कीकर के दरख़्त को छोड़ कर वह नाशपाती पर लट्टू नहीं होता। यही* उसकी कला है।

'बटगमनी' के भावों की बंदिश मैथिली है, और तर्ज़ रोमान्टिक साँचे में ढला है। उसकी कल्पना वैशाख सन्ध्या सी शीतल, और भाषा मिश्री की डली की तरह मीठी है। उसके कहने का ढंग साधारण होते हुए भी उसमें एक बाँकपन है, जो अहले दर्द के दिलों में दर्द पैदा करता है। कोई कोई 'बटगमनी' को 'सजनी' भी कहते हैं। इसलिए कि गीत के प्रत्येक चरण के प्रथम और तृतीय वाक्य खंड के अंत में 'सजनि' शब्द बार-बार आते हैं। 'बटगमनी' के दो भेद हैं [१] संयोग—सुखांत, [२] वियोग—दुखांत।

उदाहरण स्वरूप इस शैली के कुछ गीतों का रसास्वादन कीजिये।

[१]

जनमल लौंग दुपत भेल सजनि गे
पर फूल लुबधल जाय
साजी भरि-भरि लोढ़ल सजनि गे
सेजहीं दय छिरिआय
फुलक गमक पहुँ जागल सजनि गे

छाडि चलल परदेश
बारह बरिस पर आयल सजनि गे
रकवा लय सन्देश
ताही सौं लट झारल सजनि गे
रचि रचि कयल शृङ्गार

हे सखी, लौंग के बीज अंकुरित हुए, और उसमें दो पत्ते उग आये।

काल पाकर वह फल फूल से लद गया।

तब मैंने डाली भर भर कर उसके फूल इकट्ठ किये और फिर उन्हें प्रियतम की सेज पर बिखेर दिया।

उन फूलों की गंध से मेरे प्रियतम की नींद टूट गई, और वह मुझे छोड़कर परदेश चले गये।

हे सखी, वह पुनः बारह वर्ष पर वापिस आये, और मेरे लिए अपने साथ कंघी उपहार में लाए।

मैं ने उसीहुि अपने उलझे हुए बालों को सँवारा, और रच रच कर शृङ्गार किया।

यह गीत इस प्रकार भी गाया जाता है—

लौङक गाछ रोपल मेल सजनि गे
फल फूल झुबुधल डारि
खोइछा भरि तोरल रौंपत भरि सजनि गे
सेज भरि देल छिरिआय
फुलक गमक पहुँ जागल सजनि गे
उठि पहुँ जाइत बिदेश
ओलए सँ पहुँ लौटत सजनि गे
की हव लाओत सनेश
दर्पण ककवा मिसिया सजनि गे
सिनुरा कामि विशेषे
ओहि ककहा केश सक्रव सजनि गे

रचि-रचि करब सिंगारे
लय दर्पण मुँह देखव सजनि गे
मिसिया सिनुरा धारे

ये या इस प्रकार के कुछ गीत विद्यापति के नाम से प्रसिद्ध हैं। इनमें कुछ तो 'विद्यापति पदावलि' में स्थान पा चुके हैं। पर मिथिला के गाँवों में इस प्रकार के गीत जुदा-जुदा लिबासों में मिलते हैं। उनका अपना एक अलग रंग है। गीत की अन्तिम पंक्तियों में 'विद्यापति' के नाम के स्थान पर अन्यान्य मैथिल ग्रामीण कवियों के नाम जुड़े हुए हैं। आश्चर्य तो यह है कि मिथिला में विद्यापति जैसे दर्जनों (प्रायः सौ-डेढ़-सौ) लोक-कवि, जैसे—दामोदर, दुखभंजन, हर्षनाथ, जीवनाथ, कुँवर, प्रीतिनाथ, गोविन्द मिश्र, मधुसूदन मिश्र, रमापति न न्दीपति, मेघदूत, मँगनीराम, गंगादास, उमापति, चन्द्रनाथ, श्रीनिवास, रत्नपाणि, साहेबराम, फतुरलाल, कर्ण जयानन्द आदि पाये जाते हैं, और उनके रचे हुए गीत विद्यापति के अच्छे-से अच्छे गीतों का मुकाबिला करते हैं।

[२]

जखन गगन घन बरसल सजनि ग
सुनि हहरत जिव मोर
प्राननाथ दुर देश गेल सजनि ग
चित भेल चन्द्र चकोर
हमहुँ एकाकिनि कामिनि सजनि गे
दामिनि दमकि चहुँ ओर
दामिनि कतेक दुखौलक सजनि गे
अब ने बचन जिव मोर
झींगुर झमकत चहुँ दिशि सजनि गे
कोयल कुहुकत मोर
से सुनि जिय घबरायल सजनि गे
यौवन क्यलक थोर

हे सखी, जिस समय आकाश में बादल बरसते हैं, उस समय मेरा कलेजा काँप उठता है।

हे सखी, मेरे प्राणनाथ दूर देश में जा विराजे हैं, और मेरा चित्त चन्द्र के चकोर-सा अधीर हो रहा है।

मैं एकाकिनी अबला हूँ, और यह दामिनी दसों दिशाओं में रह रह कर चमक उठती है।

हे सखी दामिनी ने मेरा दिल कितना दुखाया। अब मेरा जीना कठिन जान पड़ता है।

हे सखी, चारों ओर झींगुर और मयूर शोर मचा रहे हैं, और कोयल कुहु कुहु की आवाज़ दे रही है जिसको सुन-सुन कर मेरा मन विचलित हो रहा है।

हाय! मेरी जवानी ने मेरी बड़ी दुर्गति की!

गीत का यह ग्रामीण रूप है। गाँवों में औरतों की ज़ुबान पर यह इसी वेश भूषा में विराजमान है। लेकिन 'विद्यापति' के नाम के साथ पिरोया जा कर यह इस प्रकार गाया जाता है—

> सघन गगन घन गरजल सजनि गे
> सुनि हहरल जिव मोर
> प्राननाथ परदेश गेला सजनि गे
> चित भेल चान चकोर
> एकलि भवन हम कामिनि सजनि गे
> दामिनि लेल जिव मोर
> दामिनि दमसि डेराओल सजनि गे
> आब ने रंचत जिव मोर
> भगोला भजन करु सजनि गे
> रहल कथा न विशेष
> भमहरा लीखि पठाओल सजनि गे
> रहल कुसुम - घन - शेष
> भनहि 'विद्यापति' गाओल सजनि गे

मन गुनि झरिय उदासे
मन सँ बड़ धैरज थिक सजनि गे
भमर आओत तोहि पासे

उपर्युक्त दोनों गीतों की रेखाङ्कित पंक्तियों पर गौर कीजिये।

[३]

एकसरि कोन पर गेमब सजनि गे
युग सम यामिनि याम
कत नव हृदय निरोधब सजनि गे
कतहु ने हाय विश्राम
जतेक अतुल गुन गौरव सजनि गे
तनि बिनु मन दुरि गेल
की कहु अपन करम फल सजनि गे
पहुँ नहि दरशन देल
काहि कहुअ दुख के बुझ सजन गे
सपनहुँ बिसरल हास
एतेक जतन करि हारि बिनु सजनि गे
कुमुदिन न हयत प्रकाश
'भानुनाथ' कवि मन गुनि सजनि गे
करु हृदय अभिराम
रस लोलुप पहुँ आओताह सजनि गे
पुरत सरल मन काम

हे सखी, मैं यह ज़िन्दगी अकेली किस तरह बिताऊँ ? रात्रि का एक प्रहर मेरे लिए युग बराबर बीत रहा है।

इस नव उम्र दिल को जितना ही वश में करने की कोशिश करती हूँ, त्यों ही यह विवश हो रहा है। जीवन के जो शक्तिदायक गुण-गौरव थे वे प्रेमातिरेक में काफ़ूर हो गए।

हे सखी, मैं अपने खोटे भाग्य का क्या वर्णन करूँ ? मेरे पत्थर दिल सनम ने जाने क्यों दर्शन नहीं दिया ?

मैं अपनी जीवनी किससे कहूँ ? मेरी ज़िन्दगी की मुसीबतें किसको यक़ीन आयेंगी ?

मेरी वह आनन्द की दुनिया स्वप्नवत् हो गई है।

हे सखी, चाहे लाख यत्न किया जाय, लेकिन क्या चन्द्रमा के बिना कुमुदिनी का भावुक हृदय खिल सकता है ?

कवि 'भानुनाथ' कहते हैं—हे नायिके, अपने दर्द भरे दिल में चैन लाओ। तुम्हारे रस-लोभी साजन अवश्य आयेंगे और तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी।

कहीं कहीं गीत के अंत में निम्नलिखित पंक्तियाँ भी मिलती हैं—

जैसो अनेक तपय करि सजनि गे
ककर पुरय वर माङ्ग
भींजौ बरस लख सागर सजनि गे
कुमुदिनि होए परवान

[४]

ऋतु बसन्त तिथि पचाम सजनि ग
फुलि गल सब वन फूल
कोकिल करथि कूक रव सजनि ग
आनन्द बन मे भूल
पान सुमन-रस कर अलि सजनि गे
विरहिनि दुख केर मूल
सकल सुमन केर सौरभ सजनि गे
लै बह पवन कधूल
हमर कत कत लोभित सजनि गे
देल मोहिं सुधि बिसराय
जो ऋतुराज सन्य सुनु सजनि ग
प्राननाथ देता लाय

जेता बसन्त अओता पुनि सजनि गे
गत यौवन नहि आय
कर्म अभाग्य लिखल अछि सजनि गे
के दुख हमर मिटाय

हे सखी, आज वसंत ऋतु की पंचमी तिथि है। वन बागों में रंग विरंगे फूल खिल गये हैं।

कोयल अलमस्त होकर आनन्दवन में कूक रही है। और हे सखी, भौंरा खिले हुए फूलों का रस पी रहा है, जो विरहिणियों के दुख का मूल कारण है।

पवन तरह तरह के फूलों का सौरभ बटोर कर उन्हें इधर-उधर बखेर रहा है। हाय, इस समय मेरे प्रियतम किस देश में छा रहे हैं कि उनने मेरी सुधि बिसरा दी।

हे सखी, सुनो! यदि यह ऋतुराज सत्य है, तो मेरे प्राणनाथ को बुला कर अवश्य अपने नाम को सार्थक करेगा।

वसंत जायगा, और फिर लौटेगा, लेकिन मेरी यह जवानी फिर नहीं लौटेगी।

हे सखी, *विधाता ने मेरी तक़दीर खोटी बना दी। हाय! अब मेरे इस दुख* का उपचार कौन करेगा?

[५]

पीतम पीत लगाओल सजनि गे
बसल जाय कोन देश
हमरो देखाय देहु तोहि सजनि गे
जायब हुनक उदेश
जोगिनि वेस बनायब सजनि गे
जटा बनायब केश
कर कमडल झोरी लय सजनि गे
करब अटन परदेश
कवि 'दुखभजन' कह सुनु सजनि गे
धीर धरु दुर हयत क्लेश

हे सखी, मेरे प्रियतम प्रीति लगा कर किस देश में चले गये ? मुझे उनका पता बतला दो। मैं उनकी खोज लूँगी।

हे सखी, मैं योगिन का वेश धर कर अपने बालों की जटा बनाऊँगी, और हाथ में कमण्डल और झोली लेकर परदेश यात्रा करूँगी।

कवि 'दुखभंजन' कहता है—हे नायिके, तुम धीरज धरो। तुम्हारा दुख अवश्य दूर होगा।

[६]

अकेलि भवन नहि जायब सजनि गे
हमर वयस थिक थोर
काँपय हृदय लखन सुनु सजनि गे
छाड़ि दिअ कर अब मोर
शिखर तरुण चढ़त जौं सजनि गे
राइब पर्यंक पद ओर
तखन प्रयोजन अहूँ के न सजनि ग
अपनहिं जायब ताहि कोर
'मेघदूत' कवि भाखोल सजनि गे
ए हेतु जनि करु शोर

हे सखी मैं अपने प्रियतम के शयन-कक्ष में अकेली नहीं जाऊँगी। अभी मेरी उम्र थोड़ी है, और मेरा कलेजा काँप रहा है। इसलिए मेरा हाथ छोड़ दो।

हे सखी, जब मैं जवानी के उच्च शिखर पर चढ़ूँगी, तो मैं स्वयं प्रियतम के चरणों की सेवा करूँगी।

उस समय तुम्हारा कुछ भी प्रयोजन नहीं रहेगा। मैं खुद ही प्रियतम की गोद में जा बैठूँगी।

इसलिए 'मेघदूत' कवि कहता है कि हे सखी, अब तुम व्यर्थ का कोलाहल मत करो।

[७]

जेठ मास अमावस सजनि गे

सब धनि मगल गाऊ
भूषण वसन ' यतन कए सजनि गे
रचि-रचि अग लगाऊ
काजर रेख सिंदुर भल सजनि ग
पहिरथु सुबुधि सयानि
हरखित चललि अछयवट सजनि ग
गबइत मगल खानि
घर घर नारि हँकारल सजनि गे
आदर सँ सँग गेलि
आइ थिक बरसाइत सजनि गे
तैं आकुल सब भेलि
घुमड़ि घुमड़ि जल ढारल सजनि ग
चौंटत अछत सुपारि
'फतुरलाल' देता आसिस सजनि गे
जीवथु दूलहा दुलारि

हे सखी, आज जेठ महीने की अमावस्या की शुभ तिथि है। अत सब स्त्रियाँ मिल कर मगल गान करें। और हे सखी, आज वस्त्राभूषण से सज धज कर अपने शरीर को अलंकृत करें।

हे सखी, बुद्धिमती देवियाँ आँखों को काजल और माथे को सिन्दूर बिन्दी से सुशोभित करें।

हे सखी, वटसावित्री की पूजेच्छुक स्त्रियाँ प्रसन्न चित्त से मगल-गान करती हुई अक्षयवट को चलीं।

हे सखी, घर घर की स्त्रियाँ आमंत्रित हुईं और वे सब आदरपूर्वक उनके साथ चलीं।

हे सखी, आज 'वटसावित्री' का शुभ पर्व है। इसलिए सभी स्त्रियाँ पूजा के लिए उत्सुक हो रही हैं।

हे सखी, वे सभी स्त्रियाँ वटवृक्ष के इर्द गिर्द घूम घूम कर जल ढाल रही

हैं और अदन तथा मुसरो बाँटती हैं।

'फतुरलाल' कवि मंगल कामना करते हैं कि दुल्हा और दुलहिन चिर काल तक जीवित रहें।

यह गीत 'बटसाविश्री' के नाम से प्रसिद्ध है। इद 'बटगमनी' का ही है।" 'बटसाविश्री या बटगमनी का प्रत्येक चरण चार चार खंड पंक्तियों का संग्रह होता है, जिसमें दूसरी और चौथी खंड पंक्तियों की तुक एक-सी होती है, लेकिन पहली या तीसरी अथवा दूसरी या चौथी खंड पंक्तियों की मात्राएँ प्रायः एक सी नहीं होतीं।

लोक-साहित्य में 'बटसाविश्री' का रचनाकाल पुराना लगता है। इसलिए पूर्व और उत्तर 'बटसाविश्री' काल की रचनाओं में महान अन्तर है। पूर्व 'बटसाविश्री' काल की रचनाएँ अस्पष्ट हैं और उत्तर 'बटसाविश्री' काल की स्पष्ट। पूर्व 'बटसाविश्री' काल की रचनाओं में उनके रचयिताओं के नाम मुश्किल से पाये जाते हैं, लेकिन उत्तर 'बटसाविश्री'-काल की रचनाएँ अपने रचयिताओं के नाम से सुशोभित हैं। उपर्युक्त गीत-शैली उत्तर 'बटसाविश्री' काल की रचनाओं का एक लोकप्रिय नमूना है।

'बटसाविश्री' अथवा स्त्रियों की पूजा का पर्व है। यह जेठ महीने की अमावस्या तिथि को मनाया जाता है। इसमें स्त्रियाँ अथवा चिर सुहाग प्राप्त करने के लिए वटवृक्ष की पूजा करती हैं। पौराणिक आख्यान है कि इसी दिन वटवृक्ष के नीचे सत्यवान की मृत्यु हुई थी, और सती सावित्री ने अपने पातिव्रत्य के प्रभाव से उनके लिए पुनर्जन्म प्राप्त किया था। यह पर्व मिथिला में विशेष रूप से प्रचलित है। इस पर्व के अवसर पर जो गीत गाये जाते हैं, वे 'बटसाविश्री' के नाम से प्रसिद्ध हैं।

[८]

चहुँ दिसि हेरि पथ हेरि सजनि गे
नयन बहै जलधार
भरनो ने भादव दिवस निसि सजनि गे
बरसो में कोन परकार

एते दिन नयन प्रम छल सजनि गे
दुहुँक प्रान छल एक
पिय परदेश गेल निरदै भेल सजनि गे
की कहब तनिक विवेक
कुदिवस रहत कतेक दिन सजनि गे
के मोहि कहत बुझाय
विह विपरीत भेल सहजहिं सजनि गे
के मोर हैत सहाय
'रण जयानन्द' गाओल सजनि गे
मन जनु करिय मलीन
धइरज धरिय कमलमुखि सजनि गे
भमर करत मधुपान

हे सखी प्रियतम के पथ पर आँखें बिछाए चकित होकर चारों दिशाओं में हेर रही हूँ। आँखों से सावन-भादों की झड़ी लग रही है। भवन नहीं भाता। दिन-रात पहाड़ से लगते हैं। क्या करूँ, क्या नहीं ? समझ में नहीं आता !

हे सखी, इतने दिनों तक तो ज़िंदगी में जुदाई की घड़ियाँ नहीं आईं। मेरे और उनके—प्रियतम के प्राण एक थे। किंतु, जाने क्यों प्रवास में जाने पर उनने रंग बदल दिया। उनकी सुबुद्धि का अधिक क्या परिचय दूँ ?

हे सखी, मुसीबत के ये काले दिन जाने कब तक रहेंगे ? इसकी भविष्य वाणी कौन करे ? देखती हूँ, विधाता सहज ही मेरे विपरीत हो गये। हाय ! इस अवसर पर मेरी कौन मदद करेगा ?

कवि 'जयानन्द' कहते हैं—हे सुन्दरी, तू मन म्लान मत कर। हे कमल-मुखी, धीरज धर। तेरा मधुकर (प्रियतम) तेरे मधु का (अवश्य) पान करेगा।

[६]

चन्द्रवदनि नव कामिनि सजनि गे
यामिनि अति अन्हियारि
सखि सग चललि केलि रहि सजनि गे

कर-पंकज दीप बारि
पवन झकोर ओर बहु सजनि गे
तैं धरु अंचल झाँपि
देखि उरज अति उपत सजनि गे
दीप शिखा उठु काँपि
धर धर करत झुकत फेर सजनि गे
भाल धुनै शिर माथ
हाथ लै दैव जन्म देल सजनि गे
'चतुरानन' बिन हाथ

हे सखी, वह चन्द्रमुखी तरुणी अपनी सखियों का साथ लेकर शयन-मंदिर में चली। रात अत्यन्त अँधेरी थी। इसलिए उसने अपने कर-कमल में दीपक जला कर हाथ लिया।

हे सखी, पवन का झोंका रह रह कर दीप की बत्ती को झकझोर डालता था। फलस्वरूप उसने दीये को अपने अंचल की ओट में लुका लिया।

वहाँ तरुणी के उन्नत उभरे हुए उरोज को देख कर दीप शिखा चंचल हो उठी। उसकी लौ कभी धर धर कर चमक उठती, कभी झपने लगती, और कभी शिर धुन धुन कर पछताती।

कवि 'चतुरानन' कहते हैं—हे परमात्मा, काश तुमने उस (निरपाय) दीपक को दो हाथ दिये होते !

[१०]

एकमरि कौने पारि हरिहर सजनि गे
अधल विरह मँझधार
कतहु ने देखिअन्हि यदुपति सजनि गे
जनि बिन जगत अन्हार
कतेक जतन हम की कैल सजनि गे
के कैल इ उपकार
कुब सँ तन अवलम्ब मेल सजनि गे

परल विरह दुख भार
तन हम तिलौ न ऑंतर सजनि गे
दुनु हुक प्रान छल एक
परदेश गेल परवस भेल सजनि गे
को कहव तनिक विवेक
सुकवि कहधि परमावधि सजनि गे
उचित न होय बखान
क्यो पुनि रस बुझि वश होय सजनि गे
क्या पुरइन जम पानि

हे सखी, श्रीकृष्ण ने जीवन की किस मृदुता के आधार पर (जीवित रहने के लिए) मुझे अकेली विरह की मँझधार में छोड़ दिया ?

हे सखी, चारों ओर दृष्टि फिरा कर देखती हूँ। उन्हें कहीं नहीं देखती। मेरे एकाकीपन में हिस्सा बँटानेवाला कोई नहीं रहा। (सच पूछो तो) उनकी अनुपस्थिति में यह दुनिया अँधेरी लगती है।

हे सखी, मैंने किसका क्या बिगाड़ा ? किस (ममता हीन) डायन ने विरह के नुस्खे का यह कड़वा प्रयोग किया है ?

हे सखी, मेरा यह फूल सा कोमल शरीर सूख चला, और सिर पर विरह के दुख का (दुर्वह) पहाड़ टूट पड़ा।

हे सखी, हम दोनों एक दूसरे से पल मात्र भी नहीं बिछुड़ते थे। दोनों के प्राण एक थे।

लेकिन प्रवास में जाने पर वह परवस हो गए। मैं उनकी सुबुद्धि का अधिक क्या परिचय दूँ ?

'सुकविदास' कहते हैं—हे सखी, मतलब न सधने के कारण (सहसा अंतिम बिंदु, 'क्राइमैक्स' पर पहुँच कर) किसी की इल्मियत या इन्सानियत में संदेह करना उचित नहीं दीखता।

(स्वाभाविकता का तक़ाज़ा है कि) कोई रस का रहस्य समझ कर उसके वशीभूत हो जाता है, और कोई जल में कमल के पत्ते की तरह निर्लेप रहता है।

[११]

नव यौवन नव नागरि सजनि गे
नव तन नव अनुराग
पहुँ देखि मोर मन बान्हल सजनि गे
जेहन जल चन्द्राव
बाढ़ल विरह पयोनिधि सजनि गे
कहलाकेँ औषध आधि
कत दिन हेरब दुहुक पथ सजनि गे
आब बैसलहुँ हिय हारि
हम पड़लहुँ दुख सागर सजनि गे
नागर हमर कठोर
जानि नहि पड़ल एहन मन सजनि गे
दग्ध करत जिय मोर
धर्म 'नयनाथ' गाओल सजनि गे
क्यो जनु करै कुरीति
धीरज धरहु कलावति सजनि गे
आओत कान्त बहुरीति

अर्थ स्पष्ट है।

[१२]

पहुँ के दरस सुख छूटल सजनि गे
जखन आयल हम गामे
लागल मदन शिर महरत सजनि गे
कै दोख करब सयाने
बिसरि देव नहि बिसरत सजनि गे
हुनि मुख पङ्कज ध्याने
विरह विकल मन तलफत सजनि गे
दिन दिन झूर भमाने

जौं हम जनितहुँ एहन सन सजनि गे
हेत आन सौं आने
चिलै नेह लगाओल सजनि गे
आब नहिं बाँचत प्राने
भन 'यदुनाथ' सुनहु सखि सजनि ग
सज्जनि हुनकरि नामे
हमर कहल बुझि राखब सजनि गे
विधि पुरावत कामे

हे सखी जब मैं नैहर जाऊँगी तब प्रियतम के दर्शन दुर्लभ हो जायेंगे। मदन के प्रकोप से अहर्निश प्राण जला करेंगे।

हाय! क्या देख कर मैं धीरज बाँधूँगी?

हे सखी, मैं अपने को उन्हें भुलाने न दूँगी, और न उनके मुख कमल का ध्यान मेरे स्मृति पटल से क्षण भर के लिए हटेगा।

हे सखी, मेरा मन विरह से व्याकुल हो कर तड़पा करेगा, और यह शरीर खिन्न हो कर हाड़ पिंजर रह जायगा।

हे सखी, यदि मैं जानती कि प्रेम के फल इतने कड़ुवे हैं—स्वाति का जल अग्नि का कण बन जायगा तो नेह क्यूँ लगाती?

अब प्राण नहीं रहेंगे।

कवि 'यदुनाथ' कहते हैं—

हे सखी, नायिका का प्रियतम नेक है। मेरे कथन पर विचार कर लेना। उसकी मनोकामना पूरी होगी।

[१३]

अगहन सुधाकर विहुँसल सजनि गे
हिया दगध कर मोर
शरद निशाकर ऊगल सजनि गे
बादल विरह तन जोर
कक्हा केसर भूषन सजनि गे

लायल पहुँ मोर आज
कपट सुतल पहुँ पाओलि सजनि गे
तेजल सकल मन लाज
मधुर वचन हँसि पुछलहुँ सजनि गे
किये पहुँ रहलहुँ रूसि
लखन पिया हँसि भाजल सजनि गे
दीप बताओल फूँकि
'सहसराम' भन मन दय सजनि गे
पूरल सकल मन काम
पहुँ सग सुन्दरि मुद भरि सजनि गे
शोभित चारु याम

हे सखी, जब नीलाकाश का यह चन्द्रमा हँसता है, तब हृदय पीड़ा की आग में जलने लगता है।

उधर गगन में शारदेन्दु खिला नहीं कि इधर शरीर में विरह की तरंग तरंगित हो उठी।

आज मेरे प्रियतम प्रवास से लौट कर आये। और मेरे लिए उपहार में कपड़े, केसर और भाँति भाँति के आभरण लाये।

हे सखी, प्रियतम दबे पाँव आकर और शर्म को दूर कर सेज पर छल की नींद सो गये।

मैं ने हँस कर मीठे स्वर में पूछा—'क्या तुम रूठ तो नहीं गये ?'

तब उनने फूँक मार कर दीप बुझा दिया, और प्रमत्त होकर प्रेम वार्ता की।

कवि 'सहसराम' कहते हैं—हे सखी, तरुणी की मनोकामना पूरी हुई। उसने प्रियतम के साथ आनन्द विभोर होकर रात बिताई।

[१४]

अभिनव मोर वयस अति मननि गे
पहुँ नहि मानल ताहि
पल अतंक धाउल सेज सजनि गे

से हम की कहब ताहि
चोलिक बन्द खोलि देल सजनि गे
कुच युग नख क्षत भेल
बेरि बेरि वदन वदन दुख सजनि गे
निरदय पहुँ मोर भेल
तोडलन्हि ग्रीवक हार मोर सजनि गे
कैलन्हि अति बल जोरि
मे सब हम कत भापब सजनि गे
पहुँ भेल कठिन कठोर
फूजल चीर चिकुर लट सजनि गे
अङ्कम गहि फेर लेल
नहिं छल जीवक भरोस मोर सजनि गे
ता अरूणोदय भेल
भन 'ब्रजुजन' सुनु नागरि सजनि गे
इ थिक सुखक निदान
दिन दिन ताहि अधिक होय सजनि गे
गुनवन्त रति रस जान

अर्थ स्पष्ट करने की ज़रूरत नहीं।

[१५]

अवधि मास छल माधव सजनि गे
निज घर गेलाह बुझाय
से दिन अब नियरायल सजनि गे
धैरज धैलो नहि जाय
अति आकुल भेलि पहुँ बिनु सजनि गे
उर अछि अनि सुकुमारि
उझकि नयन पथ हेरय सजनि गे
अजहुँ ने आयल मुरारि

खन-खन मन दहो दिशि सजनि गे
बिरह उठय तन आगि
से दुख काहि बुझायब सजनि गे
बहुत करेजा लागि
हरि गुन सुमिरि बिकल भेल सजनि गे
कोन बुझत दुख मोर
जो 'सनाथ' कवि गाओल सजनि गे
आओत नन्द किशोर

नायिका प्रोषितभर्तृका है। पति ने जिस दिन लौट आने का वचन दिया था, वह दिन टल रहा है। अतः नायिका अपनी सखी से कह रही है—

हे सखी, वसन्त ऋतु का महीना था, जब कि मेरे प्रियतम ने लौट आने का वचन दिया। वह दिन अब निकट आ गया है और मेरे प्राण छटपटा रहे हैं।

हाय! प्रियतम के वियोग में मैं अधीर हो रही हूँ। क्योंकि मेरा कलेजा अत्यन्त कोमल है। हे सखी, मेरी आँखें आतुर होकर प्रियतम को ढूँढ रही हैं। लेकिन मेरे प्रियतम आज भी नहीं आये।

मेरा चंचल मन सजन की खोज में प्रतिक्षण बावला बन दशों दिशाओं में भटक रहा है, और शरीर में विरह की अग्नि धधक रही है। हे सखी, मैं यह दुःख किससे कहूँ ? मैं किसकी गोद में लेटूँ ?

हे सखी, प्रियतम के गुण का स्मरण कर मैं विकल हो रही हूँ। हाय! मेरी इस विरह वेदना का कौन अनुभव करे !

कवि 'सनाथ' कहते हैं—हे विरहिणि तुम धीरज धरो, तुम्हारे श्रीकृष्ण आज अवश्य आयेंगे।

[१६]

कतेक यतन भरमाओल सजनि गे
दय-दय शपथ हजार

सपथहुँ छल जौं जनितहुँ सजनि गे
नहि करितहुँ ग्रंकवार
ग्रावि जगत भरि भरवि न सजनि गे
कयो जनु करै प्रतीति
मुख सो ग्रधिक बुभावथि सजनि गे
पुरुषक कपटी प्रीति
बाजथि बहुत भाँति सो सजनि गे
वचन राखथि नहिं थीर
तनुक हिया मोरा दगधल सजनि गे
ज्यो तृण ग्रनल समीर
गुन ग्रवगुन सभ बुभलौन्ह सजनि गे
बुभलैन्हि पुरुषक रीति
ग्रन्तहिं यह निरधारल सजनि गे
पुरुषक कपटी प्रीति

हे सखी, छलिया प्रियतम ने कितने यत्न से, हज़ारों शपथ दे दे कर मुझे प्रेम की सँकरी गली में भरमाया।

अगर मैं जानती कि शपथ में भी मकर फरेब है, तो मैं उन्हें इतना गले न लगाती।

हाय ! दुरंगी दुनिया की इस करतूत पर अब कोई कैसे विश्वास करे ? मेरे प्रियतम ऊपर से डींग हाँकते हैं लेकिन उनकी प्रीति भीतर से खोखली है।

तुर्रा यह कि वह अपनी सचाई का अनेक प्रकार की सूक्तियों का हवाला दे देकर ढिंढोरा पीटते हैं लेकिन उनका वचन गाड़ी के पहिये की तरह अस्थिर है।

(सच कहती हूँ) उनकी इस संगदिली से मेरा कोमल कलेजा दग्ध हो गया है, जैसे तिनका अग्नि का स्पर्श पाते ही वायु के झोंकों के साथ धधक उठता है।

हे सखी, (मैं जो कहना चाहती हूँ, वह यह है कि) मैंने पुरुषों के साथ रह कर उनके गुण अवगुण और रीति नियम को अच्छी तरह परख लिया है, और अंत में इस नतीजे पर पहुँची हूँ कि उनकी प्रीति कपट से भरी होती है।

जाइत देखल पथ नागरि सजनि गे
आगरि सुबुधि सेयानि
कनकलता सनि सुन्दरि सजनि गे
विहि निरमा आनि आनि
हस्तिगमन सनि चलइत सजनि गे
देखइत राजदुलारि
जनिकर एहन सोहागिनि सजनि गे
पाओल पदारथ चारि
नील वसन कटि घेरल सजनि गे
शिर लेल कवरि सम्हारि
तापर भँवरा पिवय रस सजनि गे
बइसल पाँख पसारि

कोई नायिका अपनी सहेली से कह रही है—

हे सखी मैंने रास्ते में एक बुद्धिमती सहज गुण विभूषित तरुणी को आते हुए देखा है।

वह कनकलता-सी सुन्दरी है। मुझे लगा कि विधाता ने सौंदर्य की उस स्वर्गीय प्रतिमा को स्वयं अपने हाथों गढ़ा है।

उसकी चाल मतवाली हथिनी की तरह है, और वह देखने में राजकुमारी की तरह चित्ताकर्षक है।

हे सखी, जिस प्रियतम की वह दुलहिन है, उस बड़भागी ने धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष सांसारिक चारों पदार्थों को प्राप्त कर लिया है।

उसकी कटि नील रंग की साड़ी से अलंकृत है, और उसके शिर पर चोटी खींच कर गूँथी हुई है, जिसको देखने से लगता है, मानो (काले अलक-रूपी) भौंरा उसके फूल में खिलते हुए चेहरे पर बैठ कर और अपने पंख फैला कर रस पी रहा हो।

आजु सखि देखल बर अनमन-सन
किये रे मलिन मुख तोर
कोन वचन टुनि कान कहल छथि
किअ ने कहइ छिअ मोर
से सब सुनि कै सखी मुगुध भेल
नयन सजल मन भेल
अधर सुखायल लट ओझरायल
घाम सिनुर बहि गेल

हे सखी, आज तुम्हें अन्यमनस्क सा देखती हूँ। तुम्हारा यह चंद्रमुख म्लान क्यों है ?

तुम्हारे प्रियतम ने तुम्हें कौन ऐसी अप्रिय बात कही, जो तुम मुझ से नहीं कह रही हो ?

अपनी हमजोलियों की ये सान्त्वना जनक बातें सुन कर उसकी सखी मुग्ध हो गई, और उसकी आँखों में आँसू छलछला आए। उसके अधर सूख गए। बाल अस्त व्यस्त हो गए, और विरह की आग से उसकी ईंगुर बिंदी पसीज गई।

कहीं कहीं निम्न लिखित पाठान्तर मिलता है—

आजु देखिय सखि बड अन मन सनि
बदन मलिन मुख तोरा
मन्द वचन तोहि के ने कहल अछि
से ने कहिय किछु मोरा
आजु न रइनि सखि कठिन बितल अछि
कान्ह रभस करु मन्दा
गुन अवगुन पहुँ एको ने बुझलन्हि
राहु गरासल चन्दा
सूर्य्य उदित भेल मन हरसित भेल

परवस खेपल राती
सपने रैनि मोर नयन झँमायल
फाट मोर दुहुँ छाती
भनहि 'विद्यापति' सुनु व्रज यौवति
से राखह एहन गेआने
एक दिन पन्थ सबहि कौ होइहैन्हि
सुजन हर्ष कए माने

[१६]

कनक कलस पर चानन सजनि गे
आएत हथि पहु मोर
मन दए नेह लगाएब सजनि गे
रास रचि अंग लगाएब
पहुँ थिक चतुर सयानहि सजनि गे
हम धनि अंग लगाएब
ई दिन जौ हम काटब सजनि गे
सजन करब वर ग्यान
गावि सुनैयनि हुनकहु सजनि गे
पहुँ करता वर माने

हे सखी, आज कितने दिन बाद मेरे प्रियतम आये हैं।

आज मैं अपना हृदय खोल कर उनसे प्रेम करूँगी, और बड़ी श्रद्धा से उनसे मिलूँगी।

हे सखी, मेरे साजन प्रेम-कला में प्रवीण हैं। मैं उन्हें हृदय से लगाऊँगी।

हे सखी, यदि मेरे ये सुख के दिन निर्विघ्न बीते तो मैं मंगल-गान गाऊँगी, और उन्हें भी आदर सुनाऊँगी, जिससे वह मेरा उचित सम्मान करेंगे।

[२०]

आजु सपन हम देखल सजनि गे
पहुँ आयल पिय मोर

देखि कैं नयन जुरायल सजनि गे
पुलकित अछि तन मोर
काशी पाँति पठाएव सजनि गे
पहुँ कै लिखव बुझावि
मोहर माल ने लाएव सजनि गे
दरशन प्रिय दिअ आवि
भँवरा रस मोर पावै सजनि गे
बइसल पल पसार
आवि बचाविय रस यहो सजनि गे
हम रइसल छिअ हारि
चानन बदि हम सेवल सजनि गे
भय गेल सीमर गाछि
आब कतेक मनाएव सजनि गे
पहुँ भेल कुब्जा क दास

हे सखी, आज मैंने एक स्वप्न देखा कि मेरे प्राणनाथ आए हैं। उन्हें देख कर मेरी आँखें कृतकृत्य हो गईं, और शरीर पुलकित हो उठा।

हे सखी, मैं काशी पत्र लिखूँगी, जिसमें मैं अपने प्रियतम को समझा कर लिखूँगी कि वह मेरे लिए मणि का हार नहीं लाएं, और यहाँ आकर मुझे अपना दर्शन दें।

हे सखी, मैं उन्हें लिखूंगी कि भौंरा पंख पसार कर मेरे जोवन का रस पी रहा है। अतः आप यहाँ आकर इस रस की रक्षा करें। क्योंकि मैं इस मधुकर से हार खा गई।

हे सखी, मैंने चन्दन समझ कर जिसका सिंचन किया, वह दुर्भाग्यवश सेमल का वृक्ष साबित हुआ।

हे सखी, मैं अब उनसे और कितनी आरज़ू मिन्नत करूँ? क्योंकि वह तो कुब्जा के हो रहे हैं।

[२१]

एते दिन भँवरा हमर छल सजनि गे
आब भेल मोरंग देश
मधुपुर निवसइ लोभायल सजनि गे
मोरा किछु कहियो ने भेल
आङन लगइ विषम-सन सजनि गे
घर भेल विषम अन्हार
कुन्तल केश अयोग भेल सजनि गे
बेणी मोरो ने सोहाय
आजु जाय नहि आयत सजनि गे
मरब जहर दिए खाय

हे सखी, इतने दिनों तक तो प्यारा भ्रमर मेरा था। लेकिन अब वह मोरंग-देश चला गया।

हे सखी, मेरा वह प्रियतम मधुपुर में बसा हुआ है। हाय! मुझे वह कुछ कह भी नहीं गया।

हे सखी, मेरा आँगन जंगल प्रतीत होता है, और घर भयावना तथा तिमिराच्छन्न लगता है।

हे सखी, मेरे बाल अस्त-व्यस्त बिखर गये हैं जो अशुभ लगते हैं। और मुझे अब वेणी भी प्रिय नहीं लगती।

हे सखी, यदि आज मेरे प्रियतम नहीं आये, तो मैं गरल पान कर मर जाऊँगी।

[२२]

आब धरम नहि बाँचत सजनि गे
केहि कारन प्रतिपालै
पहुँ परदेश मे गइलन सजनि गे
जोबन भेल जीव काले
केहि मोरा एहि जग हित रहल सजनि गे

पहुँ देत आनि बजाय
हमरा सौं छोट जे हो छल सजनि गे
तिनकहुँ खेलै गामाले
भन 'यदुनाथ' सुनतु मोर सजनि गे
दानानाथ छुइन नामे
तोहरो कइल प्रभु रायल सजनि गे
विधि पुरातन कामे

हे सखी, अब धर्म रखना असंभव प्रतीत होता है। न मालूम अब मेरी कौन रक्षा करेगा?

हे सखी, मेरे प्रवासी प्राणनाथ परदेश में जाकर रम गए, और मेरी जवानी मेरे लिये जंजाल हो गई।

हे सखी, अब इस संसार में मेरी भलाई देखने वाला ऐसा कौन है, जो मेरे प्राणनाथ को बुला कर ला दे?

गीत की अंतिम दो पंक्तियों के ऊपर कहीं-कहीं निम्न पंक्तियां भी जुड़ी हुई मिलती हैं—

आब हम की मैं रहब सजनि गे
धिकहुँ मिहक नार
सियारक सन मैं रहब हम सजनि गे
सिंहिनि पडतिह गारि
पहिल प्रेम छल हम सों सजनि गे
जनि बिसरल मोहि कन्त
हमरो मारि नेराओल सजनि गे
सौतिनि मेलि गुनवत
जल बिनु कमल सुखायल सजनि गे
छूटत नहिं परान (मृनाल)
शख रतन भमार मेल सजनि गे
आब जीवक कोन काज

[२३]

उचित पुछिय तोहि मालति सजनि गे
मन मलिन किय तोर
की देखि मन्दिर तोंहि परायल सजनि गे
एते अछि हृदय कठोर
चान तेजल कुमुदिनि सजनि गे
हरि तजि मधुपुर गेल
सून भवन देखि जीउ उपेखल सजनि गे
कि दगध दैव दुख देल
कमलनयन नहि आयल सजनि गे
कते दिन रहब हुनि आस
मणिमय हार भार भेल सजनि गे
मन जनु करिय उदास

हे मालती, तुम्हारा मुख म्लान क्यों है ? तुम्हारा भौंरा (प्रियतम) तुम्हें छोड़ कर प्रवासी क्यों हुआ ? हाय ! उसका हृदय कितना कठोर है !

चन्द्रमा ने कुमुदिनी का परित्याग कर दिया, और श्रीकृष्ण राधिका को छोड़ कर मधुपुर चले गए।

तुम्हारा शयन गृह वीरान देखती हूँ, और तुम्हारा मन खिन्न। हाय ! विधाता ने तुम्हें कितना दुःख दिया।

तुम्हारे कमलनयन प्रियतम नहीं आए। हे सखी, तुम अब और कितने दिन उनके पथ पर आँखें बिछाओगी ?

तुम्हारे मणिमय हार भार हो रहे हैं। फिर भी हे सखी, तुम चित्त को क्षुब्ध मत करो।

[२४]

आस लता हम लगाओल सजनि गे
नैनक नीर पटाय
से फल आब तरुणत भेल सजनि गे

आँचर तर ने समाय
काँच आम पिया तेजि गेल सजनि गे
तसु मन अछै ने आन
दिन दिन फल तरुनत भेल सजनि गे
पिआ मन करि ने गेआन
सभक पिया परदेश बसु सजनि गे
आयल सुमिरि सनेह
हमर कन्त निरदय भेल सजनि गे
मन नहि शान्य विवेक
'धैरजपति' धैरज धरु सजनि ग
मन नहिं करिय उदास
ऋतुपति आय मिलत तोहिं सजनि गे
पुरत सकल मन आस

हे सखी, नयन के नीर से सींच कर मैंने आशा लता लगाई। उसमें अब तरुणाई का उभार आ गया। अचल के पर्दे में छुपाने से वह साफ़ छुपती तक नहीं।

हे सखी, कच्ची अमिया का परित्याग कर (निर्बुद्धि) प्रियतम प्रवासी हो गए। वह फल अनुदिन तरुणतम होता गया। लापरवाह प्रियतम को इसकी ख़बर तक नहीं।

प्रायः सभी सखियों के प्रियतम प्रवास में थे, किंतु वे सब स्नेह की डोर में बँध कर वापिस आ गए।

और एक मेरे प्रियतम हैं, जिनके (ममता शून्य) हृदय में विवेक के लिए स्थान नहीं।

कवि 'धैरजपति' कहते हैं—हे सुन्दरी, धीरज धरो। दुःखी मत होओ। तुम्हारे प्रियतम ठीक वसंत के अवसर पर आयेंगे, और तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी।

[२५]

तरुण वयस मदमातलि सजनि गे

सरस मदन शर मारि
रचल गमेक सब मन दय सजनि गे
रति विपरीत विचारि
ललित पयोधर ऊपर सजनि गे
शुभ कंचुकि सचार
मेरू युगल चढ़ि शिर भै सजनि गे
दामिनि करै विहार
फूजल चिकुर कलित मुख सजनि गे
स्वेद बूँद लमठाहि
फूजल मोती निज कर लय सजनि गे
जलधर शशि अवगाहि
सुरति समापि लाजवश सजनि गे
हँसल नाह मुख फेर
जनि कुच भार खेदित सजनि गे
सींचिय सुधारस हेरि
'हर्षनाथ' कवि शेखर सजनि गे
रसमय मन दय गाव
रसिक सुजन जन बुझताह सजनि गे
समुचित अभिमत भाव

हे सखी, तरुणाई के मद से मतवाली और मदन के बाण के विद्ध हो कर उस सुन्दरी ने अपने प्रियतम के साथ विपरीत रति करने का निश्चय किया।

हे सखी, उसके उभरते उरोजों में सुंदर कंचुकी विराजमान है, जैसे दो पर्वतों के ऊपर दामिनी विहार करे।

उसके केश बिखर गए हैं। मुख से पसीने की छोटी छोटी बूँदें टपक रही हैं। ऐसा मालूम होता है कि बादल (बाल) अपनी अंजलियों में मोती (स्वेद बिंदु) भर भर कर चंद्रमा (मुख) को स्नान कराए।

हे सखी, रति क्रिया समाप्त हो जाने पर उसके प्रियतम ने हँस कर संकोच

वश मुँह फेर लिया, जैसे स्तन के भार से श्रांत वह अपनी प्रेयसी को मुस्कान की सुधा से सींच दे।

अंतिम पद का अर्थ स्पष्ट है।

[२६]

सरस वसन्त समय भल सजनि गे
चकमक चाननि राति
चलालि केलि गृह सुन्दरि सजनि गे
मदन मनोरथ मानि
सेज लेटिय मुँह ढाँकल सजनि गे
कपट सुतल पहुँ हेरि
विहँसि उठल पहुँ देरउ सजनि गे
लाज वदन लेल फेरि
निज कर वसन दूरि करि सजनि गे
आभरन सकल उतारि
कुच युग परसि विहुँसि पहु सजनि गे
पिबै अधर अवधारि
निज कर धरि अकम भरि सजनि गे
शयन सुताओल नाह
दामिनि जलद नेह वश सजनि गे
करै दोऊ एक चाह
नख छत भरल पयोधर सजनि गे
निरखि एहन हाए भान
गिरि युग पर शोभित ज्यों सजनि गे
तारक दल लहु जान
'हर्षनाथ' कवि शेखर सजनि गे
रसमय मन दय गाव

रसिक सुजन जन बुझताह सजनि गे
समुचित अभिमत भाव

हे सखी, सरस वसन्त ऋतु। और चकमक चाँदनी रात। ऐसे अवसर पर कोई सुन्दरी कामेच्छा से प्रेरित हो कर केलि गृह में गई।

सेज पर लेट कर उसने आँचल से मुँह ढक लिया और कपट की नींद सो गई। लेकिन उसकी कलई खुल चुकी थी।

उसका प्रियतम हँस कर चटपट उठ बैठा। संकोच में सिमट कर सुंदरी ने मुँह फेर लिया। उसके प्रियतम ने अपने हाथों से उसके शरीर के वस्त्र और अन्य सभी आभरण उतार फेंके, और उसके दोनों उरोजों का स्पर्श कर झुककर अधर-रस का पान किया।

हे सखी, इतना ही नहीं उसने अपनी प्रिया को गोद में समेट कर सेज पर लिटा लिया, जैसे बादल और बिजली दोनों परस्पर प्रेम क्रीड़ा कर के हर्षित मिल रहे हों।

और नख की खरोंचों से चिह्नित उस सुन्दरी के पयोधर को देख कर मालूम होता है, जैसे दो पर्वतों (उरोजों) के ऊपर अनेक छोटे छोटे तारकों के पुञ्ज चित्रित हों।

अंतिम पद स्पष्ट है।

फाग

संगीतमय त्योहारों में होली का त्योहार भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं। होली से तीन चार हफ़्ते पूर्व ही संगीत की वेगवती धारा प्रवाहित होने लगती है। चारों ओर उत्साह और चहल पहल होती है। वन उपवन खिल उठते हैं। नसों में बिजली-सी दौड़ जाती है। टोले मुहल्ले, वन बाग, खेत खलिहान सभी *कुमरियों की भाँति चहचहा उठते हैं। युवतियों की आँखें आनन्द में नाच उठती हैं*। फूल चिटखते हैं। भौंरे गुंजार करते हैं, और मधु चू चू कर बरस पड़ता है। होलिका दहन के दिन गाँव के सभी तबके के लोग मज़हबी घरौंदों को लाँघ कर इकट्ठे होते हैं। और टोले मुहल्ले तथा गली-कूचे के कूड़े-करकट बटोर कर 'होलिका दहन के लिए एक निर्धारित स्थान पर संचित करते हैं। घास फूस, खेतों के *झाड़ झंखाड़ और लकड़ी के सूखे टुकड़ों के ढेर लगाने के बाद उनमें आग लगा* दी जाती है। क्या खूब होता है, उस समय का दृश्य, जब संध्या आगमन के कुसुम्भी रंग के पर्दे-सी लाल लाल लपटें क्षण भर में बादल के कलेजे को चीरती हुई दूर-दूर तक फैल जाती हैं, और आनन्द की मौजों से जनता का हृदय सरोवर लहरा उठता है। उस समय गाँव भर के गवैयों की संगीत महफ़िलें जमती हैं, और वे ढोल, डफ, झाल तथा मृदंग के स्वर में स्वर मिला कर एक विशेष गति*मय सुर में गाते चलते हैं। इन गवैयों की कई कई टोलियाँ होती हैं, जो भिन्न*-भिन्न गिरोहों में बँट कर गाती हैं। एक एक टोली आठ आठ या दस दस गवैयों का मजमुआ होती है। केन्द्र में माला की सुमरिनी की तरह एक प्रधान गवैया होता है, जिसके ताल सुर और इशारे पर ही इर्द-गिर्द के गवैये गाते और ताल देते हैं।

'होलिका दहन' के पश्चात् पौ फटते ही, जब प्रकाश की बिखरी हुई मुक्तायें अस्त-व्यस्त होकर पृथिवी पर लुढ़कने लगती हैं, ग्रामीण गवैये भिन्न भिन्न टोलियों

में बँट कर एक शानदार जुलूस के रूप में गाँव की गलियों का चक्कर लगाते हैं। कितना शानदार होता है उस समय का नज़ारा जब निराली आन-बान के साथ संगीत के मजनूँ मस्ताने गवैयों का जुलूस निकलता है। आगे आगे ढोलक और मंजीरे पर गीत चलती चलती है। हरे हरे बाँसों के सिरे पर लहराते रहते हैं रूपहले फरेरे। उनके पीछे होते हैं शरारती लड़कों के झुंड, जो टेसम टेसा करते हुए लोग को रंगी पिचकारियों से सराबोर तमाशबीनों और राहियों पर फुहारों की बारिश करते हैं। उनके अगल बगल और पीछे ठाट से निकलता है—धीर गम्भीर गति में चलता हुआ लम्बा सा जुलूस जो 'सुन रे भइया सौर कबीर, भले जो भले' के नारे लगा लगा कर निनाद देता है, और रास्ते में आता हुई भीड़ पर मकानों के छज्जों से रंग छिड़कती हैं अपनी चितवनों को दाएँ बाएँ फेंकती हुई औरतें। और पुरुष भी उन्हें रंग से सराबोर कर देते हैं। यह जुलूस गाँव की प्रधान प्रधान गलियों का चक्कर लगा कर किसी तालाब या नदी किनारे पहुँचता है, जहाँ लोग स्नानादि से फारिग होकर अपने-अपने ठिकाने लौटते हैं।

होली के अवसर पर गाये जानेवाले गीतों की गति, उनकी भाषा का बन्ध और स्वरों का सन्धान अत्यन्त मीठा होता है। गवैये एक-एक टेक की दुर्जनों बार आवृत्ति करते हैं। प्रेम की रंगीन फुलकारियों और वैभववती वन वीथियों के नैसर्गिक चित्रण, होली की संगीत-महफिलों में ताने बाने का काम देते हैं। जनक के धनुष-यज्ञ और राम-सीता का स्वयम्बर-वर्णन भी इन गीतों में मर्मस्पर्शी ढंग से किया जाता है। लोक-संगीत के पारखी कद्रदानों ने होली के इन गीतों की मोतियों के महकते हुए गजरे से उपमा दी है, जिसके एक भी शब्द-सुमन बिखर जाने से एकता की शृंखला छिन्न भिन्न होने का भय रहता है—

[२]

नकबेसर कागा ले भागा
सइयाँ अभागा ना जागा
नकबेसर कागा ले भागा
उड़ि-उड़ि काग कदम चढ़ि बइठन

जोबना के रस ले भागा
आजु पलग पर रोदना

हे सखी, नकबेसर लेकर काग उड़ भागा, और मेरे अभागे प्रियतम की नींद भी न टूटी ।

काग उड़ कर कदम की डाल पर बैठा । हाय ! वह जोबन का रस चूम कर उड़ भागा ।

हे सखी, आज की रात पलंग पर मनहूसी रहेगी ।

[२]

गोरी कहमा गोदश्रोलह गोदना
बँहिया गोदउली छतिया गादउर्ला
बाकी रहल दुनु जोबना
पिया के पलग पर रोदना
गोरी कहमा गादश्रोलह गोदना

री गोरी, कहो तुमने किस किस अङ्ग में गुदने गुदवाये ?

बाँह गुदवायी । छाती गुदवायी । सिर्फ दोनों जोबन बाकी रह गये । (इसीलिए) प्रियतम के पलग पर यह रोना है ।

री गोरी, कहो तुमने किस किस अङ्ग में गुदने गुदवाये ?

[३]

सारी रात पिया बँहिया मरोरलन्हि
बढनिया छुअल नहिं जाय
सइयाँ बेदरदा मरमो ने जाने
बढनिया छुअल नहि जाय

हे सखी, (लगातार) रात के चारों पहर प्रियतम ने मेरी बाँह मरोड़ी । दर्द के मारे बढ़नी (झाड़ू) भी नहीं छू पाती ।

हाय ! बेदर्द बालम रस का मर्म नहीं जानता ।

दर्द के मारे बढ़नी भी नहीं छुई जाती ।

[४]

सावन भादों में बलमुए हो
चुअइ हुइ बंगला
सावन भादों मे
पाँच रुपइया मास कै नोकरी से लयल
गहना गढ़ाऊँ कि छुवाऊँ बंगला
सावन भादों मे बलमुए हो
चुअइ हुइ बंगला

रे बालम, सावन भादों मे मेरा बँगला चू रहा है।

तुमने नौकरी करके सिर्फ पाँच ही रुपये लाये हैं। गहने गढ़ाऊँ या बंगला छवाऊँ? (कुछ समझ में नहीं आता।)

रे बालम, सावन भादों मे मेरा बँगला चू रहा है।

[५]

नथिया के गूँज टुटि गेल रे देवरा
मोर नइहरा मे अनारी सोनरवा
रात अन्हारी पिया डर लागे
पिया परदेसवा धड़के मोर छतिया

रे देवर, मेरी नथिया का गूँज टूट गया। नैहर का सोनार निपट गँवार है।

रात अँधेरी है। प्रियतम परदेश में है। अकेली डर जाती हूँ। छाती रह रह कर धड़क उठती है।

रे देवर, मेरी नथिया का गूँज टूट गया।

[६]

बुढ़िया बतइहा बतो बुढ़िया बतइहा बतो
कौना घर में सुतल छउ पुतहिया

ओ बुढ़िया, रास्ता बतलाओ। तुम्हारी युवती पतोहू किस घर में सोई हुई है?

[७]

जब छऊँरी सुनइछइ गवनमा क दिनमा
तेलवा लगाइ छऊँरी पोसइछइ जऊवनमा

जब छोकरियाँ अपने द्विरागमन का समाचार पाती है तब वे तेल लगा कर अपने जोवन को पालती हैं।

[८]

नव सँ मुनर वर ग्वोजिह र हजमा
हम अलबेली जउवन फुलगेनमा

रे हज्जाम, मेरे लिए खूब खूबसूरत दूल्हा तलाश करना। (क्योंकि) मैं स्वयं अलबेली हूँ, और मेरे जोवन फूल के गेंद हैं।

[९]

हम त जाइछी रहरिया के खेत रे
हम त जाइछी रहरिया के खेत रे
ढऊआ नेने अइह रे मिलनुआ

मैं अरहर के खेत जा रही हूँ। रे प्रेमी, तुम वहाँ पैसे ले कर जल्द आना।

[१०]

आजु पलग पर धूम मचत
परदेशिया अयलन्हि हो रामा

आज की रात पलङ्ग पर धूम मचेगी—ओ राम, मेरा परदेशी बालम घर वापिस लौटा है।

[११]

मोहन वशीवाला हो खड़े पनघटवा
मोहन × × वशी वाला
पनिया भरन कइसे जाऊँ जमुनमा
मोहन वशीवाला हो खड़े पनघटवा

वंशीवाला मोहन पनघट पर खड़ा है। री सखी, जल भरने यमुना किनारे मैं कैसे जाऊँ?

बसीवाला मोहन पनघट पर खड़ा है।

[१२]

ननदो अयलन्हि पाहुन अगना
आजु पलंग पर सोदना
एहि ननद के किछु पहिरन चाहिअइन
बाजु बिजओटा चुचकसना
ननदो अयलन्हि पाहुन अगना

री ननद, तुम्हारे पाहुन आँगन में आ गये। आज की रात तुम्हें पलङ्ग पर सोना है।

मेरी ननद के पहनने के लिए कुछ चाहिये—बाजू, बिजौटे और चोली।

री ननद, तुम्हारे पाहुन आँगन में आ गये।

[१३]

ब्रज के बसइया कन्हैया गोआला
रंग भरि मारय पिचकारी
एह पार मोहन लहंगा लूटै सरि
ओह पार लूटथि सारी
मँझधार बान्हा जोबन लूटथि
रंग भरि मारय पिचकारी
ब्रज के बसइया कन्हैया गोआला

ब्रजवासी कन्हैया जाति का ग्वाला है। गोपाङ्गनाओं को रंग भर भर कर पिचकारी का निशाना बनाता है।

कन्हैया यमुना के इस पार लहंगा लूटता है। उस पार साड़ी, और बीच धार में जोबन लूटता है।

ब्रजवासी कन्हैया जाति का ग्वाला है। वह रंग भर भर कर गोपियों को पिचकारी का निशाना बनाता है।

[१४]

चले के बरिया चल गेलि कुरटिया

से गड़ गेल ना
लवगिया के काँट स गड़ गेल ना
केहि मोरा कँटवा निकालयन ननदासिया
से केहि मोरा ना
से हरतइ दरदिया
मे केहि मोरा ना
देवरा मोरा कटवा निकालतइ ननदासिया
मे पिया मोरा ना
से हरतइ दरदिया से पिया मोरा ना

जाना चाहिये था बाट पकड़ कर। किन्तु, मैं बाट छोड़ कर कुबाट चली गई। अत. तलुवे में लौंग के काँटे चुभ गये।

कौन तलुवे के काँटे निकालेगा? कौन मेरी पीड़ा हरेगा?

मेरा देवर तलुवे के काँटे निकालेगा, और मेरा प्रियतम मेरी पीड़ा हरेगा।

[१५]

बेरि बेरि बरजु मे पिया बनिजरवा
ऊँखिया जनि रोपइ रे गयिरवा
जरवा गँवएल पिया खेत खरिहनमा
गरमी गँवएल कोल्हुअरवा
गोर लागु पँइया पडु गोला रे बरदवा
त पगहा तोडि आवइ अगनमा
तोरा लागि धयलि बरदा रारि रे बगऊरवा
त पिया लागि पाललि रे जावनमा
कोल्हुआ तोर टुटऊ मोइनमा तोड़र ना
रमवा बहि जाय रे गयिरवा

रे व्यवसायी बालम, मैंने तुम्हें बार बार मना किया कि तुम गाँव के गोंयरे—हलके में ईख मत रोप?

रे निर्दयी, तुमने जाड़े का मौसम खेत खलिहान में बिता दिया। गर्मी

कोल्हुआर (कोल्हू चलने का स्थान) में बिता दी।

रे भोला बैल, मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ। हजार हजार बार आरजू करती हूँ। तुम खूँटे का पगहा—बन्धन तोड़ कर आँगन में चले आओ। (जिससे कोल्हू का चलना बन्द हो जाय, और मेरा मौजी प्रियतम यहीं आ कर दर्शन दे।)

रे बैल, मैंने तुम्हारे लिए सानों की खरी और बिनौला रख छोड़े हैं, और प्रियतम के लिए जोबन का थाल सँजो कर खड़ा किया है।

रे निर्दयी प्रियतम, तुम्हारा कोल्हू टूट जाय उसकी मशीन बन्द हो जाय, और ऊख का रस इधर उधर बह कर बरबाद हो जाय।

{ १६ }

जनकपुर रंगमहल होरी
खेलथि दशरथलाल
लय पिचकारी राम लखन दोऊ
भरि मुख मारत गुलाब
रंगमहल बिच जनकपुर
होरी खेलथि दशरथलाल

जनकपुर रंगमहल में राम लछमण—दोनों बन्धु होली खेल रहे हैं।
गुलाब जल से पिचकारी भर-भर कर ललनाओं को शराबोर कर देते हैं।
जनकपुर रंगमहल में राम लछमण—दोनों भाई होली खेल रहे हैं।

चैतावर

इन गीतों के विषय प्रेम हैं। होली के बाद चैत महीने में इनकी बारी आती है। इनमें वसन्त की मस्ती, और रंगीन भावनाओं का अनोखा सौन्दर्य्य अंकित किया गया है। इनके छोटे छोटे परिचित शब्दों में गज़ब का माधुर्य्य भरा है। साथ ही इनके भावों की छलकती हुई रसमयता मन्त्र-मुग्ध बना देती है। इस शैली के कुछ लोकप्रिय नमूने का मुलाहिज़ा कीजिये—

[१]

चैत बीति जयतइ हो रामा
तब पिया की करे अयतइ
आ रे अमुआ मोजर गेल
परि गेल टिकोरवा
डारे पाते भेल मतवलवा हो रामा
चैत बीति जयतइ हो रामा
तब पिया की करे अयतइ

ओ राम, जब चैत बीत जायगा, तो मेरे प्रियतम क्या करने आयेंगे? आम में बौर लग गये। बौर में टिकोले निकल आये, और टहनी टहनी रस में मतवाली हो कर झूमने लगी।

ओ राम, जब चैत बीत जायगा, तो मेरे प्रियतम क्या करने आयेंगे?

[२]

कोयली बोलल हमरी अटरिया
सूतल पिया मोर जागल रामा
आन दिन बोले कोइली साँझ भिनुसरवा
आज कौना बोले अधीरतिया

सूतल बालम मोर जागल कोयलिया

हमारी अटारी पर कोयल कूक रही है। ओ राम, उसने मेरे सोये हुए बालम को जगा दिया।

हे कोयल और दिन तो तुम सुबह शाम कूका करती थी, लेकिन आज इस आधी रात के समय क्यूं कूक रही हो?

रे कोयल, तुमने मेरे सोये हुए बालम को जगा दिया।

[३]

बाइ आँख मोर फरके हे ननदी
पिया आजु अइथिन
कितना सवारौं माथे क वेनी
बार बार खसि परके हे ननदी
पिया आजु अइथिन
खुलि खुलि जाय बन्द अँगिया क
सिर क सारी सरके हे ननदी
पिया आजु अइथिन

मेरी बाईं आँख फड़क रही है, री ननद! आज मेरे प्रियतम आयेंगे।

मैं कितना ही सिर की गूँथी हुई चोटी सँवारती हूँ, री ननद! लेकिन वह बार बार खिसक जाती है। आज मेरे प्रियतम आयेंगे।

मेरी अंगिया के बन्द रह रह कर खुल जाते हैं, और सिर की साड़ी सरक जाती है, री ननद! आज मेरे प्रियतम आयेंगे।

[४]

नहिं भेजे पतिया
आयल चैत उतपातवा हे रामा
नहिं भेज पतिया
बिरही कोयलिया शब्द सुनावे
कल न पड़त भर रतिया हे रामा
नहिं भेज पतिया

बेली-चमेली फुले बगिया म
जोबना फूलल मार अँगिया है रामा
नइ भेज पतिया

उत्पानी (शरारती) चैत आया, लेकिन मेरे (प्रवासी) प्रियतम ने खत नहीं भेजे।

विरही कोयल कूक रही है। हे सखी, जिसे सुन कर मुझे रात में नींद नहीं आती।

मेरे प्रियतम ने खत नहीं भेजे।

बाग में बेला और चमेली चिटख गई, और हे सखी, मेरे शरीर में जो--- -- खिल गया।

हाय ! मेरे प्रियतम ने खत नहीं भेजे।

[५]

भोला बाबा हे डमरू बजावे रामा
कि भोला बाबा हे
भूत पिचास सग सग खेले
ताडव नाच दिखावे हे रामा
सग अर्धंग मातु पारवती
गले मुडमाल लगावे रामा
शीश चन्द्र, श्रीगग विराजे
साँप, बिच्छु लटकावे रामा

भोला बाबा डमरू बजाते हैं—ओ राम, साथ में भूत और पिशाच क्रीडा कर रहे हैं, और वह स्वय ताडव नृत्य करते हैं।

बगल मे अर्द्धांगिनी माँ पार्वती हैं। गले में मुंडमाल सुशोभित है। ललाट पर चन्द्रमा है। जूडे में गगाजी विराजमान हैं, और उनमें सर्प तथा बिच्छू लटकते हैं।

[६]

मुरली बजावे रामा कि मुरली वाला हे

मुरली बजावे रास रचावे
रहि-रहि जिया घबरावे रामा
मुरलि फूँकि फूँकि सखियन बोलावे
रस रस नाच नचावे रामा

मुरलीवाले श्रीकृष्ण मुरली बजा रहे हैं।

हे सखी, वह कभी मुरली बजाते हैं। कभी रास क्रीड़ा करते हैं जिसे देख कर मेरा जी रह रह कर घबड़ा उठता है।

मुरली फूँक फूँक कर सखियों को बुला रहे हैं और प्रेमपूर्वक रास नृत्य करते हैं।

[७]

राधे सगवा हे
नाचत कन्हैया रामा
कान्हे के मुख मुरली बिराजे
राधे के चुँदरिया रामा
कान्ह के शिर मुकुट बिराजे
राधे के सिर बेनिया रामा
कान्हे के पीताम्बर सोहइन
राधे के ओढ़नियाँ रामा

राधा के साथ श्रीकृष्ण नृत्य कर रहे हैं—ओ राम!
श्रीकृष्ण के होंठों के बीच मुरली है, और राधा की कमर में चुँदरी।
श्रीकृष्ण के सिर पर मुकुट है, राधा के सिर पर चोटी।
श्रीकृष्ण के शरीर में पीताम्बर है, और राधा के शरीर में ओढ़नी।

[८]

रतिया के देखलौं सपनवाँ रामा
कि प्रभु मोर आयल
मोहि बिरहिनि के बान सम लागल
परिहा के निठुर बयनमा रामा

खान पान मोहि किछु ने भावय
न भावय सुख क सयनमा रामा
आप जाय कुब्जा रस बस भेल
छन नहिं मोहिं चयनमा रामा

रात को स्वप्न में देखा कि मेरे प्रियतम आये हैं।

मुझ विरहिणी को पपीहा की निठुर बोली तीर की तरह लगती है। खाना पीना कुछ नहीं भाता। प्रेम की सेज भी नहीं भाती—ओ राम!

श्रीकृष्ण स्वयं तो कुब्जा के प्रेम पाश में बँध गये और यहाँ मुझे क्षण भर भी चैन नहीं मिलता।

[९]

नित प्रति बंसिया बजावे हे रामा
कि मोहन रसिया
मधु मधु तान मधुर मुरवा में
मुनि मुनि जिया तरसावे हे रामा
पीताम्बर की कछनी काछे
गले बैजन्ती सोहावे हे रामा
वंशी बजावे धेनु चरावे
गोपियन वन में बुलावे हे रामा

रसिक श्रीकृष्ण नित्य वंशी बजाते हैं—ओ राम!

मधुर सुर में उनकी संगीतमय मीठी तान सुन कर जी तरसने लगता है।

उनकी कमर में पीताम्बर की कछनी है, और गले में वैजयन्ती का हार सुशोभित है।

हे सखी, वह वंशी बजाते हैं। गाय चराते हैं, और मनोरंजन के लिए गोपाङ्गनाओं को वन में बुला ले जाते हैं।

[१०]

आधी आधी रतिया हो रामा
बोलइ छइ पहरुआ

अब ने जायन तोहि पास
बैंगन तोड़ गेलौं ओहि बैंगनबरिया
गड़ि गेल छतिया म काँट हो रामा
क मोर छतिया क कँटवा निकालत
क मोर दरद हरि लेत
देवरा मोर छतिया क कँटवा निकालत
सँइया दरद हरि लेत हो रामा

आधी आधी रात को पहरू बोला करता है—ओ प्रियतम! अब तुम्हारे पास नहीं आऊँगी।

बैंगन तोड़ने के लिए मैं बैंगनवाड़ी में गई। वहाँ छाती में काँटा गड़ गया—ओ प्रियतम!

कौन मेरी छाती के काँटा निकालेगा? और कौन मेरी छाती की पीड़ा हरेगा?

देवर मेरी छाती के काँटा निकालेगा, और मेरा प्रियतम मेरी छाती की पीड़ा हरेगा।

आधी-आधी रात को पहरू ठनका करता है—ओ प्रियतम! अब तुम्हारे पास नहीं आऊँगी।

[११]

चलु सखिया हे मलिया के बगवा रामा
कि चलु सखिया हे
डाला भरि लढ़वौं चँगेरि भरि लोढ़वो
कि मरवौं खोइछवा रामा
कि चलु सखिया हे
फुलवा लोढ़ि-लोढ़ हरवा गुँथएवौं
पिया क गरवा पेन्हएवौं
रात होत पिया घरवा में अयथिन
सेजिया [illegible] गला लपटयथिन रामा
कि चलु सखिया हे

हे सखी, माली के बगीचे में चलो! मैं वहाँ डाला भर भर कर फूल तोड़ूँगी, और खोंछ भर लूँगी।

फूल तोड़-तोड़ कर हार गूँथूँगी, और प्रियतम के गले में पहनाऊँगी। रात होते ही मेरे प्रियतम घर आयेंगे। मैं सेज झाड़ कर उन्हें गले से लिपटाऊँगी।

हे सखी, माली के बगीचे में चलो।

[१२]

एहि रे ठँइया—एहि ठँइया
झुलनी हेरानी गमा
घरवा में खोजलों दुअरा में खोजलों
खोजि अयलों सँइया क सेजरिया
कि एहि रे ठँइया

हाय राम! इसी जगह मेरी झूलनी भूल गई।

घर में उसकी खोज की। दरवाज़े पर खोजा, और प्रियतम की सेज पर भी खोज-ढूँढ़ कर नाउम्मीद हो गई।

हाय राम! इसी जगह मेरी झूलनी भूल गई।

मलार

'तिरहुति' और अन्य अनेक गीत शैलियों के रहते हुए भी 'मलार' के बिना मिथिला के लोक-संगीत की दुनियाँ उजाड़ थी। संसार के प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में पर्जन्य के स्तुति-गान में एक जगह कहा गया है—हे पर्जन्य, तुम्हारे प्रसाद से ही नाना विध ओषधियाँ विश्व विचित्र रूप हो उठी हैं। हमारे जीवन में भी तुम नित्य विचित्र कल्याण दान करो। जब तक तुम नहीं आये थे, तब तक सारी पृथिवी मरी हुई, सूखी हुई, सपाट थी। तुम्हारे आते ही सब कुछ नाना रस, नाना भावों से भर उठे। मिथिला की ग्रामीण कविता के क्षेत्र में 'मलार' का उद्भव वैदिक पर्जन्य के आगमन की भाँति ही सुन्दर, सुशीतल और कल्याणकारी है।

'मलार' का अन्तरंग बिल्लौरी काँच की तरह रंगीन है। इनमें हमें जीवन के प्यार, मिलन, आकर्षण उसके मधुमय स्वप्न और सुनहले रंग के आभास दृष्टिगोचर होते हैं। इसके तरानों में मानव हृदय का प्रेम कवि की अनुभूति की आग में तप कर कुन्दन बन गया है, और विरह की जड़ हृदय के पाताल में इतनी दूर चली गई है कि सूर की राधा की निम्न उक्ति स्मरण हो आती है—

मेरो नैना बिरह की बेलि बई
सींचत नीर नैन के सजनी
मूल पताल गई

लेकिन 'मलार' का आन्तरिक सौन्दर्य सुन्दर लय और भावाभिव्यञ्जना के पूरे उतार चढ़ाव के साथ पढ़े जाने पर ही व्यक्त होता है। कागज़ पर छपी हुई इसकी काली पंक्तियों के पढ़ लेने मात्र से ही इसके रूप विन्यास और रमणीयता का अन्दाज़ नहीं मिलता। स्व० कवीन्द्र श्रीरवीन्द्रनाथ के मित्र प्रसिद्ध रहस्यवादी कवि डब्ल्यू. बी. यीट्स ने लिखा है—

I have always known that there was something I disliked about singing and I naturally dislike print and paper, but now at last I understand why, for I have found something better. I have just heard a poem spoken with so delicate a sense of its rythm with so perfect a respect for its meaning that if I were a wise man and could persuade a few people to learn the art I would never open a book of verses again

— *Ideas of Good and Evil*

अर्थात् गाने में कुछ ऐसी बात होती है जो मुझे सदा से ही भद्दी लगती आई है, और कागज़ पर छपी हुई कोई कविता मुझे अच्छी नहीं लगती। इसका कारण यह है कि मैंने एक शख्स का ऐसी सुन्दर लय और भावों के पूरे उतार-चढ़ाव के साथ कविता पाठ करते सुना कि यदि मेरे कथनानुसार लोग कविता पढ़ने की कला जान लें, तो मैं कभी कोई काव्य पुस्तक पढ़ने के लिए नहीं खोलूँ।

जिन लोगों ने मैथिल रमणियों के कल कंठ से 'मलार' का गान सुना है, उन्हें भी यीट्स साहब की तरह किसी काव्य-पुस्तक को खोल कर पढ़ने के लिए कष्ट गवारा न करना पड़ेगा। छन्द और लय की दृष्टि से भी लोक साहित्य के इतिहास में 'मलार' का स्थान बेजोड़ रहेगा। छन्द और लय के साथ साथ इसमें संगीत का पुट तो इसकी रमणीयता को चार चाँद लगा देता है।

'मलार' पावस ऋतु में स्त्री पुरुष दोनों गाते हैं। लेकिन दोनों के गाने के ढंग अलाहिदा अलाहिदा है। औरतें इन्हें गाने के वक्त किसी साज बाज की मदद नहीं लेतीं। हिंडोले पर बैठ कर वे सम्मिलित स्वरों में गाती हैं। पुरुष साज-बाज की मदद से गाते हैं, और जब वे पंचम में पूरी आवाज़ के साथ राग अलापते है, तब कभी-कभी तबले और मृदङ्ग (थाप की चोट से) कड़क कर टूक-टूक हो जाते हैं।

इस प्राञ्जल गीत शैली के कुछ नमूने देखिये—

[१]

चहुँ दिशा घेरि घन कारया ह आनी
झहरि झहरि बुंद खँसए पलग पर
भिजत कुसुम रग सारिया
चुवत भवन सों लागि साइन-सन
पिय बिनु शून्य अटरिया
पथ भेल पिच्छिर गिया भेल चंचल
चाहिय कुसुम चुदरिया
'मुकविदास' प्रभु ताहरें दरस के
हरि के चरन चित लइया

हे सखी, चारों ओर सघन काली घटा उमड़ आई। बूँदें झहर झहर कर पलंग पर गिर रही हैं, और मेरी सुन्दर कुसुम रंग की चुदरी भीग रही है।

मेरी यह (छोटी सी फूस की झोंपड़ी) चू रही है, जो बड़ी दुखदायक प्रतीत होती है।

पीतम के बिना आज मेरा संसार सूना है। कीचड़ से राह बाट पिच्छिल हो गये, और मेरे प्रियतम प्रवासी हैं।

हे सखी, मुझे कुसुम रंग की चुदरी चाहिए।

कवि कहता है—हे नायिके, तुम अपने प्रवासी प्रियतम के दर्शन के लिए परमात्मा के चरण का चिन्तन करो।

[२]

आजु मोहन नै आँगन सरि हे
घंरि-घंरि घँद घहरावि बरिसै
धरता क बूँद सुहावन
उठो मुनरी छल आँगुरि कमि रमि
से हो भेल हाथ क कगन
हम सौं प्रीति तेजल मनमोहन
कुब्जा जीव कै वैरन

हे सखी, आज मोहन के आँगन में बड़ी बड़ी बूँदें गिर रही हैं। अहा! पृथिवी पर आसमान से गिरती हुई ये बूँदें कितनी सुहावनी लगती हैं।

हे सखी, मैं (प्रियतम के विरह में इस क़दर सूख गई हूँ कि) जो अँगूठी (कभी) मेरी उंगली में मुश्किल से आती थी, वह आज मेरी कलाई का कंकण हो गई है।

हे सखी, (कुब्जा के प्रेम पाश में उलझ कर) मोहन ने मुझसे प्रीति छुड़ा ली। हाय! कुब्जा मेरे प्राण की बैरिन हो गई।

[३]

कारि कारि बदरा उमड़ि गगन माँझे
लहरि बहे पुरवइया
मत बदरा बूँद-बूँद झहरह
धराए पलंग पर भिजन—
कुसुम रंग सड़िया
रे बदरा मति बरसु एहि देशवा

रे बदरा बरिसु ललन जी के देशवा
बदरा हुनके भिजाव सिर-टोपिया रे बदरा
एक त बैरिन भेल सासु रे ननदिया
दोसर बैरिन तुहुँ भेल रे बदरा
मति बरसु एहि देशवा
बदरा कहमें सुगएवो म लालि चुनरिया
कहमे सुलएवो नागिन केशिया रे बदरा
मति बरसु एहि देशवा

आकाश में काले काले बादल उमड़ रहे हैं। पूवा हवा लहरा रही है।

रे बादल, बूँद बूँद मत बरसो। पलंग पर रक्खी हुई मेरी कुसुम रंग की साड़ी भीग जायगी।

रे बादल, इस देश में मत बरसो। परदेश में बरसो, जहाँ मेरे प्रियतम रहते हैं। उनके सिर की टोपी भिगो दो।

रे बादल, एक तो मेरी सास और ननद बैरिन है। दूसरे तुम भी शत्रु हो रहे हो। कृपा कर इस देश में मत बरसो।

रे बादल, मैं अपने नातिन से बल खाने वाले बाल और अपनी वह लाल चूँदरी कहाँ सुखाऊँगी ? रे बादल, इस देश में मत बरसो। परदेश में बरसो, जहाँ मेरे प्रियतम रहते हैं।

[४]

परदेश परल कँधैया रे दैया
आएल जेठ हेठ भेल वर्षा
मदन दहन तन दहिया रे दैया
निन दिन छन छन हरि मन आवत
नयनो मुरति लगैया रे दैया
नींद पवन भेल पहु पर चित मन
चिन लेन मदन गोपाला रे दैया
'सुकविदास' पहुँ सुकवि दरश कै
हरि क चरन चित लैया रे दैया

नायिका का पति परदेश चला गया है। इधर पावस ऋतु का आरम्भ हो गया है। विरहिणी के प्राण छटपटा रहे हैं। जिस समय पुरानी मधुर स्मृतियाँ सामने आती हैं, तो विरह की यन्त्रणा और निराशा की थपेड़ों से घबड़ा कर वह कहती है—हाय, मेरा कन्हैया किसी के नेह जाल में उलझ गया। जेठ आया। वर्षा ऋतु निकट आ गई। कामदेव के बाणों से उत्पन्न ज्वाला शरीर को जला रही है, और मेरा अनुरागी मन प्रतिक्षण अपने निर्मोही मोहन की याद में तड़प रहा है। उनके दर्शन को आँखें तरसती हैं। नींद हवा बन कर उड़ गई है, और प्रियतम किसी नागिनी के कुचे में रम रहे हैं। हाय ! प्रियतम ने मेरा मन हर लिया। 'सुकविदास' कहते हैं—हे नायिके, यदि तुम अपने प्रियतम से मिलना चाहती हो, तो परमात्मा के चरण का चिन्तन करो।

[५]

पड़ रे चतुर घटरवा हे आली

दुरि सौं मजौलन्हि नाव चढ़ौलन्हि
रोवि लए गलाह मँझधरवा
नाव हिलौलन्हि मोहि डेरओलन्हि
कैलन्हि अजन सयलना
अँचरा धएलन्हि मोहि झिकझोरलन्हि
तारलन्हि गजमोती हरवा
'मुक्तिदास' कह तोहरै दरस कै
युग युग जीवै घटवरवा

हे सखी वह नाविक बड़ा धूर्त है। (मैं अपने विचारों में डूबी, दोनों लोकों से बेखबर) डगर पर जा रही थी कि उसने मुझे आवाज़ देकर बुलाया अपना नौका पर बिठा लिया, और (चचल डाँडों से) खेकर बीच धारा में ले गया। इस पर भी सितम यह कि उसने नौका डुला दी, जिससे मेरा दिल सर्द हो गया। उसने मेरा आँचल पकड़ लिया। और (नियम, धरम शरम सब को धता बतला कर) मुझे पकड़ कर मेरा अंग प्रत्यंग झकझोर डाला और मेरा मोती का हार तोड़ कर इधर उधर बखेर दिया। 'मुक्तिदास' कहते हैं कि उस भोली-भाली नायिका का दर्शन करने के लिए वह नाविक युग युग जीये।

[६]

कहु ने सगुन केर बतिया हे आली
चारि मास बरषा ऋतु गत भेल
विरह दगध भेल छतिया
आओन आओन हरि माहि कहि गेल
कहियो ने लिखै मोहि पतिया
'मुक्तिदास' कह तोहरै दरश बिन
कौना खेपब दिन-रतिया

हे सखी, सगुन विचार कर कहो कि मेरे प्रियतम कब आयेंगे? वर्षा ऋतु के चारों महीने बीत गये, और विरह की आग से मेरी छाती दग्ध हो गई। मेरे प्रियतम ने वायदा किया था कि मैं आऊँगा। लेकिन उन्होंने एक कागज़ का

टुकड़ा भी नहीं भेजा। नायिका प्रेमातिरेक से विचलित हो कर (कवि के शब्दों में) कह रही है—हे प्रियतम, मैं तुम्हारे बिना इन रातों को कैसे काटूँ ?

[७]

बिसरि गेल पहुँ मोरा हे आली
प्रेम पौध छल हुनिक लगाओल
बिरह उठल तन जोर हे आली
हमर वयस भेल सोलहक लगभग
बहुसि रहल बिन आरा हे आली
कहि गेल माघ बीति गेल फागुन
ने ओ ने दरस देल चोरा हे आली
मगनीराम' कवि मन नहि लागय
शूल बढ़ल उर मोरा हे आली

हे सखी, मेरे सजन मुझे भूल गये। उन्होंने प्रेम का जो पौधा लगाया था, वह अकाल ही मुरझाना चाहता है। शरीर में विरह की लपटें जोरों से धधक रही हैं। हे सखी, मेरी उम्र करीब सोलह वर्ष की है, और मेरे प्रियतम दूसरे के कूचे से निकल कर प्रवासी हो रहे हैं। उन्होंने माघ में आने का वायदा किया था, लेकिन फागुन भी बीत गया और अभी तक उस चितचोर ने दर्शन नहीं दिये। कवि 'मगनीराम' कहते हैं कि प्रियतम की गैर हाजिरी में नायिका का दिल घुट रहा है, और उसके हृदय में शूल पैदा हो गई है।

[८]

लिखि आयल योगक पाँती हे मधुकर
जब सों श्याम गेल मधुपुर में
निशि दिन धड़कए छाती हे मधुकर
निशि नहि चैन भरन नहि भावत
बरसत देखत भरि आँखी हे मधुकर
सुन्दर श्याम युगल चरणागन
कुबरि हरल हरि माती हे मधुकर

हे मधुकर, योग की पाँती आई है।

जब से प्यारे कृष्ण मधुपुर चले गये तब से दिन रात लुनी कड़का करती है।

रात में चैन नहीं मिलता। भवन नहीं भाता। जाने कब उन्हें आँखें भर कर देखूँगी। शायद कुब्जा ने उनकी मति बौरा दी। हम प्यारे श्रीकृष्ण के दोनों चरणों की शरण जायँ।

हे मधुकर, योग की पाँती आई है।

[६]

श्याम निकट नै जाएब हे ऊधो
बरषा बादरि बुँद चुअइय
जमुन जाय नै नहाएब हे ऊधो
तीसिक तेल फुलेल बनइअ
नै नहिं अग लगाएब हे ऊधो
मधुपुर जाएब कमल मँगाएब
नख सँ पत्र लिखाएब हे ऊधो
हरि मधुपुर गेल कुबरिक बस भेल
हम साग भसम लगाएब हे ऊधो
'सुकविदास' प्रभु तोहर दरश कैं
हरि चरण चित लाएब हे ऊधो

हे ऊधो, मैं श्याम के निकट नहीं जाऊँगी। आँखों से पावसकालीन बादल की तरह आँसुओं की झड़ी लग गई है। अब यमुना में पैठ कर स्नान क्यूँ करूँ? आँखों के सजल बादल नहलाने के लिए पर्याप्त है। तीसी के तेल और फुलेल बनते हैं। उन्हें भी अंग में नहीं लगाऊँगी। मधुपुर जाऊँगी। कमल के पत्ते लाऊँगी। उस पर नख की क़लम से पाँती लिखूँगी। हे सखी, हरि मधुपुर चले गये। कुब्जा की स्नेह डोर में उलझ गये। मैं भस्म रमा कर जोगन हो जाऊँगी।

'सुकविदास' कहते हैं—हे व्रजाङ्गने, श्याम के दर्शन के लिए उनके चरण में चित्त लगाओ।

[१०]

बरिसन लागे बदरवा हे ऊधो
खन बरिसय खन गरिजय
खन दामिन दमकय रन रन बहय बयरवा
झिंगुर दादुर शोर करइअ
विरह दगध मोरा छतिया हे ऊधो
चारि मास हम आस लगाओल
घर नहिं आयल पियरवा हे ऊधो
'मुक्तिदास' प्रभु तोहर दरश कै
घुरि फिरि करत निहोरवा हे ऊधो

हे ऊधो, बादल बरसना ही चाहता है। कभी बरसता है। कभी गरजता है। कभी बिजली चौंधती है, और कभी बयार लहर लहर कर बहती है। झींगुर और मेढ़क शोर मचाते हैं, और मेरी छाती विरह की ज्वाला में लहर उठती है। चार महीने—आषाढ़, सावन, भादों और आश्विन मने आशा लगा रक्खी, किन्तु मेरे प्यारे कृष्ण वापिस नहीं आये। इस प्रकार व्रजाङ्गनायें कृष्ण के दर्शन के लिए, बारम्बार विकल हो रही हैं।

[११]

मोहन मुरली बजैया रे दैया
चैत बैशाख के धूप लगइअ
शीतल विश्रान्ति डोलैया रे दैया
जेठ असाढ़ के बुन्द पड़इअ
भीजत सुरंग चुन्दरिया रे दैया
साओन भादो कर उमड़ल नदिया
तैयो ने खेवय कन्हैया रे दैया
आसिन कातिक देर पत्र लगइअ
सखि सब गावा नहैया रे दैया
अगहन पूस के जाड़ गिरइअ

के दिअ लाल तुरैया रे दैया
माघ फागुन फेरि रंग बनइअ
सगि सब धूम मचैया रे दैया

कृष्ण ने बाँसुरी फूँकी।

हे सखी, चैत, वैशाख की धूप तीखी होती है। ज़रा शीतल पंखे तो डुलाओ।

हे सखी, जेठ, आषाढ़ में बूँदें गिरने लगती हैं। मेरी सुर्ख़ रंग की चुदरी भींग जायगी।

हे सखी, सावन, भादों में नदी और तालाब उमड़ पड़े किन्तु, मेरे केवट कृष्ण नाव खेने नहीं आये।

आश्विन, कार्त्तिक में पर्व लगता है। हमारी सभी सखियाँ गंगा नहाती हैं।

अगहन, पौष में जाड़ा पड़ता है। हे सखी, लाल रजाई लाकर मुझे कौन दे?

माघ, फागुन में होली की धूम है। सभी सखियाँ रंग क्रीड़ा कर रही हैं।

[१२]

ऊधो ककर नारि हम बाला
हरि मधुपुर गेल परम कठिन भेल
दय गेल विरहक भाला
बड़ अनुचित भेल मुपुरुष तेजि गेल
तेजि गेल मदन गोपाला
नींद हरित भेल पहुँ पर चित गेल
चित लेल नन्दक लाला
तरुण वयस भेल पिय परदेश गेल
ओतहिं रहल नन्दलाला
हरि सों विनति करू गोरी सँ कवि कहु
तुअ विनु कमल विहाला

, ऊधो, मैं बाला किसकी नारी हूँ?

कृष्ण मधुपुर चले गये। और मेरे दिल में विरह की बर्छा चुभो गये। यह मेरे लिए एक कठिन समस्या हो गई।

यह बड़ा अनुचित हुआ कि मेरे प्रियतम कृष्ण मेरा परित्याग कर प्रवासी हो गये। नींद काफूर हो गई। वह जाने किस नागिनी के कूचे में रम गये हैं। हाय! उनने मेरा मन हर लिया।

हे ऊधो, मैं तरुणी हा चली। प्रियतम परदेश चले गये, और वहीं रम गये।

कवि कहता है—हे गोरी तुम अपने मधुकर श्रीकृष्ण से आरजू-मिन्नत करो कि तुम्हारी गैर हाजिरी में तुम्हारा कमल खिल रहे।

[१३]

सखि रे बिसरल मोहि मुरारी
प्रथम अषाड़ सजल मनमोहन
कोना खेपब अन्हियारी
रिमझिम रिमझिम सावन बरिसय
मोचलि नारि अटारी
मदन बूँद मेघ बरिसय भादव
मझ मागिगन जिव हारी

हे सखी, मेरे कृष्ण मुझे भूल गये। पावस ऋतु—आषाढ़ में ही श्रीकृष्ण ने मेरा परित्याग कर दिया। मैं यह अँधेरी रात कैसे काटूँगी? श्रावण में बूँदें रिमझिम रिमझिम बरस रही हैं। स्त्रियाँ अपनी अपनी अटारी पर वियोगाकुल हो रही हैं। भादों में बादल काम की बूँदें बरसाने लगे। गोपियों की उम्मीदों पर पानी फिर गया।

[१४]

सखि रे तेजल कुंजविहारी
आएल अषाड़ विरह मदमातल
नहिं देखिय गिरिधारी
आब केहि सग झूलब हिंडोला
सावोन तेजल मुरारी

भादव यामिनि यम सम बीतल
दिवस लागय अन्हियारी
आसिन विनति करय कवि 'दुखरन'
गोपिअहिं भेटल मुरारी

हे सखी, मनमोहन ने मेरा परित्याग कर दिया। विरह को मस्ती लिए आषाढ़ आ गया। किन्तु, श्री कृष्ण को कहीं नहीं देखती ? अब किसके साथ हिंडोले में बैठकर झूले झूलूँगी। श्रावण में श्रीकृष्ण ने मेरा साथ छोड़ दिया। भादों की भयावनी रात पहाड़ सी लगती है। दिन में भी धुंध मालूम देती है। कवि 'दुखरन' कहते हैं—आश्विन में गोपियों को श्रीकृष्ण मिल गये।

[१५]

साख रे बहुरि कान्ह नहिं आए
तन मन विलखय सब गोपी जन घेर
कुब्जा कान्ह लाभाए
मधुपुर जाय रहल मनमोहन
गोकुल नगर बिहाए
गोकुल विकल पड़य नरनारी
कुबरी हरि मन भाए
रास विलास सभै हरि बिसरल
गिरिधारी गुन गाए

हे सखी, श्रीकृष्ण वापिस नहीं आये। गोपिकाएँ सिर धुन धुन कर विलख रही हैं। कुब्जा ने श्रीकृष्ण को वशीभूत कर लिया। मनमोहन मधुपुर में छा गये, और गोकुल का विस्मरण कर दिया। गोकुल के स्त्री पुरुष सब व्याकुल हो रहे हैं, और कृष्ण कुब्जा के हो गये। उनने रास और क्रीड़ा-कौतुक सब भुला दिया। हे सखी, अब हम उनके गुण का ही कीर्त्तन करें।

[१६]

ऊधव पाँती मोहि ने सोहासी
तेजि ब्रजबाला गेल हरि मधुपुर

शरद समैया क राती

हम सौं वैर प्रीति कुब्जा सौं

श्याम भेल सघाती

जा धरि मदन गोपाल नहि आओत

विरह दगध हैत छाती

'सुजनदास' प्रभु तोहर दरश बिनु

पाती भावि ने मोहाती

हे ऊधो, मुझे पाँती नहीं भाती। व्रजाङ्गनाओं का परित्याग कर श्रीकृष्ण मधुपुर चले गये। शरद ऋतु की रात है। प्यारे श्रीकृष्ण ने हमसे वैर करके कुब्जा से नेह जोड़ लिया।

हाय! वह कितने निठुर हैं!

यदि वह वापिस नहीं आये तो मेरी छाती विरह की आग में दग्ध हो उठेगी।

कवि 'सुजनदास' कहते हैं—हे श्याम, तुम्हारे दर्शन के बिना मुझे पाँती नहीं भाती।

[१७]

कहु ने सिया जी क बतिया हे लछुमन

भरन छुड़अलौं बनहि पठअलौं

विरह दगध भेल छतिया

सगरि राति हम बइसि गमअलौं

नींद गेल दुनि अँखिया

भाय छथि भवन भाऊज छथि वन वन

केहन कठिन भेल छतिया हे लछुमन

हे लक्ष्मण, सीता के हालात कहो। वह निर्वासित होकर विजन वन में चली गईं, और विरह की आग से छाती जल उठी। सारी रात हमने बैठ कर बिताई है। नींद काफूर हो गई है। भाई यहीं हैं। भावज वन में। कितना कठोर हृदय है उनका! हे लक्ष्मण, सीता के हालात कहो!

———

मधुश्रावणी

मिथिला के अन्य त्योहारों की तरह 'मधुश्रावणी' भी नव विवाहिता स्त्रियों का एक त्योहार है। यह सावन शुक्ल तृतीया को मनाया जाता है। यद्यपि यह त्योहार सावन के ही समान सरस है फिर भी इसमें एक भयंकर विधि इस लिए की जाती है कि विवाहिता दीर्घकालीन सधवा रहेगी या नहीं। नव विवाहिता एक जलती बत्ती से दागी जाती है। यदि फोड़े खूब अच्छे आये, तो स्त्रियाँ उन्हें सधवापन का चिह्न समझती हैं।

मैथिल स्त्री-पुरुषों की जुटने वाली महफिलों में इस चिर नवीन त्योहार के प्रति असीम श्रद्धा दीख पड़ती है। कालक्रम के अनुसार 'मधुश्रावणी गीत की रचना शैली दो भागों में विभाजित है—[१] पूर्व मधुश्रावणी काल, और [२] उत्तर मधुश्रावणी-काल। पूर्व और उत्तरकालीन मधुश्रावणी की मौलिक रूप रेखा में ज़मीन आसमान का फ़र्क़ है।

पूर्व मधुश्रावणी-काल' की प्रत्येक पुरातन गीत शैली आदिमकालीन चकमक पत्थर के उस भोथड़े औज़ार की तरह है, जो पर्वतों की निर्जन घाटियों में मार्ग निकालने और शिकार पर गुज़ारा करने के लिए बनाया जाता था, अथवा इस प्रकार कहना अधिक समीचीन होगा कि 'मधुश्रावणी' की प्रत्येक प्राचीन गीत शैली बौद्धकालीन इमारती कला के सदृश है, जिसके गुम्बज़, दीवारों, बुर्जियों, खम्भे वगैरा पर किसी प्रकार की तड़क भड़क या बारीक मीनाकारी का काम नहीं।

लेकिन 'उत्तर मधुश्रावणी काल' की प्रत्येक चिर-नवीन गीत शैली इस्पात के उस चमकते और चोखे औज़ार की तरह है जिसमें चट्टानों की दीवारें काट-काट कर पहाड़ी चोटियों पर गुलाबी लताएँ और अंगूर की बेलें लगा दी गई हैं, अथवा प्रत्येक चिर-नवीन गीत शैली उस मुगलकालीन इमारती कला के सदृश है, जिसकी मेहराबदार छतों, दीवारों और खम्भों पर किम्ख़ाब के बूटों की तरह की

और हे भाई, तुम मेरे लिए सलमे सितार की लोई टकी हुई चुंदरी ला दो ना !

पिता ने कहा—

हे बेटी, निर्धन के घर तुम्हारा जन्म हुआ है, और तुम निर्धन के घर व्याही गई हो। हाय ! म सलम सितारे की लाइ टका हुइ चुंदरी और रगीन केचुआ कहाँ पाऊँ ?

श्वसुर का यह भद-भरा बचन सुन कर उस नव विवाहिता तरुणी का सजन रगीन केचुआ और चुंदरी खरीदने परदेश चला। उसने रगीन केचुआ और अपनी प्रियतमा की मनचाही चुंदरी खरीद कर ला दी। तब वह नव विवाहिता चुंदरी पहन कर आँगन में खड़ी हुई और अपने पिता से बोली—

हे पिता देखो यह रगीन केचुआ और हे भाई, तुम भी देख लो यह सलमे सितार की लोई टकी हुई चुंदरी।

उपर्युक्त गीत 'पूर्व मधुश्रावणी-काल' का एक सुरुचिपूर्ण नमूना है। इस गीत की नायिका के पिता, जो अपनी बेटी की चुंदरी खरीद लाने में सर्वथा असमर्थ हैं—की दीनता और दुख कातरता देख आँखों में आँसू की बौछारें छलकने लगती हैं। लेकिन समवेदना और सहानुभूति के अगाध सागर में डूबने-उतराने जब नायिका का प्रियतम परदेश जाता है, और अपनी प्रियतमा की मनचाही चुंदरी खरीद कर हँसते हँसते घर लौटता है तो हमारी तबीयत फिर पलटा खाती है। *नायिक के नौजवान भाई की निष्क्रियता से हमारी भावनाओं को एक ठेस* सी लगती है। युवक हृदय उसके निकम्मेपन का दाव नहीं सकता। क्योंकि वह अपनी सती नव विवाहिता बहन के प्रेमपूर्ण आग्रह को ठुकरा कर कर्त्तव्य पराङ्मुख हो रहा है।

[२]

सावन मास नाग पञ्चमी मेल

*मैं बाध कर नव विवाहिता युवती 'मधुश्रावणी' का कथा सुनने के समय हाथों में लिए रहती है, इसीको केचुआ कहते हैं।

आसिन विसहर खेलै झिझरी
कातिक विसहर गेला अलसाय
अगहन विसहर भेला अलार
चलला अपन देश आशीष देइ
जावथु हे कन्या सुन्दे तोहर जेठ भाय
लाख वरस कर होत्त अहिवात

श्रावण में नाग का जन्म हुआ। भादों में उसने जवानी की देहली में पैर रक्खा। आश्विन में वह रंग रभस करने लगा। कार्तिक में वह अकर्मण्य हो गया। अगहन में मृतप्राय हो गया, और अन्त में आशीर्वचन कह कर अपने देश के लिए प्रस्थान किया।

हे सौभाग्यवती कन्या तुम्हारा ज्येष्ठ भाई चिरजीवी हो, और तुम्हारा यह अहिवात लाख वर्षों तक अटल रहे।

[४]

नदिया क तीर तीरे तुलसी क गाछ
ताहि पर बिसहर खेलै जुआसार
जुअहि खेलइत बिसहर भेला अलसाय
काग लै गेल मुनरी बगुला ले गेल हार
कान लगाल खीझल बिसहर कुमारि
चुप होउ चुप होउ बिसहर कुमारि
गढ़ाय देब मुनरी गँथाय देब हार

नदी के किनारे तुलसी का गाछ है। उसी पर बैठ कर नाग जूआ खेल रहा है।

जूआ खेलते खेलते वह अलसा गया।

इसी बीच काग चोंच में उसकी अंगूठी लेकर उड़ गया, और बगला उसके गले का हार ले गया। फलस्वरूप नाग की बेटी खीझ कर रोने लगी।

कवि कहता है—हे नाग कन्या चुप रहो। चुप रहो। मैं अंगूठी गढ़ा दूँगा, और गले का हार भी गुंथा दूँगा।

[६]

झुगुनि झुगुनि व्रजनारी आहा राम
पहिरल आनि रूप सारी
हाथ लेल बेंत डाली आहा राम
गवइत गेलि फुलवारी
सखी सब मैल रंग केली आहा राम
चन्द्रवदनि धनि गोरा आहा राम
मन कह कह कुल जारी

व्रजाङ्गनाएँ यत्नपूर्वक कीमती साड़ियाँ पहने और हाथों में बेंत की डाली लेकर मंगल-गान करती हुई पुष्पवाटिका में गई। वहाँ सखियों से मिल कर उनने परस्पर रंगरलियाँ कीं, और उन चन्द्रमुखी गोरी ललनाओं ने करबद्ध हो कर अपने हृदय की बात निवेदित की।

समय पाकर नूतन 'मधुश्रावणी'-काल की इस सरल, संक्षिप्त शैली में भी विकसन हुआ। उसकी चेतना यौवन रङ्ग में प्रमत्त हो उठी। उसके शब्दों की झंकार और भी परिष्कृत हुई। यह परिवर्तन केवल मधुश्रावणी के विपुल शब्द समूह और उसके सुकोमल कलेवर में ही नहीं हुआ, बल्कि उसके स्वरूप और आत्मा में भी रूपात्मक और भावात्मक क्रान्ति हुई।

'उत्तर मधुश्रावणी काल' के प्रारम्भिक दिनों में प्रत्येक मधुश्रावणी' गीत छः या सात खण्ड पंक्तियों के समूह होते थे, जैसा कि उपर्युक्त नमूने से प्रत्यक्ष है। और जिसके प्रत्येक चरण भावों की माप के अनुकूल भिन्न भिन्न मात्राओं के होते थे। लेकिन छन्दों को ललित बनाने के लिए यह प्राचीन परिपाटी बदल दी गई। अब 'मधुश्रावणी' का प्रत्येक चरण पिङ्गल के नये तुले नियमों में बाँध दिया गया। इस सुरुचिपूर्ण दिशा का प्रत्येक चरण बारह बारह मात्राओं की यति से, अन्त में दो गुरु (SS), और कहीं कहीं दो लघु (II) के साथ आरम्भ हुआ—

[७]

लहु लहु धर सखि वानी
धन्कए कोमल छाती

शीतल आयु मांगे
शीतल कर लय नतन झॅगावद
शीतल दय दह पाने
शीतल हार अहिवात 'कुँवर' भल
शीतल जल न्हाने

शीतल हवा मन्द मन्द बहे और दशों दिशाएँ शीतल शीतल मौन लें।

शीतल सूर्य की शीतल किरणें मन्द मन्द बिखरें और आसमान शीतलता में फूल उठे।

हे सखी हमारे हृदय हृदय में शीतलता के भाव उदित हों। हमारे गीत और विधि व्यवहार सरल और शीतल हों।

'मधुश्रावणी' का यह पवित्र त्योहार शीतल हो। हमारा मानस जगत शीतलता की सुगन्धि से महक उठे।

हे सखी हमारी नव विवाहिता सहेली का अंग प्रत्यंग शीतल हो। दीपक का घृत शीतल हो, और यह शीतल दीप शिखा मन्द-मन्द जले अगराग और चन्दन शीतल हो, और हमारी शीतल हृदय गंगा मन्द मन्द बहे।

कवि 'कुँवर' कहता है—हे नव विवाहित तुम्हारा सौभाग्य शीतल हो। तुम शीतल जल में स्नान करो और शीतल हाथों में पान के शीतल शीतल पत्ते लेकर अपने शीतल नेत्रों को ढक लेने दो।

उपर्युक्त गीत-शैली में मनोराग या रागात्मिका वृत्ति का प्राबल्य है। रागात्मिका वृत्ति पिंगल और छन्दों की चहारदीवारी में कैद न होकर मर्मस्पर्शी उदात्त भावना और संगीतात्मक अभिव्यंजना में रहती है। रागात्मिका वृत्ति के मुख्यतया दो लक्षण हैं—[१] रसाभास और [२] रागोद्रेक। रस गीति-काव्य का प्राण है। जब भाव तरंगों के बीच रस केन्द्रीभूत होता है, तब गीति काव्य हृदयान्तर जनित सरिता प्रवाह की तरह अन्तर्गत धारा के रूप में बहने लगता है। पाठक देखें, 'मधुश्रावणी' की उपर्युक्त नूतनतम शैली में कवि का भाव प्रतिबिम्ब स्पष्ट रूप से चित्रित हुआ है। भाषा-वैभव और आलंकारिक चित्रण के अभाव में भी इसमें संगीतात्मक भावुकता का सफल निर्वाह है। भाषा दीर्घ समास

तरह घर घर कौर रही है। उसकी सभी सखियाँ विविध प्रकार के आभूषणों से विभूषित हैं, और सारा समाज आनन्द में पागल हो रहा है।

जब नव विवाहिता तरुणी के कमल सरीखे नेत्रों को उसके प्रियतम ने पान के पत्ते से ढक दिया, और उसके बद्ध कर-कमलों में जलती हुई बत्ती दी गई तब उसका अंग प्रत्यंग काँप उठा।

वह सजी नवविवाहिता तरुणी अपनी सहेलियों के बीच सज धज कर बैठी है। फिर जाने क्या उसका मुख म्लान है?

कवि 'कुँवर' कहता है कि उसकी आँखों से अविरल अश्रुपात हो रहे हैं, और गायिकाएँ मंगल गान गा रही हैं।

'नेत्रावरणों' का यह त्योहार सचमुच बड़ा विचित्र है और उसकी विधि अत्यन्त कठोर।

परिधि में प्राणपूर्ण है। उसका रचयिता शुष्क और अरसिक नहीं है। उसके हृदय मे भी काव्य-रस सूक्ष्म प्रेम फैला हुआ है। उसे भी संगीत की श्रुति प्रिय ध्वनि से आनन्द आता है। कहना चाहिये, प्रेम का ऊहापोहात्मक रूप, सूक्ष्म विश्लेषण और कवित्व का चमत्कार यहाँ मत ढूँढ़िये। सुन्दरता, कला और कला विधायक प्रतिभा कहीं और जगह मिलेगी। हार्दिक श्रद्धा निष्ठा-भरे उल्लास और आत्म लगी उत्तना—इन्हीं को यहाँ देखना है—

[१]

बेरि बेरि वरनइ दीनानाथ हे
बरा हे तिरिया जनम जनि देहु
तिरिया जनम जनि देहु हे दीनानाथ
बरा हे सुरति बहुत जनि देहु
सुरति बहुत जनि देहु दीनानाथ हे
बरा पुरुख अमरुख जनि देहु
पुरुख अमरुख जनि देहु दीनानाथ हे
बरा हे कोखिया निहुन जनि देहु
कोखिया निहुन जनि देहु दीनानाथ हे
बरा हे सौतिन सउत जनि देहु
सौतिन सउत जब दिहल दीनानाथ हे
बरा हे कवन अपराध हम कयलौं
बड़ अपराध तुहुँ कएले अबला
अबला मास निपन पैर दिहल
कौन अपराध हम कइला दीनानाथ हे
बरा कोखिया निहुन जब देल
बड़ अपराध तुहुँ कएल अबला गे
अबला ननदी पर हुतका चलओल
कओन अपराध हम कएली दीनानाथ हे
बरा हे पुरुख अमरुख जब देल

बड़ अपराध तुहुँ कएल अबला गे
दूध हो कठिअउ पएर धोएलह
कओन अपराध हम कएलि दीनानाथ हे
अगा हे सुरुज बहुत जर केलह
बड़ अपराध तोहुँ कएल अबला गे
अपना ननदि के बहुरन तोड़ लेलि

हे सूर्य भगवान मैंने बार बार अनुरोध किया कि तुम स्त्री का जन्म मत दो। अगर स्त्री का जन्म दो तो अत्यधिक सौन्दर्य न दो। अगर अत्यधिक सौन्दर्य दो तो मूर्ख पति न दो। यदि मूर्ख पति दो तो बाँझिन नहीं बनाओ। अगर बाँझिन बनाओ तो सौतिन नहीं दो।

लेकिन हे सूर्यदेव, तुमने मुझे सौतिन दी। हाय मैंने कौन ऐसा अपराध किया?

हे अबला, तुमने बहुत बड़ा अपराध किया। तुमने सास की लीपी हुई वेदी पर पैर रखा।

हे सूर्य भगवान मैंने कौन सा अपराध किया कि तुमने मुझे बाँझिन बनाया?

हे अबला तुमने बहुत बड़ा अपराध किया। तुमने अपनी ननद को घूँसे से मारा।

हे सूर्य भगवान, मैंने कौन-सा अपराध किया कि तुमने मुझे मूर्ख पति दिया?

हे अबला, तुमने बहुत बड़ा अपराध किया। तुमने दूध से पैर धोया।

हे सूर्य भगवान, मैंने कौन सा अपराध किया कि तुमने मुझे अत्यधिक सौन्दर्य दिया?

हे अबला, तुमने बहुत बड़ा अपराध किया। तुमने डगरे (बाँस के खपाचों का बुना हुआ एक वृत्ताकार पात्र) में बैंगन तोड़ा।

इस गीत से पता चलता है कि धर्म ने किस तरह ग्रामीण स्त्रियों के जीवन पर प्रभाव डाला है। यह धर्म में अन्ध श्रद्धा का ही परिणाम है कि वे डगरे में बैंगन तोड़ना, और सास की लीपी हुई वेदी पर पैर रखना भी पाप समझती

हैं। वस्तुत: धर्म एक ऐसी शक्ति है जो मानव जीवन और मानव इतिहास के समानान्तर चल रहा है। किसी भी जाति की सभ्यता उसके धर्म से सर्वथा रँगी होती है। कला कौशल, साहित्य, विज्ञान, दर्शन शास्त्र सभी पर और उनकी प्रत्येक अवस्था मे धर्म का प्रभाव देखा गया है। टालस्टाय ने अपनी What is Religion नामक पुस्तक मे लिखा है—

Religion remains what it has been in the past the Chief motor and heart of human societies and without it as without a heart, human life is impossible.

धर्म आज भी प्राचीन काल के समान बना हुआ है। वह मानव जाति का सचालक और हृदय है। जिस प्रकार बिना हृदय के मनुष्य जीवन असम्भव है, उसी प्रकार बिना धर्म के भी मनुष्य जीवन असम्भव ही है।

धर्म की इस सार्वभौमिकता के होते हुए भी जब वह अन्ध विश्वास का रूप पकड़ लेता है तो वह मानव-जीवन के लिए विघातक सिद्ध होता है। इस गीत मे अन्ध भक्त स्त्रियों की कूप मडूकता और धर्म म अन्ध श्रद्धा की एक क्षीण झलक वर्त्तमान है।

[२]

नदिया क तीरे तीर बोअले म राइ
छठी माइ के मृगा चरिय चरि जाइ
बाँधु हे छठी मइया अपन मिरगवा
मारतन कवन भइया धनुवा चढाय
रुपे केर धनुहा कचिए केर तीर
सोने केर धनुवा रूप केर हे तीर
रथ नित अबइछथिन कओन बहिन क भाइ
हे छठी माता करब अहाँ क सेवा
भरब अहाँ क डाला
अहाँ क सेवइत निरमल हयत काया

नदी के किनारे किनारे मैंने राई बोई। हाय! छठी माँ का मृगा उसे

अमुक देवी आँचल में अक्षत और घड़े में सरिता का स्वच्छ जल ले कर छठी माँ से पुत्र की भीख माँगने चली।

हे माँ, मुझे थोड़ा नहीं चाहिये, और मुझे ज़रूरत से ज़्यादा भी मत दो।

मैं एक पंडित पुत्र, और दो हल जोतने लायक़ ज़मीन माँगती हूँ।

हे दयाशीला छठी माँ, तुम शीघ्र प्रसन्न हो।

'थोड़े नहीं लेब हे माता, बहुत जनि दीऊ'—इन पंक्तियों में एक नारी हृदय की सहज सन्तोष भावना अपने स्वाभाविक रूप में बोल रही है। कबीर कहते हैं—

साईं इतना दीजिये, जामें कुटुम समाय
मैं भी भूखा ना रहूँ, साधु ना भूखा जाय

[५]

बिहने के पहर में धरम केर बेरिया सुरुज चलु हे गवने
जएबो मे जएबो कओन शाही के अगना
माइ कनिया देइ के खोइछा
दोहरिओ हथिया बइसल ओहि रे अगना
धरम केर बेरिया सुरुज चलु हे गवने
हे जएबो मे जएबो कओन शाही के अगना
दोहरिओ दऊरिया भरल ओहि रे अगना
धरम केर बेरिया सुरुज चलु हे गवने

कल प्रातःकाल धर्म की बेला है। हाय! सूर्य भगवान अस्त हो रहे हैं।

मैं अमुक शाही के आँगन में जाऊँगा, और कन्या देवी के आँचल में जाऊँगा। उनके आँगन में मेरे लिए दंतार हाथी खड़ा है।

अहा! धर्म की बेला है, और सूर्य भगवान अस्त हो रहे हैं।

मैं अमुक शाही के आँगन में जाऊँगा और कन्या देवी के आँचल में जाऊँगा। उनके आँगन में मेरे लिए फल फूल और मिष्टान्न से भरी चंगेरी रक्खी है।

अहा! धर्म की बेला है और सूर्य भगवान अस्त हो रहे हैं।

[६]

करवा फरए घौंदसए ऊपर सुग्गा मँडराय
मारवउ रे सुगवा धनुस सए सुगा रँमु मुरछाय
उजे केरवा जनु कोइ जुरय छठी माता ला
छठी माइ के जएतइन सनेम अरग देवय ला
उजे काँचए बाँस कर बँहिया रेशम क लागल डोर
भरिया हायतन कआन भइया भार लय पहुँचाय
बाट पुछायन बटोहिया भइया इ भार केकर जाय
आहे छठि अइमन ठकुराइन इ भार हुनकर जाय
नेमुआ फरए घादसए ऊपर सुग्गा मँडराए
मारवऊ रे सुगवा धनुसमए सुगा रूँमु मुरछाए
उजे नेमुआ जनु काइ छुअए छठी माता ला
छठी माइ के जएतइन मनेस अरग देवय ला
उजे काँचए बाँस केर बँहिया रेशम क लागल डोर
भरिया होरतन कआन भइया भार लय पहुँचाय
बाटहि पुछयिन बटोहिया भइया इ भार केकर जाय
आहे छठि अइमन ठकुराइन इ भार हुनकर जाय

घौद के घौद केला फला ह। उसे चखने के लिए सुग्गा मँडरा रहा है।

रे सुग्गे, मैं तुम्हें तीर से मारूँगी और तुम्हें मूर्च्छा आ जायगी।

केले के घौद को कोई नहीं छूए। वह छठी माँ के लिए सुरक्षित है। अर्घ्य देने के लिए वह छठी माँ को सौगात जायगा।

काँच बाँस की बहँगी है और उसमें रेशम की डोर लगी है। मेरे अमुक भाई भरिया होंगे और छठी माँ को सौगात पहुँचायेंगे। रास्ते में पथिक पूछेंगे कि यह भार किसका है? तब मेरे अमुक भाई कहेंगे—

'छठी सी यशस्विनी हैं। उन्हीं का यह भार है।'

यही अर्थ आगे की पंक्तियों का भी है। अन्तर इतना ही है कि उसमें केले के स्थान पर नीबू जोड़ दिया गया है।

सूर्यदेव को अर्घ्य देने की तैयारी दुपहरी से होने लगती है। नारियल, संतरा, अनानास आदि फल-फूल और मिष्टान्न तथा अनेक प्रकार के भोज्य-पदार्थ पहले से ही सुरक्षित रखे जाते हैं। उन्हें कोई पालतू जानवर जैसे—कुत्ते, बिल्ली और कोई पक्षी, जैसे—कौवे, मुर्गे आदि चखने नहीं पाते। प्रातः और सन्ध्या सूर्य को अर्घ्य देने के बाद लोग अर्घ्य दी हुई वस्तु का खाते हैं। इसलिए इस गीत में केले के घौद पर मँडराते हुए मुर्गे को तीर से मारने की चेतावनी दी गई है।

[७]

चारि पहर राति जल थल सेविला
सेविलों छठि माय चरणार छठी माता
परसन होऊ न सहाय छठी माता
अपना ला माँगिला अन धन लछुमी
युग युग माँगु अहिवात छठी माता
परसन होऊ न सहाय छठी माता
घोड़ा चढ़न ला गे बेटा माँगिलों
माँगिलों घर सम्हारनि पतोहु छठी माता
बयना बाँटे लागि बेटी माँगिलों
पंडित माँगिलों दमाद छठी मइया
परसन होऊ न सहाय छठी मइया

रात के चारों पहर स्थल और जल में बैठ कर मैं तुम्हारे चरण की पूजा करती हूँ।

हे छठी माँ, तुम मुझ पर प्रसन्न होओ।

मैं अपने लिए अन्न धन, लक्ष्मी माँगती हूँ और मेरा सुहाग युग युग अटल रहे—यही मेरी साध है।

हे छठी माँ, तुम मुझ पर प्रसन्न होओ।

घोड़ा पर चढ़ने के लिए बेटा माँगती हूँ और घर के काम-काज सँभालने वाली पतोहू। बयना वापिस करने के लिए बेटी और पण्डित दामाद माँगती हूँ।

हे छठी माँ, तुम मुझ पर प्रसन्न होओ।

गीत में 'सचनी' और 'बयना' दो शब्द आये हैं। 'सचनी' संस्कृत के 'संचय' शब्द का अपभ्रंश है। 'सचनी' का शब्दार्थ है संग्रह करनेवाली और 'सचय' का अर्थ है—समूह, संग्रह।

मिथिला के गाँवों में जब किसी के कुटुम्ब या मित्र कोई मिष्टान्न या भोज्य पदार्थ अपने सगे सम्बन्धियों को उपहार भेजते हैं तो वे उसका स्वयं ही उपभोग न कर अपने पड़ोसियों और मित्रों को भी थोड़ा बहुत भेजते हैं। सगे सम्बन्धियों को इस उपहार भेजने की प्रथा को ही 'बयना' कहते हैं।

किसी वस्तु का स्वयं ही उपभोग न कर अपने पड़ोसियों और मित्रों को उपहार भेजने की यह प्रथा बड़ी सुन्दर है। इसमें हम संसार के प्राचीनतम ग्रन्थ वेद की 'संगच्छध्वं संवदध्वं, सं वो मनांसि जायताम्' इस आज्ञा की झाँकी मिलती है।

मिथिला में किसी भोज्य वस्तु के खाने के समय छोटे छोटे बच्चे निम्न लिखित तुकबन्दी गाते हैं—

बाँट जूट खाये त गंगा नहाय
असगर खाये गुह डबरा नहाय

जो कोई वस्तु बाँट कर, हिलमिल कर खाता है, उसको गंगा स्नान करने का पुण्य होता है और जो अकेला खाता है वह पुरीष के डबरे में स्नान करता है।

[८]

छोटि मोटि मालिनी क बेटिया कि कँचए कली
चुनरा जे पहिरि गे मालिन सुरुजक जोत
पाप क पसारि हे त मालिन चलना निरोल
सभरे डलिअवा दीनानाथ देलि अगुआय
बाँझिन डलिअवा दीनानाथ देलि पछुआय
सासु मारे हुथरा दीनानाथ ननद पढ़े गारि
पर लोग गारिनि हे दीनानाथ से दो उलहन देय
त लेटि लेटि गे बाँझिन अँचरा पसार

सासु के हुथवा गे बाँझिन गंगा बहि जाय
ननदो के गरिया गे बाँझिन दिन दुइ चार
गोतिनि उलहनमा गे बाँझिन देहि न सधाय
देवे के त देलिअइ दीनानाथ छिनि मत लिउ
बाँझिपन छोड़िडलि हे दीनानाथ मरौली जनि लगाउ

हे धोबिन की छिनरी बेटी, तुम अभी कच्ची कली हो।

तुम मेरी चुँदरी सूर्य के प्रकाश की तरह साफ धोना और चन्दन के पेड़ पर सुखने के लिये पसारना।

हे सूर्यदेव, तुमने सभी व्रतियों की डाली आगे कर दी और मुझ बाँझिन का डाला पीछे कर दिया।

हे दीनानाथ मेरी सास मुझे घूँसे से मारती है और ननद गाली देती है। गैर कोख की जनी गोतनी भी मुझे उलाहना देती है।

हे बाँझिन ओस्वन पसार कर पुरस्कार लो। सास के घूँसे से गंगा बह जायगी। ननद की गाली दो-चार दिनों के लिए है और गोतनी के उलाहने का जवाब दो।

हे दीनानाथ, कहने के लिए तो तुमने पुरस्कार दिया। लेकिन फिर उसको वापस मत लो। तुमने मेरा बन्ध्यापन दूर कर दिया, लेकिन उसमें रहोबदल मत करो।

[६]

अयोध्या नगरिया माइ हे दऊरा बुनाइछइ
दऊरो न मिलइछइ माइ हे कवने अवगुनमे
दीनानाथ न उगायेन माइ हे कओने अवगुनमे
उगु उगु दीनानाथ हे लगएलि बड़ देरिया
अहाँ उगइते दीनानाथ हे दुनिया होएत इंजोरिया
अहाँ र डुबइत दीनानाथ हे दुनिया होएत अन्हरिया
अयोध्या नगरिया माइ हे गेंड़ुआ बिकाइछइ
गेंड़ुओ न मिलइ माइ कवने अवगुनमे

हे सखी, अयोध्या नगर में चंगेरी बुनी जाती है। जाने किस अवगुण के कारण चंगेरी नहीं मिलती।

हे सूर्यदेव, उगो। तुम्हारे उदय होने में बड़ी देर हुई। तुम्हारे उदय होने से ही दुनियाँ प्रकाशित होगी और अस्त होने से ही दुनियाँ अँधेरी।

हे सखी, जाने किस अवगुण के कारण सूर्यदेव नहीं उगते।

अयोध्या नगर में गेहूँ बिकता है। जाने किस अवगुण के कारण गेहूँ नहीं मिलता। और हे सखी, न मालूम क्यों सूर्यदेव नहीं उगते।

[१०]

कओन भइया चललन मगहर मुंगेरवा
कओन बहिनो कह पठओलन कओन भइया समधिया
हमरा लागि लइह भइया केला क घोंदवा
ऍसो के समइया बहिना केरा भेल मॅहगिया
छाड़ि देहु आहे बहिनो छठि मन बरतिया
होए देहु आहो भइया केरा क महॅगिया
हम न छाड़ब भइया छठि सन बरतिया
पान फूल से आहो भइया छठ माइ क अरगिया
हुनके सेवइत भइया निरमल हयत काया

अमुक भाई मगह और मुंगेर चले। अमुक बहन ने खबर भेजी—हे भाई, मेरे लिए केला के घौद उपहार में लाना।

हे बहन, इस साल केला बहुत महँगा है। इसलिए छठ व्रत मत करो।

बहन ने कहा—हे भाई, केला महँगा है तो क्या ? मैं छठ सा पवित्र व्रत नहीं छोड़ूँगी। पत्र पुष्प से हो छठी माँ को अर्घ्य दूँगी, क्योंकि हे भाई, उनकी सेवा करने से ही मेरी काया निर्मल होगी।

[११]

काँचहिं बाँस केर महवर हे
ईंगुरे ढेऊरल चारों कोन
भले रे रग कोहवर हे

ताहि मे जे सुतलन दीनानाथ
पिठ लागल छुटि देर हे
उठावए गेलथिन कोन बहिनो
आहे उठु भइया भेल भिनुसार
अरग केर बेर भेल
मने र रग कोहवर हे
अइसन ननदि दु चार न
कतहु न देखल हे
आहे आधे रात वालु भिनुसार
अरग केर बेर भेल
उठावए गलथिन अमा मोरा
आहे उठु बबुआ भेल भिनुसार
अरग कर बेर भेल
भले र रग कोहवर हे
एहन अमा दु चार न
अमा आध रात वाले भिनुसार
अरग कर बेर भेल
भले र रग कोहवर हे

कौंच बाँस का कहबर है। उसके चारों कोने ईंगुर से चित्रित हैं।

कैसा अलकृत कोहबर है—री सखी!

ऐसे सुचित्रित कोहबर में पैठ कर सूर्य भगवान सोये, और उन्हीं की पीठ के नजीच छुटी देखी सोई।

हे सखी मेरी अमुक बहन ने वहाँ जाकर कहा – हे भाई, उठो। सुबह हो गई। अर्घ्य की बेला समीप है।

मैंने ऐसी बेहूदी ननद आज तक नहीं देखी। आधी रात को सुबह कह रही है। कहती है अर्घ्य की बेला हो गई।

हे सखी, मेरी माँ ने वहाँ आ कर कहा—हे पुत, उठो। सुबह हो गई।

अर्घ्यं देने की बेला समीप है।

कैसा अलंकृत कोहबर है—री सखी!

मैंने ऐसी नासमझ माँ आज तक नहीं देखी। आधी रात को सुबह रट रही है। कहती है अर्घ्य की बेला हो गई।

कैसा अलंकृत कोहबर है री सखी?

[१२]

राति छुठि देइ गमने चललि
राति हे छुठि कहमा गँवऊलीं
रात गँवऊलीं कान मिश्र क ऑंगना
जहाँ गाइ के गोबर निपन भेल उहाँ
जहाँ दोहरि हथिया बइसन भेल उहाँ
जहाँ दोहरि कुरवार सँ भरन भेल उहाँ
जहाँ दोहरि कलसुप मँ अरघ भेल उहाँ
जहाँ पीअर वस्त्र पेन्हनन भेल उहाँ
जहाँ उज्जर खस्सी भभूत भेल उहाँ
जहाँ गाइ क घिऊ सँ हुमाद भेल उहाँ

द्विरागमन काल में तरुणा छठी देवी विदा हुई।

हे छठी देवि, तुमने आज रात कहाँ गँवा दी?

हे सती मैंने रात अमुक मिश्र के ऑंगन में गँवाई है, जहाँ गाय के गोबर से ऑंगन लीपा गया है जहाँ दो दो दँतैले हाथी मेरे स्वागत में बिठाये गये हैं, जहाँ अक्षत, केले और नीबू से दो दो घड़े भर कर मेरी खोंइछ भरी गई है, जहाँ मुझे दो दो सुन्दर सूप भर कर अर्घ्य दिया गया है, जहाँ मुझे नवीन पीताम्बर पहनाया गया है, जहाँ मुझे चढ़ावे में सुफ़ेद बकरे भेंट किये गये हैं, और जहाँ गाय के घी से होम किया गया है—हे सती मैंने आज वहीं अमुक मिश्र के ऑंगन में रात गँवाई है।

का बोलबाला है। दरअसल श्यामा चकेवा के खेल का उद्देश्य है—भाई बहन दोनों के हृदय मे विशुद्ध प्रेम भाव का सचार करना और चुगला अपनी कलुषित चुगलख़ोर वृत्ति से उस प्रेम पर कुठाराघात करता है। इसीलिए इस खेल में हमारी बहनें चुगला की खिल्लियाँ उड़ाती हैं। चुगला की मिट्टी की जो मूर्त्ति बनाई जाती है वह बेवकूफों की-सी। उसकी कमर म आर पार छेद कर पाट के बारीक सूत लगा दिये जाते हैं, जिसको 'श्यामा चकेवा' के खेल खेलनेवाली लड़कियाँ प्रतिदिन थोड़ा थोड़ा करके जलाती हैं और निम्नलिखित गीत की बार बार आवृत्ति करती है—

चुगला कर चुगला पिलइया करे म्याऊँ
ध ला चुगला के फाँसी दीऊ
जहाँ हमर बाबा बइसे तहाँ चुगला चुगली करे
जहाँ हमर भइया बइस तहाँ चुगला चोरी करे
धला चुगला क फामी दीऊ

चुगला चुगली खाता है, और बिल्ली म्याऊँ करती है। चुगला को पकड़ लाओ। फाँसी दे दें। जहाँ हमारे पिता बैठते हैं, वहाँ चुगला पीठ पीछे दूसरों की निन्दा करता है। जहाँ हमारे भाई बैठत हैं वहाँ चुगला चोरी करता है। इसलिये चुगला को पकड़ लाओ। फाँसी दे दें।

[२] 'श्यामा चकेवा' से किसी व्यक्तिगत भाई-बहन का हो बोध होता है। इसलिये इस खेल मे 'सतभइया' नामक एक नवीन पात्र की कल्पना की गई है। 'सतभइया' का अर्थ है— सात भाई'। इस नवीन पात्र की कल्पना करने का आशय यह है कि किसी व्यक्तिगत भाई बहन का गुण गान न कर 'श्यामा चकेवा' के खेल मे भाग लेने वाली सभी बहनों के भाइयों का व्यापक रूप से गुण गान किया जाय।

'सतभइया' एक पक्षी भी होता है। लेकिन यहाँ 'सतभइया' को 'सात भाई' कह कर सभी भाई बहनों के लिये व्यापक अर्थवाला इसलिये बनाया गया कि 'श्यामा-चकेवा' के खेल खेलने के समय 'सतभइया' की मिट्टी की जो मूर्ति बनाई जाती है उससे किसी पक्षी विशेष का बोध नहीं होता। 'सतभइया' की आकृति

मनुष्य की-सी होती है। उनकी संख्या भी एक नहीं, सात होती है। 'सतभइया' शब्द का अर्थ हम पक्षी विशेष उस दशा में करते, जब कि उसकी आकृति पक्षी की सी बनाई जाती, और उसकी संख्या भी एक होती। किंतु ऐसा नहीं होता।

सतभइया' पात्र से सम्बद्ध जो गीत है उसमें भी इसी कथन की पुष्टि होती है। मुलाहिज़ा कीजिये

साम चाको साम चाको अइहऽ हे
कूँर खेत मे बइसहऽ हे
सब रंग पटिया ओछइहऽ हे
ओहि पटिया पर कय कय जना
सातो जना
एक एक जना के कय कय पुरि
एक एक जना के सात सात पुरि

ओ साम (श्यामा) चाको (चकेवा)! ओ साम चाको! कूँर खेत में आना, और प्रसन्न हो कर बैठना। वहाँ हर एक रंग का बिछावन बिछाना।

उस बिछावन पर कितने भाई बैठे?

सात भाई बैठे।

एक एक भाई के हाथ में कितनी कितनी पूरियाँ?

एक एक भाई के हाथ में सात सात पूरियाँ।

रेखाङ्कित पंक्तियों और उनके अर्थ पर गौर करना चाहिये।

[३] 'खड़रिच' शब्द खञ्जन का पर्याय है। मिथिला के गाँवों में 'खञ्जन' की जगह 'खड़रिच' ही प्रयुक्त होते है। खञ्जन शरद्-ऋतु में आता है, और इसी ऋतु में 'श्यामा चकेवा' के खेल भी खेले जाते हैं। इसलिये 'श्यामा चकेवा' के खेल खेलनेवाली बालिकाएँ शरद् ऋतु के आगमन का अग्रदूत होने के कारण इसको अपने खेल के पात्रों में स्थान देती हैं और इसके शुभागमन पर मंगलात्मक गीत गाती हैं।

[४] वन तीतर—'श्यामा चकेवा' के गीत नदी किनार, खेतों और वनों में गाये जाते हैं। इसलिए एक वनवासी पात्र की भी कल्पना की गई है। तीतर

वन और झाड़ी झुरमुटों में ही रहता है। इसीलिये इसका 'श्यामा चकेवा' के पात्रों में स्थान मिला है।

[५] झाँझी कुत्ता—प्रत्येक व्यक्ति का अपना एक परिवार है। व्यक्ति इकाई है और इकाइयों के जोड़ का नाम परिवार है। परिवार में मनुष्य, कुत्ते, बिल्ली, गाय, भैंस, बैल सभी शामिल हैं। गोवों में जो गृहस्थ हैं उन सब के घर में प्राय एक पालतू कुत्ता होता है। इसलिए 'श्यामा चकेवा' के खेल खेलनेवाली स्त्रियाँ जब वन बागों खेतों और जंगलों में जाती है तो कुत्ते को भी साथ ले लेती है। 'श्यामा चकेवा' के पात्रों में कुत्ते का स्थान मिलने का एक कारण यह भी है कि वन बागों और जंगलों में रहनेवाले भेड़िये, सूअर आदि खूनी जानवरों से आत्म रक्षा की जाय।

[६] 'वृन्दावन' का आशय वन विशेष से है। लेकिन इसकी आकृति मनुष्य के मुख की सी बनाई जाती है, और इसके शरीर में पतली पतली लम्बी सींकें लगा दी जाती हैं। जब गीत गाती हुई लड़कियाँ वन बागों और खेतों में जाती हैं, तो इन सींकों में आग लगा देती है, और निम्न लिखित पंक्तियों की जोर जोर से आवृत्ति करती हैं—

> वृन्दावन म आग लागल कोइ न बुझावय हे
>
> हमरा म कान भइया तिनहि बुझावय हे

वृन्दावन में आग लग गई है। हाय! कोई नहीं बुझाता। हमारे अमुक भाई हैं, वही इसे बुझाएंगे।

उपर्युक्त पात्रों को मूँज अथवा बाँस के खपाचों की बनी चँगेरिया में रख कर खेल में शरीक होनेवाली लड़कियाँ उनमें चिराग जला देती है, और उन्हें सिर पर ले कर झूमती हुई अपने टोले मुहल्ला तथा गाँव की गलियों की परिक्रमा करती हैं। परिक्रमा की समाप्ति पर लड़कियाँ लहलहाते हुए खेतों के किनारे, तुलसी के चबूतरे के निकट अथवा आम, इमली या नीम की छाँह में बैठ कर 'श्याम चकेवा' के पात्रों को अपनी अपनी चंगेरियों से निकाल कर ज़मीन पर रखती हैं, और उन्हें हरी दूब की नन्हीं-नन्हीं फुनगियाँ चरने को देती हैं। इस प्रकार पात्रों को चराने के बाद लड़कियाँ अपने-अपने ठिकाने लौट आती हैं।

'श्यामा चकेवा' का खेल कार्तिक महीने के शुक्ल पक्ष की सप्तमी तिथि में प्रारम्भ होता है, और महीने के अन्त में अर्थात् कार्तिक की पूर्णमासी को समाप्त हो जाता है। पूर्णमासी के दिन खेल में भाग लेनेवाली बालिकायें केले के थम्भ का बेड़ा बनाती हैं, और अपने अपने पात्रों को तोड़ फोड़ कर उस पर रख देती हैं तथा रास्ते में पात्रों के कलेवे के लिए मिट्टी के एक बक्स में चावल, दूसरे में चूरा, और तीसरे में मिठाई और दही रख कर बेड़े पर रख देती हैं। इसके बाद बेड़ को गाँव के निकटवर्ती तालाब या नदी में छोड़ देती हैं। इस समय जो गीत गाये जाते हैं, वे 'श्यामा चकेवा' की विदाई के गीत के नाम से प्रसिद्ध हैं।

यहाँ 'श्यामा चकेवा' के कुछ चुने हुए गीत दिये जाते हैं—

[१]

जइसन नदिया सँवार तइसन भइया असवार
जइसन करवा क थम्भ तइसन भइया क जाँघ
जइसन धोबिया क पाट तइसन भइया क पीठ
जइसन रेशम क रेशा तइसन भइया क केश
जइसन आम क फाँक तइसन भइया क आँख
जइसन चनन रिगढ़ तइसन भइया हाथ क लाठी
जइसन अगल अगाउ तइसन चुगला हाथ क लाठी

जिस प्रकार नदी के वक्षःस्थल पर सवार हो जाता है, उसी प्रकार मेरा भाई घोड़े की पीठ पर सवार है।

जैसा केले का थम्भ होता है, वैसी ही मेरे भाई की जाँघ है। जैसा धोबियों के कपड़ा साफ करने का लकड़ी का मज़बूत पाट होता है, वैसी ही मेरे भाई की पीठ है।

जिस तरह रेशम के रेशे चिकने और मुलायम होते हैं, उसी तरह मेरे भाई के केश हैं। जैसी आम की फाँक होती है, वैसी ही मेरे भाई की आँख है।

जैसा चन्दन का वृक्ष होता है, वैसी ही मेरे भाई के हाथ की लाठी है, और जैसी बघजली अराटी होती है, वैसी ही चुगले के हाथ की लाठी है।

उपमायें वे ही हैं, जो ग्राम या ग्राम के आस पास दीख पड़ती हैं। इसमें किसी प्रकार की टीमटाम या तड़क-भड़क नहीं।

[२]

किनकर हरिअर हरिअर डिभवा गे सजनी
कौन बहिनो के चरइछन चकेउआ गे सजनी
शरदेन्दु भइया के इहो हरिअर डिभवा गे सजनी
सुमित्रा बहिनो के चरइछन चकेउआ गे सजनी
किनकर राज महाराज गे सजनी
किनका राजे खेलबइ झुमरिया गे सजनी
किनकर राज दुखराज गे सजनी
किनकर राजे कतबइ चरखवा गे सजनी
बबा क राज महाराज गे सजनी
भइया राजे खेलबइ झुमरिया गे सजनी
ससुर क राज दुखराज गे सजनी
स्वामी राज कतबौं चरखवा गे सजनी

हे सखी, यह किसकी जौ और गेहूँ की हरी भरी कोंपलें हैं? और किस बहन का यह चकेवा चर रहा है?

उसकी सखी ने उत्तर दिया—

हे सखी, यह शरदेन्दु भाई की जौ और गेहूँ की हरी भरी कोंपलें है, और सुमित्रा बहन का यह चकेवा चर रहा है।

हे सखी, किसका राज्य सुखमय होता है? किसके राज्य में श्यामा चकेवा के खेल खेलूँगी? किसके राज्य में दुख झेलूँगी, और किसके राज्य मे चर्खा कातूँगी?

उसकी सखी ने कहा—

हे सखी, पिता का राज्य सुखमय होता है। भाई के राज्य में 'श्यामा चकेवा' के खेल खेलूँगी। श्वसुर के राज्य में दुख झेलूँगी, और अपने सजन के राज्य मे चर्खा कातूँगी।

इस गीत से जान पड़ता है कि स्त्रियाँ श्वसुर के राज्य में कष्ट पाती हैं। सास-ससुर का व्यवहार बहू के प्रति प्राय: रूखा होता है। मिथिला के गाँवों में एसी विरले ही सास हैं, जो अपनी बहू से सहानुभूति की दो बातें करें। गीत की अन्तिम पंक्ति 'स्वामी राज कतवो चरखवा मे सजनी'—'हे सखी, मैं सजन के राज्य में चर्खा कातूँगी' से पता चलता है कि वर्तमान चर्खा-आन्दोलन युग के पहले भी हमारे घरों चर्खे चलाने का चलन था। और राजकुमारियाँ और रानियाँ तक चर्खे चलाना उन्नति और पर्दापाशी का साधन समझती थीं।

[३]

धान धान धान त भइया कोठी धान
चुगला कोठी भुस्सा
आर वृन्दावन पार वृन्दावन
भइया मुख पान चुगला मुख कोइला
मटर-मटर मटर त भइया कोठी मटर
चुगला कोठी फटर
आर वृन्दावन जार वृन्दावन
भइया मुख पान चुगला मुख कोइला
चाउर चाउर चाउर त भइया कोठी चाउर
चुगला कोठी छाउर
आर वृन्दावन जा‹ वृन्दावन
भइया मुख पान चुगला मुख कोइला
उरीद-उराद उराद त भइया कोठा उरीद
चुगला कोठा फुरीद
आर वृन्दावन पार वृन्दावन
भइया मुख पान चुगला मुख कोइला

हमारे भाई की कोठी में धान भर, और चुगले की कोठी में भूसा।

हे सखी, आओ हम वृन्दावन चलें। हमारे भाई के मुँह में पान पड़े, और चुगले के मुँह में कोयला।

हमारे भाई की कोठी मटर से भरे, और चुंगले की कोठी में चूहे डंड पेलें।

हे सखी, आओ हम वृन्दावन चलें। हमारे भाई के मुँह में पान पड़े, और चुगले के मुँह में कोयला।

हमारे भाई की कोठी में चावल पड़े, और चुगले की कोठी में राख।

हे सखी, आओ हम वृन्दावन चलें। हमारे भाई के मुँह में पान पड़े, और चुंगले के मुँह में कोयला।

हमारे भाई की कोठी उड़द से भरे, और चुंगले की कोठी में चूहे डंड पेलें।

हे सखी, आओ हम वृन्दावन चलें। हमारे भाई के मुँह में पान पड़े, और चुंगले के मुँह में कोयला।

इस प्रकार प्रत्येक अन्न का नाम जोड़कर इस गीत की आवृत्ति की जाती है, और खेल में भाग लेनेवाली बालिकाएँ चुंगले की खिल्लियाँ उड़ाती हैं।

[४]

सामा खेले गेला म कौन भइया केर टोल
चन्द्रहार हेराइ गेल हे भइया डलना लय गेल चोर
चोरवा क नाम गे बहिनी बताए देहु' हे मार
फलना से फलना हो भइया अरजानु रहया नरजोर
गाडे़ बान्ह रान्हया हो भइया रशम केर हे डोर
जूता चर्नि मारिह हे भइया करजवा सालए मार

अमुक भाई के मुहल्ले में मैं सामा खेलने गई।

हे भाई, वहाँ मेरा चन्द्रहार भूल गया, और मेरी चँगेरी किसी ने चुरा ली।

भाई ने पूछा—हे बहन! कहो उस चोर का नाम क्या है?

बहन ने कहा—हे भाई! अमुक राय चोर हैं। उन्होंने मेरी चँगेरी और चन्द्रहार चुराये हैं। हे भाई, आप उसे कस कर रेशम के रस्से में बाँधें, और जूते से उसकी खबर लें। वह काँटा बन कर मेरे कलेजे में चुभ रहा है।

कभी-कभी ऐसा होता है कि 'श्याम-चकेवा' के खेल खेलनेवाली बालिकाएँ अपने मिट्टी के पात्रों को ज़मीन पर रख कर गाती हुई दूर निकल जाती हैं, जब गाँव के शरारती लड़के उन्हें चिढ़ाने के लिए उनके पात्रों को चुरा लेते हैं। इस

गीत की गायिका ने किसी लड़के की इसी शरारत से तंग आकर अपने भाई से शिकायत की है, और उसकी सीनाज़ोरी के लिए उसको उपयुक्त सज़ा देने का अनुरोध किया है।

[५]

सामा खेले गेलौं कौन भइया आँगन है
आहे बनिया भउजो लेल लुलुआय
इहां रे कहां आएल हे
त जनि लुलुआउ भउजा जनि
पाड़ गारिओ हे
जयलन रहन माय बाप क राज
तयलन सामा खेलब हैं
छूटि जएतइ माय बाप क राज
छाड़ब अहाँक आँगन हे
एतना बचनिया जब सुनलन भइया
भइया मारे लगलन तिरवा घुमाय
बहनिया मोर पाहुन हे

हे सखी, अमुक भाई के आँगन में मैं सामा खेलने गई। वहाँ नवोढ़ा भाभी ने मुझे दुत्कारा, कि तुम यहाँ कहाँ आई हो?

मैंने कहा—हे भाभी, तुम मुझे इस तरह मत फटकारो। और न मुझे गाली दो। जब तक मैं माँ बाप के राज्य में हूँ, तभी तक सामा खेलती हूँ। जब माँ बाप का राज्य छूट जायगा, तो तुम्हारा आँगन भी छोड़ दूँगी।

जब मेरे अमुक भाई ने यह सुना तो वह आगबबूला हो गये, और तीर ले कर भाभी को मारने दौड़े। फिर उन्होंने भाभी को समझाया कि तुम बहन को इस तरह मत फटकारो। क्योंकि बहन हमारी पाहुन है।

इस गीत में दिखाया गया है कि बहन के प्रति भाई के हृदय में कितना अगाध प्रेम होता है, और भाभी अपनी ननद के साथ कैसा रूखा सलूक करती है। निम्न लिखित पद्य—

जयसन रहन माय बापक राज तयसन सामा खेलव हे
छूटि जयतइ माय बाप क राज छाड़ब अहाँ क आँगन हे
यह ही मार्मिक और करुण रस पूर्ण है।

[६]

नदिया क तीर तीरे कोन भइया खेलत शिकार
कह पठवलथिन माइ हे सुमित्रा बहिनो
के सनाथ हे माइ
भइया अएथिन महमान गे माइ
माइ कोठी नहि आरम चउरवा
पनरसना नहि बीड़ा पान गे माइ
कोना राखब माइ कोन भइया केर मान
माइ हाट बाजार सँ चउरबा मँगएबौ
तमोलिन घर बीड़ा पान
भले विधि राखब बेटी
कोन भइया केर मान

नदी किनारे अमुक भाई खेल रहे हैं।

हे सखी, उन्होंने सुमित्रा बहन को अपने आने की सूचना भेज दी है।

बहन ने जाकर अपनी माँ से कहा —

हे माँ, आज मेरे भाई आ रहे हैं। लेकिन न तो तुम्हारी कोठी में महीन चावल हैं, और न पान पात्र में पान के बीड़े। फिर हे माँ, तुम किस तरह अमुक भाई का स्वागत करोगी?

माँ ने कहा—हे बेटी, बाजार से मैं महीन चावल मँगाऊँगी, और तमोलिन के घर से पान के बीड़ा। और इस तरह मैं तुम्हारे अमुक भाई का स्वागत करूँगी।

[७]

सामा खेले गेलो माइ हे कोन भइयक टोल
गोखुलक कँटवा लुबुकि धएलक सड़िया
छाड़ु छाड़ु कँटवा लगउलि बड़ हे देरिया

मोर पछुअरवा दरजिया भइया हितवा
तोन्हे टाँपे सिइह दरजिया मोर चित्र साड़िया
साड़िया सिअउनि काहि का ए देब दनमा
चढ़ के घोड़ा देबो काने दुनु सोनमा
आगिया लगइबो रहन काने दुनु सोनमा
जब हम जइबो दरजिया अपन ससुररिया
सासु देबो दनमा ननद देबो दछिना

हे सखी, अमुक भाइ के मुहल्ले में मैं सामा खेलने गई। वहाँ गोखुले के पैने काँटे से मेरी साड़ी छिन विछिन हो गई।

हे काँटे तुम मेरी साड़ी छोड़ दो। घर वापस जाने में मुझे बड़ी देर हो गई।

मेरे घर के पिछवाड़े बसे हुए हे दर्जी तुम मेरा हितचिन्तक हो। मेरी इस फटी हुई चित्रित साड़ी को बारीकी से सी दो।

दर्जी ने कहा—हे बहन अगर मैं तुम्हारी साड़ी सी दूँ, तो उसके पुरस्कार में तुम मुझे क्या दोगी ?

नायिका ने कहा—हे दर्जी, चढ़ने के लिए घोड़ा दूँगी और तुम्हारे दोनों कान सोने से अलंकृत करूँगी।

दर्जी ने कहा—हे बहन, चढ़ने के घोड़े में आग लगे, और तुम्हारे सुनहले आभूषण पर वज्र गिरे (मैं इन दोनों में से कुछ न लूँगा)।

तब नायिका ने कहा—हे दर्जी तुम मेरी साड़ी सी दो। जब मैं अपने श्वसुरगृह जाऊँगी, तो साड़ी सीने के पुरस्कार में तुम्हें अपनी सास और ननद दूँगी।

गीतों में सास और ननद बहू की आँखों की किरकिरी होती हैं, ठीक इसी तरह जैसे सास और ननद की आँखों की किरकिरी बहू। इसीलिए इस नायिका ने दर्जी को कपड़े सीने के पुरस्कार में अपनी सास और ननद भेंट देने का वचन दिया है। क्या गजब की सूझ है ! न रहेगा बाँस, न बाजेगी बाँसुरी। घर में न सास और ननद रहेंगी, और न झगड़े होंगे। यदि सास और ननद इस गीत से नसीहत लें, और अपनी बहू के साथ शिष्टता से पेश आयें, तो यह आपस का

टंटा चमेड़ा मदा के लिए मिट जाय

[८]

हमरा मे कौन भइया चतुरि सेयान हे
बमे ले लेन कगजा दाहने खतियान हे
अपना लागि लिखिह भइया अन धन लक्ष्मी हे
हमरा लागि लिखिह भइया सामा जोड़ चकेवा हे
हमरा मे कौन भइया चतुरि सेयान हे
बमे ले लेन कगजा दाहने खतियान हे
अपना लागि लिखिह भइया चढ़ने के घोड़वा हे
हमरा लागि लिखिह भइया हंसा जोड़ि चकेउआ हे

हमारे अमुक भाई जो बड़े कुशाग्रबुद्धि और चतुर हैं, बायें हाथ में कागज़ और दायें में खतियान (एक तरह की देहाती बही) ले कर बैठे।

हे भाई, आप खतियान में अपने लिए अन्न धन और लक्ष्मी, तथा मेरे लिए 'श्यामा चकेवा' लिखें।

हमारे अमुक भाई, जो बड़े कुशाग्र बुद्धि और चतुर हैं बायें, हाथ में कागज़ और दायें में खतियान ले कर बैठे।

हे भाई *आप खतियान में अपने लिए सवारी का घोड़ा लिखें*, और मेरे लिए 'श्यामा चकेवा' की जोड़ी।

यह गीत 'श्यामा चकेवा' के खेल प्रारम्भ होने के दिन से एक दो रोज पहले ही गाया जाता है। इसमें बहन ने अपने भाई से 'श्यामा चकेवा' की जोड़ी खरीद लाने की फरमायश की है। इस गीत को पढ़ने से पता चलता है कि हमारी बहनें 'श्यामा चकेवा' के खेल खेलने की कितनी उत्सुक होती हैं।

[•]

आगे डिहुली आग डिहुली सामा जाइछइ समुरा कुछु
गहना चाहि गे डिहुली धला कौन सोनार के
गढ़वाइए देबऊ गे डिहुली आगे डिहुली आ गे डिहुली
सामा जाइछइ समुरा कुछु पौनी चाहि गे डिहुली

धला बओन लोहार के बनवाइए देवउ गे डिहुली

हे सखी, सामा अपने श्वसुर-गृह जा रही है कुछ गहने की ज़रूरत है।

उसकी सखी ने कहा—हे सखी, तुम अमुक सोनार को पकड़ लाओ। मैं उससे सामा के लिए गहने गढ़वा दूँगी।

हे सखी, सामा अपने श्वसुर-गृह जा रही है। कुछ पिटारी की ज़रूरत है।

उसकी सखी ने कहा—हे सखी, तुम अमुक लोहार को पकड़ लाओ। मैं उससे सामा के लिए पिटारी बनवा दूँगी।

यह सामा की विदाई का गीत है। कार्तिक पूर्णमासी के दिन जब 'श्यामा चकेवा' के खेल खेलनेवाली स्त्रियाँ केले के थम्भ का बेड़ा बना कर नदी किनारे 'श्याम चकेवा' को विदा करने जाती हैं, तो यह गीत गाती हैं।

[१०]

निम्न लिखित गीत में किसी बहन ने अपने भाई और भाभी की तारीफ के पुल बाँधे हैं, और बुँगला तथा उसकी पत्नी की मखौल उड़ाई है। इनका मखौल उड़ाने का ढङ्ग बड़ा आकर्षक होता है। दस-दस या सोलह सोलह युवतियों की टोलियाँ दो गिरोहों में बँट जाती हैं। फिर एक गिरोह की युवतियाँ दूसरे गिरोह की हमजोलियों से व्यंग्यात्मक प्रश्न करती हैं—

हमर भइया कइसे आवे?

अर्थात्, हमारा भाई किस प्रकार आवे? दूसरा गिरोह की युवतियाँ उत्तर देंगी—

हाथी पर बइस हँसइत आवे
पान सँ दाँत रंगइत आवे
रूमाल सँ मुँह पोछइत आवे
कँघी सँ केश झारइत आवे

हाथी पर बैठकर मुसकिराता हुआ आवे। पान से दाँतों को रँगता हुआ आवे। रूमाल से मुँह साफ करता हुआ आवे। और कंघी से बाल सँवारता हुआ आवे।

हमर भउजी कइसे आवे?

अर्थात् हमारी भाभी किस प्रकार आवे?

पालकी मे बइस हँसइत आवे
सेनुर सँ माँग भरइत आवे
अयना सँ मुँह देखइत आवे

पालकी मे बैठ कर हँसती हुई आवे। सिर में सिन्दूर बिन्दी लगाती हुई आवे। और दर्पण से चेहरा देखती हुई आवे।

चुगला भँडुआ कइसे आवे ?

अर्थात् चुगला भँडुआ किस तरह आवे ?

गदहा पर बइस कनइत आवे
कोइला सँ दाँत रगइत आवे
कम्बल सँ मुँह पोंछइत आवे
छूरा सँ केश ओछइत आवे

गधा पर बैठ कर रोता हुआ आवे। कोयला से दाँतों को रँगता हुआ आवे। कम्बल से मुह पोछता हुआ आवे। और उस्तरे से केश मुँडवाता हुआ आवे।

चुगला वहू कइसे आवे ?

और चुगला की पत्नी किस तरह आवे ?

खटुली चटल भँडुहि कनइत आवे
कोइला सँ माँग भरइत आवे
खपडी सँ मुँह फोड़इत आवे

खटोली पर चढ़ कर रोती हुई आवे। कोयला से मुँह काला करती हुई आवे। और खपड़ी (भँडभूजे का वर्त्तन) से सिर फोड़ती हुई आवे।

[११]

माइ गगा रे जमुनवा के चिकनिओ माटी
माइ आनि देहु कओन भइया गगा पइसि माटी
माइ बनाए देहु कनिया भउजो सामा हे चकेवा
माइ खेले जयता कओन बहिनो चारो पहर राती
कथि केर दियरा कथिए मुत बाती
कथि केर तेलवा जरए सारि राती

माटी केर दियरा पटम्बर सुन बाती
नेहवा के तेलवा जरए सारि राती
खेले लगलन श्रश्रान बहिना चारो पहर राती
जरे लागल दिअरा झमके लागल बाती

गंगा और यमुना की मिट्टी चिकनी होती है। हे अमुक भाई, गंगा में पैठ कर मिट्टी ला दो न?

और हे सलोना भाभी, तुम मेरे लिए एक 'श्यामा-चकेवा' की मूर्ति बना दो। अमुक बहन आज रात के चारों पहर 'श्यामा चकेवा' के खेल खेलेगी।

किस वस्तु का चिराग है? और किस वस्तु की बत्ती? और उसमें किस वस्तु का तेल सारी रात जलेगा?

मिट्टी का चिराग है, और रेशम की बत्ती। और उसमें प्रेम का तेल सारी रात जलेगा।

इस प्रकार चिराग जला कर अमुक बहन रात के चारों पहर 'श्यामा-चकेवा' के खेल खेलने लगी। चिराग दुप-दुप कर जल उठा, और रेशम की वर्त्तिका झलमलाने लगी।

यह गीत उस समय गाया जाता है, जब बहन अपने भाई से 'श्यामा चकेवा' की मूर्ति बनाने के लिए चिकनी मिट्टी लाने का अनुरोध करती है।

[१२]

डाला ले बहार भेली बहिना सुमित्रा बहिनो
शरदेन्दु भइया लेल डाला छीन सुनु राम सजनी
अनुआ बइसल अहाँ भानु बरइता चाचा नरइता
अहँक पुता लेल डाला छीन सुनु राम सजनी
कथिए क तोहर डलवा गे बेटी दउरिश्रा गे बेटी
कथिए लगाओल चारू धार सुनु राम सजनी
काँच ही बाँस केर डलवा हो बाबा
चम्पा-चमेली चारों कान सुनु राम सजनी
दहु हे पुता बहिनिया कँ डलवा

सामा खेले जयति बड़ी दूर सुनु राम सजनी

हे सखी, सुमित्रा बहन सामा खेलने के लिए चँगेरी ले कर बाहर निकली। शरदेन्दु भाई ने उसकी चँगेरी छीन ली।

सुमित्रा बहन ने अपने पिता से जा कर फरियाद की—

हे शामियाने में बैठे हुए मेरे पूज्य पिता और चाचा, आपके बेटे ने मेरी चँगेरी छीन ली है।

पिता ने पूछा—हे बेटी, किस वस्तु की तुम्हारी चँगेरी है। और उसके चारों किनारे किस वस्तु से मढ़े हैं?

बेटी ने कहा—हे पिता, काँच बाँस की मेरी चँगेरी है, और उसके चारों किनारे चम्पा चमेली से मढ़े हैं।

पिता ने अपने बेटे को बुला कर कहा—हे पुत्र, तुम अपनी बहन की चँगेरी लौटा दो। वह सामा खेलने बहुत दूर जायगी।

कभी कभी जब बहनें 'श्यामा चकेवा' के खेल खेलने के लिए वन बागों में निकलती हैं, तो अपने अल्पवयस्क भाइयों को भी साथ ले लेती हैं। खेल में प्रायः मतभेद हो जाया करते हैं, और भाई-बहन की पटरी नहीं बैठती। ऐसे मौकों पर यदि भाई तगड़ा पड़ा, तो वह अपनी बहन की चँगेरी छीन कर तोड़ फोड़ डालता है। अगर बहन तगड़ी पड़ी, तो वह अपने भाई की खूब मरम्मत करती है। खेद के साथ लिखना पड़ता है कि हमारे इस गीत की बहन कमजोर है। इसीलिए उसने अपने भाई को दण्ड दिलाने के लिए पिता से फरियाद की है।

[१३]

कओन भइआ के इहो घनि फुलवड़िया हे
कि कओन बहिनि लोढ़त चमेली फूल हे

यह घनी फुलवाड़ी किसकी है और यह कौन बहन चमेली का फूल लोढ़ रही है?

दूसरी बालिका जवाब देती है—

मोहन भइआ के इहो वाड़ी-फुलवाडी हे
कि चम्पा बहिनि तोड़त चमेली फूल हे

जट-जटिन

'जट जटिन' एक ग्रामीण पद्य बद्ध अभिनय है जिसमें 'जट-जटिन' प्रधान पात्र-पात्रिका हैं। आश्विन और कार्तिक के महीने में खिली हुई चाँदनी की रोशनी में मिथिला के अधिकांश गाँवों में यह अभिनय किया जाता है। इसमें केवल लड़कियाँ और युवती स्त्रियाँ भाग लेती हैं। हाँ, पुरुष पात्र 'जट' का अभिनय करने के लिए एक लड़का भी शरीक कर लिया जाता है। लड़के जट' का अभिनय करते हैं, और लड़कियाँ जटिन' बनती हैं। 'जट' कुमुदिनी के फूल का श्वेत हार और सिर में श्वेत मुकुट पहनकर सुसज्जित होता है। 'जटिन' भी फूल के गहने पहन कर अलंकृत होती है। दोनों पाँच पाँच या छै-छै हाथ के फासले पर आमने-सामने खड़े होते हैं। उनके अगल बगल (जट-जटिन दोनों पक्ष में) प्रायः एक एक दर्जन युवतियाँ पंक्ति बद्ध खड़ी होती हैं, और परस्पर प्रश्नोत्तर के रूप में गीत गाती हुई अभिनय करती हैं।

'जट जटिन' का प्लाट संक्षिप्त एकांकी नाटक का सा है। इसमें 'जट-जटिन' के वैवाहिक जीवन की गुत्थियों सुख-दुख की धूप छाँह, पुरुषों की पाशविक बलात्कारी प्रवृत्ति की बर्बरता, यौवन की विषम समस्याओं की अन्तर्ध्वनि आदि जीवन की अनेक अनुभूतियाँ स्वाभाविक ढंग से चित्रित हुई हैं। 'जट जटिन' के स्टेज डिरेक्शन्स संक्षिप्त हैं। भाषा चुलबुली और विनोदपूर्ण व्यंग्य लिये है। 'जट' जो खेल का प्रधान पात्र है—बलात्कारी प्राणी है। वह 'जटिन' के साथ प्रणय सूत्र में बँधन के पूर्व 'जटिन' के स्वाधीन व्यक्तित्व को कुचल देना चाहता है। दोनों में द्वन्द्व उठ खड़ा होता है। अन्त में 'जटिन जट' के हाथ की कठपुतली बन जाती है और उसके जीवन का स्वतंत्र प्रवाह रुक जाता है।

कुछ उदाहरण देखिये।

जइमे नवतइ कौनिक शिशवा
वइसे नचवे हे

नहिए नरचऊ ग जग्वा
नहिए नरचऊ रे
जइसे रहतइ पाग्नग्क पानी
नइमे रहवऊ रे

हे जटिन, विवाह होने पर तुमको झुक जाना पडेगा। नम्र बन जाना पड़ेगा। जिस तरह धान की बाल फलने पर झुक जाती हैं, ठीक उसी तरह तुम्हे भी झुक जाना पडेगा।

किन्तु, जटिन को जट की शर्त पसन्द नहीं। बचपन से ही पिता के यहाँ स्वतंत्र वायुमडल मे पलने के कारण वह काफी अल्हड और गर्वीली हो गई है। अभी उसके बचपन का भोलापन दूर नहीं हुआ। उसके दिमाग में अपनी सखी सहेलियों की अठखेलियाँ और धमाचौकड़ी घर किये हुई हें।। किसी के सामने झुक कर चलने का कभी उसे मौका ही नहीं मिला। वह कह रही है—

'रे जट मै अपने पिता की लाडली बेटी ऐंठ कर चलूँगी।'

जट कहता है—हे जटिन तुमको झुकना पडेगा। झुकना ही पडेगा। जिस तरह केले के घौद फलने पर झुक जाते हैं ठीक उसी तरह विवाह के बाद तुम्हें भी झुक जाना पडेगा।

जटिन कहती है—हे जट में कभी नहीं झुकूँगी कभी नहीं झुकूँगी। जिस तरह बाँस की कोंपल सीधी, ऊपर की ओर बढ़ती है, उसी तरह मैं भी सीधी निर्भीक हो कर चलूँगी।

जट कहता है—हे जटिन तुमको झुकना ही पडेगा। झुकना ही पडेगा। जिस तरह कौनी (एक प्रकार का नाज जो फलने पर झुक जाता है) के शीश झुक जाते हैं, ठीक उसी तरह तुम्हें भी झुक जाना पडेगा।

जटिन जवाब देती है—हे जट मै कभी नहीं झुकूँगी। जिस तरह पोखरे का पानी गम्भीर और स्थिर रहता है उसी प्रकार मै भी दृढ़ और गम्भीर रहूँगी।

यह सार्वभौमिक सत्य है कि मनुष्य परतंत्र रहना पसन्द नहीं करता। परतन्त्रता एक अभिशाप है जो जीवन में सँडाद पैदा करती है। अचेतन पशु पक्षी भी जो विवेकबुद्धि से रहित हैं जंजीर या किले की चहारदीवारी में बन्द रहना पसन्द नहीं करते। इस गीत की नायिका जटिन भी स्वाधीनता और समान अधिकार पाने की इच्छुक है जो स्वाभाविक है। लेकिन जट ने अपनी भावी पत्नी जटिन की बराबरी की शर्तों पर विवाह करने के प्रस्ताव का विरोध कर अपनी बलात्कारी प्रवृत्ति का परिचय दिया है। वास्तव में मनुष्य एक बहुपत्नीक बलात्कारी पशु है जो स्त्री से बलवान होने के कारण उस पर आधिपत्य रखता है। इङ्गलैण्ड के सुप्रसिद्ध तात्विक ज्ञान स्टुअर्ट मिल ने अपनी 'Subjection of women' नामक पुस्तक में लिखा है—

'मेरा विश्वास है कि स्त्रियों को आज़ाद करने में पुरुषों को इस बात का डर नहीं है कि स्त्रियाँ विवाह न करना चाहेगी लेकिन उनको ऐसी दहशत ज़रूर है कि वे बराबरी की शर्तों पर विवाह करने का हठ करेंगी।'

[२]

जट और जटिन दोनों दाम्पत्य सूत्र में बँध चुके हैं—एक दूसरे से हिलमिल गये हैं। जटिन गहने पहनने का आकांक्षिन है। वह अपनी यह माँग जट के सामने पेश करती है—

जटा रे जटिन के मँगवा मेल खाली
मगठीक्वा तुहुँ कब लयबह रे

जटिन हे सोनरा छुऊ तोहर इआर
मगटीक्वा त पेन्हाय देतउ हे

जटा र जटिन क हँस्वा मेल खाली
हडिअवा तुहुँ कब लयबह रे

जटिन हे बजजा छुऊ तोहर इआर
हडिअवा त पेन्हाय देतउ हे

जटा रे जटिनि क हथवा मेल खाली
चुड़िअवा तुहूँ कब लयबह रे

जाटन हे मनिहरवा छऊ तोहर इआर
चुड़िअवा त पेन्हाय देत हे

रे जट, तुम्हारी प्रियतमा जटिन का सिर खाली है। तुम माँगटीका कब लाओगे?

जट कहता है—हे जटिन, सोनार तुम्हारा दोस्त है ही। वह माँगटीका पहना देगा।

जटिन कहती है—हे जट, तुम्हारी प्यारी जटिन की कमर खाली है। चुँदरी कब लाओगे?

जट जवाब देता है—हे जटिन, बजाज तो तुम्हारा यार है ही वह तुम्हें चुँदरी पहना देगा।

जटिन कहती है—हे जट, तुम्हारी प्रियतमा जटिन के हाथ खाली हैं। चूड़ी कब लाओगे?

जट कहता है—हे जटिन, चुड़िहारा तो तुम्हारा दोस्त है ही, वह तुम्हें चूड़ी पहना देगा।

[३]

जटिन की फिजूलखर्ची के कारण जट दिवालिया हो गया। उसके सिर की टोपी, हाथी के हौदे और हाथ के रूमाल तक बिक गये। जीविका का कोई अन्य उपाय न देख कर जट नौकरी करने के लिए परदेश जाने को आमादा है—

हाथी पर के हौदा बचबओलह,हे जटिन
बेचबओलह हे जटिन
अब जटा जाइछइ बिदेश

आहु सँ उत्तम बनवा देव हे जटा
बनवा देव हे जटा
अब जटा नइ जाउ विदेश

हाथ क रूमलवा बेचवओलह है जटिन
बेचवओलह है जटिन
अब जटा जाइछइ विदेश

ओहु सँ उत्तम हम सी देव है जटा
हम सी देव है जटा
अब जटा नइ जाउ विदेश

सिर क पगरिया उचवओलह है जटिन
बेचवओलह है जटिन
अब जटा जाइछइ विदेश

ओहु सँ उत्तम खरीद देव है जटा
खरीद देव ह जटा
अब जटा नइ जाउ विदेश

जट कहता है--हे जटिन तुमने (फिजूलखर्ची के कारण) हाथी की पीठ का हौदा बिकवा दिया। हाथी की पीठ का हौदा बिकवा दिया। अब तुम्हारा प्रियतम जट परदेश जा रहा है।

जटिन जिसकी यदि कोई कामना है तो प्रेम की और जो अपने प्रियतम का वियोग सहन करने में असमर्थ है, जवाब देती है--हे प्रियतम, मैं उससे भी उम्दा हौदा बनवा दूँगी। उससे भी उम्दा बनवा दूँगी। तुम मत जाओ।

जट कहता है--हे लाडली जटिन तुमने मेरे हाथ का रूमाल बिकवा दिया। हाथ का रूमाल भी बिकवा दिया। अब तुम्हारा प्राण परदेश जा रहा है।

जटिन जवाब देती है--प्रियतम मैं उससे भी उम्दा रूमाल सी दूँगी। उससे भी उम्दा सी दूँगी। तुम परदेश मत जाओ।

जट कहता है--हे जटिन, तुमने मेरे सिर की पगड़ी बिकवा दी। तुमने मेरे सिर की पगड़ी बिकवा दी। तुम्हारा प्रियतम जट परदेश जा रहा है।

जटिन जवाब देती है हे जट मैं उससे भी उत्तम पगड़ी खरीद दूँगी। उससे भी उत्तम खरीद दूँगी। तुम परदेश मत जाओ।

तू कहाँ कहाँ जाइछ बिरवा बाँधक
हम मोरंग जाइछो बिरवा बाँधक
तू कियँ कियँ लयब बिरवा बाँधक
हम टिकुली लायब बिरवा बाँधक
केकरा पेन्हयबह बिरवा बाँधक
हम जटिन के पेन्हायब बिरवा बाँधक
हम तोड़क नेरायब बिरवा बाँधक
हम फेन क गढ़ायब बिरवा बाँधक

जटिन—हे जट, तुम बिस्तर बाँध कर कहाँ जा रहे हो ?
जट—हे जटिन, मैं मोरंग देश जा रहा हूँ ।
जटिन—हे जट, तुम मेरे लिए उपहार में कौन सी वस्तु लाओगे ?
जट—हे जटिन, मैं तुम्हारे लिए माँगटीका उपहार में लाऊँगा ।
जटिन—हे जट, तुम माँगटीका किसे पहनाओगे ?
जट—हे जटिन, मैं तुम्हें ही माँगटीका पहनाऊँगा ।
जटिन—हे जट, मैं माँगटीका पहन कर तोड़ दूँगी ।
जट—हे जटिन, मैं फिर माँगटीका गढ़ा दूँगा ।

जट-जटिन का दाम्पत्य जीवन प्रथम दर्शन-जनित अनुराग से रँगा हुआ है। स्त्रियाँ गहने पहनने की कितनी इच्छुक होती हैं, यह गीत इस बात का प्रमाण है। जटिन माँगटीका पहन कर तोड़ देने के मिस जट के प्रेम की परीक्षा लेना चाहती है। जट प्रेम की शिला पर आरूढ़ है। जट जटिन का दाम्पत्य प्रेम गुण श्रवण जनित रागांकुरित अवस्था से विकसित हुआ है। वह फिर माँगटीका गढ़ा देने का वचन दे कर अपनी व्यवहार शील-सम्पन्नता का परिचय देता है। जटिन की हठवादिता और निष्ठुरता को देख कर हमारी सहानुभूति की मन्दाकिनी जटिन के प्रति उतनी नहीं उमड़ती, जितनी जट की सहनशीलता से उद्वेलित भावसंकुलता की ओर।

जाय देहि हे जटिन देश रे विदेश
तोरा लागि लयबौं जटिन हँसुलि सनेश
हँसुलि तरे जटा तरवक धूर
ठाढि रहि रे कुलबोरना नयनक हुजूर
जाय देहि हे जटिन देश रे विदेश
तोरा लागि लयबौं जटिन
सिकरी सनेश
सिकरी त रे जटा तरवक धूर
ठाढि रहि रे कुलबोरना नयन क हुजूर
जाय देहि हे जटिन देश रे विदेश
तोरा लागि लयबौं जटिन चड़िया सनेश
चड़िया त रे जटा तरवक धूर
ठाढि रहि रे कुलबोरना नयन क हुजूर

जट—हे जटिन, तुम मुझे परदेश जाने दो। मैं तुम्हारे लिए हँसली उपहार में लाऊँगा।

जटिन—कुल को पतन की खन्दक मे गिरानेवाले रे जट, हँसली तो मेरे तलवे की धूल है। तुम मेरे हुक्म की तावेदारी में खड़े रहो।

जट—हे जटिन, तुम मुझे परदेश जाने की इजाजत दो। मैं तुम्हारे लिए सिकड़ी उपहार में लाऊँगा।

जटिन—रे कुल को पतन की खन्दक में गिरानेवाले जट, सिकड़ी तो मेरे तलवे की धूल है। तुम मेरे हुक्म की तावेदारी में खड़े रहो।

जट—हे जटिन, तुम मुझे परदेश जाने की इजाजत दो। मैं तुम्हारे लिए चूँदरी उपहार में लाऊँगा।

जटिन—रे कुल कलंक जट, चूँदरी तो मेरे तलवे की धूल है। तुम मेरे हुक्म की तावेदारी में सदा खड़े रहो।

दूर दूर रे जटा
दूर रहिह रे जटा
सड़ल चाउर रे जटा
राख छाउर रे जटा
बइगन भाँटी रे जटा
जुलुफ सँवारइत चल अइह रे जटा

दूर दूर हे जटिन
दूर रहिह हे जटिन
सड़ल भात हे जटिन
सड़ल तीमन हे जटिन
सड़ल भाँटी हे जटिन
खोपवा गुहइत चल अइह हे जटिन

दूर दूर रे जटा
दूर रहिह रे जटा
सड़ल चाउर रे जटा
राख छाउर रे जटा
बइगन भाँटा रे जटा
धातिया पेन्हइत चल अइह रे जटा

दूर दूर हे जटिन
दूर रहिह हे जटिन
सड़ल भात हे जटिन
सड़ल तीमन हे जटिन
सड़ल भाँटो हे जटिन
टीकवा पेन्हइत चल अइह हे जटिन

जटिन—रे जट, तुम दूर हो जाओ। तुम मुझसे दूर ही रहा।

रे जट, तुम सड़ा हुआ चावल हो। बदबूदार बैंगन हो, और भस्म हुआ क्षार हो।

रे जट, तुम जुल्फ सँवारते हुए परदेश से लौटना।

जट—हे जटिन, तुम दूर हो जाओ। मुझसे दूर ही रहो।

हे जटिन, तुम सड़ा हुआ भात हो। सड़ी तरकारी, और सड़ा बैंगन हो। तुम वेणी सँवारते हुए मेरे पास आना।

जटिन—रे जट, तुम दूर हो जाओ। मुझसे दूर रहो।

रे जट, तुम सड़ा हुआ चावल हो। बदबूदार बैंगन हो, और भस्म हुआ क्षार हो।

यही अर्थ तीसरे और चौथे पदों का भी है। अन्तर इतना ही है कि उनमें जुल्फ और केश के स्थान पर धोती और माँगटीका के नाम जोड़ दिये गये हैं।

[७]

बाँकीपुर के टिकवा रे जटा
केऊ केऊ निरेखे रे जटा
केऊ केऊ परेखे रे जटा
बाँकीपुर के टिकवा हे जटिन
हमहिं निरेखब हे जटिन
हमहिं पहिनायब हे जटिन
कटक क उ जे कंगन रे जटा
केऊ केऊ निरेखे रे जटा
केऊ - केऊ परेखे रे जटा
कटक क उ जे कंगन हे जटिन
हमहिं निरेखब हे जटिन
हमहिं पहिनायब हे जटिन
सुरत क उ जे मोती रे जटा
केऊ - केऊ निरेखे रे जटा
केऊ - केऊ परेखे रे जटा

सूरत क उजे मोती हे जटिन
हमहिं निरेखब हे जटिन
हमहिं पहिनाएब हे जटिन

जटिन—रे जट, बाँकीपुर का माँगटीका कोई बड़भागी ही देख पाता है। कोई पारखी ही उसकी परख करता है।

जट—हे जटिन, बाँकीपुर का माँगटीका मैं ही देखूँगा, और मैं ही तुम्हें पहनाऊँगा।

जटिन—रे जट, कटक का कंकण कोई बड़भागी ही देख पाता है, और कोई पारखी ही उसकी परख करता है।

जट—हे जटिन, कटक का कंकण मैं ही देखूँगा, और मैं ही तुझे पहनाऊँगा।

जटिन—रे जट, सूरत का मोती कोई बड़भागी ही देख पाता है, और कोई पारखी ही उसकी परख करता है।

जट—हे जटिन, सूरत का मोती मैं ही देखूँगा, और मैं ही तुझे पहनाऊँगा।

[८]

अते त कमएल जटा की भेलउ ना
सुनु मोरा जटा
जटिनि के मँगवा उदास लागय ना
अते त कमइलि जटिन अहाँ लागि ना
सुनु मोर जटिन
टिकवा गटाक सन्दुक म धएलि ना
अते त कमएल जटा की भेलउ ना
सुनु मोरा जटा
जटिनि के कनमा उदास लागय ना
अते त कमइलि जटिन अहाँ लागि ना
सुन मोर जटिन
तरकि गटा क सन्दुक मे धएलि ना

अर्थ स्पष्ट है। इस गीत में जटिन ने गहने नहीं लाने के कारण जट को उलाहना दिया है।

[६]

चल चल रे जटा यमुने के किनार
पान खइह रे जटा पिक नेरइह रे जटा
चल-चल हे जटिन यमुने के किनार
टिकवा बिकाइछइ लहरदार हे जटिन
त पेन्हे के पडी
टिकवा के नगवा भेल भारी रे जटा
त फेरे के पडी
चल चल रे जटा यमुने के किनार
पान खइहइ रे जटा पिक नेरइह रे जटा
चल चल हे जटिन यमुने के किनार
कठा बिकाइछइ लहरदार हे जटिन
त पेन्हे के पडी
कठा के घुन्डी बड़ भारी रे जटा
त फेरे के पडी

जटिन—रे जट, यमुना के तट पर चलो। वहाँ पान खाना, और पीक फेंक देना।

जट—हे जटिन, यमुना के तट पर चलो। वहाँ बहुत कीमती मँगटीका बिकता है। तुम्हें पहनना होगा।

जटिन—रे जट, मँगटीका में जड़ा हुआ नग भद्दा लगता है। उसे बदलना होगा।

जटिन—रे जट, यमुना के तट पर चलो। वहाँ पान खाना और पीक फेंक देना।

जट—हे जटिन, यमुना के तट पर चलो। वहाँ बहुत सुन्दर कंठा बिकता है। तुम्हें पहनना होगा।

जटिन—रे जट, कठा की गूँज भद्दी लगती है। वह बदलनी पड़ेगी।

इसी प्रकार किस्म किस्म के गहने के नाम जोड कर अगले पद गाये जाते हैं।

[१०]

निम्नलिखित गीत उस समय गाया जाता है जब जटिन जट से रूठ कर अपने नैहर जाती है, और रास्ते में नदी पार करने के लिए केवट से अनुरोध करती है—

भइया मलहवा रे नइया लगा दे झिनमापुर के घाट
बहिनि बटोहिनि गे खोज ले ग दोसर घटवार
हम देवउ अनि दुअन्नि हम देवउ इनाम
भइया मलहवा रे नइया लगा दे झिनमापुर के घाट
नइ हम लेवइ अनि दुअन्नी नइ हम लेवइ इनाम
बहिन बटोहिनि हे खोज लेहि दोसर घटवार
हम देवऊ चानी सोना हम देवऊ इनाम
भइया मलहवा रे नइया लगा दे झिनमापुर के घाट
नइ हम लेवइ चानी-सोना नइ हम लेवइ इनाम
बहिनि बटोहिनि गे खोज ले ग दोसर घटवार

जटिन—रे मल्लाह, नाव झिनमापुर के घाट पार लगा दो।

मल्लाह—हे बहन बटोहिन, दूसरा घटवार ढूँढ लो। मैं नहीं पार लगाऊँगा।

जटिन—रे मल्लाह भाई, मैं तुम्हें दुअन्नी पुरस्कार दूँगी। तुम झिनमापुर के पार नाव लगा दो।

मल्लाह—हे बहन बटोहिन, न मैं दुअन्नी लूँगा, और न किसी प्रकार का कोई पुरस्कार। तुम दूसरा घटवार ढूँढ लो।

जटिन—रे मल्लाह भाई, मैं तुम्हें चाँदी-सोना, और अन्य विविध प्रकार के पुरस्कार दूँगी। तुम झिनमापुर के घाट नाव पार लगा दो।

मल्लाह—मैं चाँदी सोना नहीं लूँगा, और न किसी तरह का कोई अन्य पुरस्कार। हे बहन बटोहिन, तुम दूसरा घटवार ढूँढ लो।

बारहमासा

पावस ऋतु में जो आनन्दोन्मत्त संगीत गाये जाते हैं वे 'बारहमासा', 'छौमासा' और 'चौमासा' के नाम से प्रसिद्ध हैं। 'बारहमासा' में वर्ष-भर का, 'छौमासा' में छै महीने का प्राकृतिक सौन्दर्य वर्णन और 'चौमासा' में आषाढ़, सावन, भादों और आश्विन महीने का प्रकृत चित्रण होता है। सावन और भादों महीने में जब आसमान धुएँ के बादलों से आच्छन्न हो जाता है, पेड़ों के झुरमुट में कोयल कूकने लगती है, मेढक टुनकियाँ भरता है, और रास्ता कीचड़ से लथपथ हो कर मुलायम गलीचा बन जाता है तब खेतों में धान रोपते हुए मजदूर और घर में हिंडोला डाले हुई ग्रामीण देवियाँ अपनी रसीली तानों से सुधा टपका देती हैं।

'बारहमासा' मैथिल लोक-साहित्य की अनुभूत्यात्मक अभिव्यञ्जना है। इसके नैसर्गिक सौन्दर्य के सामने कौदह की हल्के पैर, गहरे नीलरंग की कजरारी-सी आँखें, कढ़े हुए बाल, मुलायम पतले हाथ, उन्नत कद और गदराईदार वक्षप्रदेश वाली नायिका भी फीकी पड़ जाती है। 'बारहमासा' की भाव धारा पुरानी शराब-सी चोखी, और चित्र देवदारु सा स्वच्छ है। पद में शृंगार की रोचक सरसता है। जिस तरह ग्रामीण वधू की खञ्जनाभ आँखों में काले रंग का काजल उसके लावण्य में निखार ला देता है, उसी तरह वसन्त की पुष्प श्री सी रँगीन ग्रामीण कलाकारों की सूक्ष्म वृत्तियों ने 'बारहमासा' के शुभ्र मरकत पर पन्ने का पानी चढ़ा दिया है। अथवा कहिये कि जैसे नीलम पर धूप पड़ने से उसकी लावण्य मुद्रा खिल जाती है, वैसे ही ग्रामीण कवियों की पारदर्शी आँखों का चित्र पड़ने से 'बारहमासा' के अवगुंठनमय सौन्दर्य में कला की कमनीयता आ गई है।

उदाहरणस्वरूप इस शैली के कुछ नमूने देखिये—

[१]

चैत हे सखि चरन चचल
चित्त नहि थिर चयन रे
मधुप गुजय बरिम मधु चुवि
रम भरित दुहुँ नयन रे

वइशाग्य जॅ नवरग शोभा
श्रास दरशन देल रे
कुसुम सह सह महक मह मह
श्याम कत चल गेल र

जेठ वारिद नवल नवि नवि
मदन रस बरसाय र
रइनि वरि अन्हिआरि हे सखि
प्रान तनहि सुखाय र

अपाड घेरल पुहुमि भरि सगि
ताप तपल बुझाय रे
लता तरु सॅ देखु लपटलि
पिउ कतए विरमाय रे

सावन अहिनिशि बारस बादरि
सून पहुँ बिनु खाट रे
कत दिना गत भेल हे सखि
सून पहुँ कर खाट रे

भादव गत सन भेल हे सखि
बेहनि चमकत राति रे
बितल चारिहुँ मास बरसा
देल पिउ जिव साति रे

आसिन घर घर बाज मंगल
सकल ललना गाय रे
पुरल हर के आस कहु किय
करम हमर लिखाय रे

कातिक सखि सब मुदित खेलय
श्याम चकवा खेल रे
हम कतय वास सेज पर मलि
नयन नोरस भेल रे

मास अगहन सबहिं ललना
फसिल देखल जाग रे
ललित भेल पथार पहुँ सँग
विरह मन मोर आग रे

पूस लघु दिन राति बढ़ि थिक
छोहन सुन्दर जोग रे
सुतलि रहितहुँ कत सुख सखि
करम नहि मोर भोग रे

माघ लहु लहु शीत लागय
कुसुम फूटल झारि रे
हमर का विदेश बस सखि
गेल से पतारि रे

मास फागुन 'कुमर' मन रिउ
कतए बरनौ हे श्याम रे
छेहन साउल रग राखल
ब्यर्थ बारह मास रे

हे सखी, चैत का महीना आ गया। मेरे चरण चंचल हो उठे, और मन *व्याकुल हो गया। भौंरे गुञ्जार करने लगे। मधु चू चू कर बरसने लगा, और* मेरी दोनों आँखें आनन्द से नाच उठीं।

वैशाख मे नारंगी की शोभा में निखार आ गया, और आम में बौर लग गये। फूलों की सुगन्ध से दिशा विदिशाएँ गमक उठीं। हाय! इस शुभ अवसर पर मेरे श्याम कहाँ हैं?

जेठ में बादल उमड घुमड कर काम रस की वर्षा करने लगे। हे सखी, आज की रात्रि बड़ी ही भयावनी लगती है। मेरे प्राण सूख रहे हैं।

हे सखी, आषाढ़ में जल से ज़मीन का चप्पा चप्पा भींग गया, और तपी हुई पृथिवी की ज्वाला शान्त हो गई। देखो, लता वृक्षों से लिपट कर उनका आलिंगन कर रही है। हाय! इस समय मेरे प्रियतम कहाँ रम रहे हैं?

सावन में वर्षा की झडी लग गई। मेरी सेज प्रियतम के बिना सूनी है। हे सखी, प्रियतम के बिना सेज सूनी हुए जाने कितने दिन बीत गये।

हे सखी, भादों दबे पाँव खिसक चला। भादों की चाँदनी रात कितनी सुहावनी लगती है। धीरे धीरे वर्षा के चारों महीने बीत गये, और मेरे निर्मोही प्रियतम ने मुझे गैरहाज़िरी की सख़्त सज़ा दे दी।

आश्विन में घर घर मंगलमय बाजे बजने लगे। सखियाँ मंगल गान गाने लगीं। लोगों की आशा पूरी हुई। लेकिन हे सखी, विधाता ने मेरा भाग्य कैसा *खोटा बनाया!*

कार्तिक मे सखियाँ प्रसन्न हो कर 'श्यामा चकेवा' के खेल खेल रही हैं। हे सखी, हम इस सूनी सेज का अब किस प्रकार उपभोग करें। हाय! मेरी आँखें प्रियतम की इन्तज़ारी में दुख रही हैं।

अगहन मे सखियों ने भाग्य का सौफल्य प्राप्त किया। वे अपने अपने प्रियतम के साथ अनेक प्रकार के मनोरंजन करती हैं जिससे मेरे मन में विरह की आग प्रज्वलित हो उठती है।

पूस में रात बड़ी और दिन छोटे हो गये हैं। *अहा! यह कैसा सुन्दर* अवसर है। हे सखी, यदि मैं इस समय प्रियतम के साथ सेज पर विहार करती,

तो क्या ही अच्छा होता, लेकिन मेरे भाग्य में भोग नहीं लिखा है।

माघ से शीत की भयंकरता कुछ कम हुई, और वन उपवनों में फूल खिलने लगे। हे सखी, मेरे प्रियतम प्रवासी हैं। हाय! मुझे धकमा दे कर वह स्वयं दूर जा बिराजे हैं।

कवि 'कुँवर' कहते हैं—हे प्रियतम, इस फागुन महीने में तुम कहाँ रम रहे हो? क्रीड़ा के लिये मैंने सुगन्धित रस रख छोड़ा है। लेकिन तुम्हारी गैरहाजिरी में ये बारह महीने व्यर्थ ही साबित हुए।

[२]

प्रथम मास असाढ़ हे सखि
साजि चलल जलधार हे
एहि प्रान कारन मेत बाँधल
सखा उदेश आगाम है

सावन रे सखि शब्द सुहावन
रिमझिम बरसत बूँद हे
सब के बलमुआ रामा घर घर आयल
हमरा बलमु परदेश हे

भादो हे सखि रइनि भयावन
दूजे अँधेरी रात हे
ठनका जे ठनके रामा
बिजुली जे चमके
से देखि जिव डराय ह

आसिन हे सखि आस लगाओल
आस न पुरल हमार हे
आसो जे पुर रामा कुबरी सउतिनिया
जिन कन्त राखल लोभाय हे

कातिक हे सखि पुण्य महीना
सखि कर गंगा स्नान हे
सब कोइ पहिने पाट पटम्बर
हम धनि गुदरी पुरान हे

अगहन हे सखि हरित सुहावन
चारु दिशि उपजल धान हे
चकवा चकेइया रामा केलि करइअ
सेइ देखि ।नया हुलसाय हे

पूस हे सखि ओस पाड गेल
भींजि गेल लामि लामि केश हे
जाड़ा छेदे तन मुद सन छुन छुन
थर थर काँपए करेज हे

माघ हे सखि ऋतु बसन्त आयल
गेलो जाड़ा के दिन हे
पिया जँ रहितन कोरवा लगइतन
(तब) कटइत जाड़ा हमार हे

फागुन हे सखि सब रंग बनायल
खेलत पिया के संग हे
ताहि देखि मोर जियरा जँ तरसय
काहि पर डारु हम रंग हे

चैत हे सखि सब बन फूले
फुलवा जँ फुलए गुलाब हे
सखि सब फूले रामा पियाक संग मे
हमरो फूल मलीन हे

बइसाख हे सखि पिया नहिं आवल
विरह कुहकन मोर गात हे
दिन जे कटए रामा रोवत रोवत
कुहुकत बितए सारी रात हे

जेठ हे सखि आय बलमुआ
पूरल मन केर आश हे
सारि दिना सखि मंगल गावति
रएन गँवाय पिया साथ हे

हे सखी, आषाढ़ का प्रथम महीना है। जल धाराएँ सज धज कर फूट रही हैं। राम ने सीता की इसी अटूट प्रीति के कारण समुद्र में पुल बाँधा था।

हे सखी, सुहावना सावन आ गया। रिमझिम बूँदें बरस रही हैं। सब के प्रियतम अपने घर लौट आए, लेकिन मेरे प्रियतम अभी प्रवास में ही हैं।

हे सखी, भादों की भयावनी काली रात आ गई। आकाश में बादल कड़क रहे हैं, और रह रहकर बिजली चमक उठती है, जिसे देख देख कर मेरा हृदय दहल रहा है।

हे सखी, आश्विन आया। लेकिन मेरी आशा पूरी नहीं हुई। आशा तो मेरी सौतिन कुबड़ी की पूरी हुई जिसने मेरे प्राणनाथ को भुला रखा है।

हे सखी, कार्तिक का शुभ महीना है। चलें हम गंगा स्नान करें। लोगों ने नये-नये रेशमी परिधान पहने हैं। लेकिन मैं पुरानी—फटी गुदड़ी पहन कर ही दिन काटती हूँ।

हे सखी, अगहन की सुहावनी हरियाली निखर पड़ी। खेतों में चारों ओर हरे हरे धान लहरा रहे हैं। चकवी चकवा प्रेम विभोर हो कर लालसा के मद में मस्त हो रहे हैं, जिसे देख-देख कर मेरा हृदय बाँसों उछल रहा है।

हे सखी, पूस आ गया। ओस की नन्हीं नन्हीं बूँदें टपक रही हैं। मेरे लम्बे लम्बे केश भीग गये हैं। जाड़ा सूई की तरह प्रतिक्षण मेरा शरीर छेद रहा है, और मेरा कलेजा थर थर काँपता है।

हे सखी, माघ आया। बसन्त ऋतु भी आई। जाड़ा दबे पाँव धीरे धीरे खिसक चला। यदि आज मेरे प्रियतम होते तो मुझको अपने कलेजे से लगा लेते, और यह जाड़ा आसानी से कट जाता।

हे सखी, फागुन में हमारी हमजोलियाँ रंग घोल कर अपने अपने प्रियतम के साथ रंगरेलियाँ करती हैं, जिसे देख देख कर मेरा मन तरस रहा है। बताओ, मैं किससे रंग खेलूँ?

हे सखी, चैत में वन उपवन खिल उठे। नसों में बिजली-सी दौड़ गई। देखो, गुलाब के फूल भी चिटख रहे हैं। हमारी हमजोली सखियाँ भी अपने अपने प्रियतम के साथ प्रसन्न हो रही हैं। लेकिन मेरा फूल—शरीर गमगीन है।

और वैशाख भी आ गया। लेकिन मेरे निर्मोही प्रियतम नहीं आये। विरह की आग से मेरा शरीर भस्मीभूत हो रहा है। हे सखी, दिन तो रोते रोते कटते हैं, और रात सिसकते सिसकते बीतती है।

हे सखी, जेठ आया। मेरे प्रियतम भी आये, और मेरी आशा भी पूरी हुई। हमारी हमजोली सखियाँ दिन भर मगल गाती हैं। और, मैंने भी आज रात अपने प्रियतम के साथ बिताई है।

[३]

आली रे घनश्याम बिना व्याकुल राधा
जेठ मास नहि भावए चीर
मजु मनोहर यमुना तीर
ओढ़ै मृगछाला योगिनि वेष
पुष्प हार छवि अनि सुख देत
व्याकुल राधा

अषाढ़ मास घन गरजत घोर
रटत पपिहरा नाचत मोर
आयल हे सखि मास अषाढ़

हरि बिनु माहि चन्द्रिका भार
हार मोतियन के

रतन सिंहासन रेशम के डोर
मोतियन झालर लगए चहुँ ओर
गरत हिंडोरा

सावन मास गहि-गहि धरय
सखियन के बाँह
झोंक बढ़ावे

भादव भेजिया भयावन रात
बिजली चमक देखि काँपत गात
भरि-भरि नदिया अथाह बह नीर
बिकल बिरह जियरा नहि धीर
धर हम कइमे

आसिन शरद जनावत जोर
उगए चाँदनी दुख बरजोर
बोलत हे सखी कीर चकोर
कहवाँ गेल मोरा नन्दकिशोर
आली रे घनश्याम बिना

कातक कामिनि करत सिंगार
नव सुन गजमुक्ता के हार
माधव न आय पठवै सन्देश
छत्र मुकुट छवि अति सुख देत
आली रे घनश्याम बिना

अगहन अय माहावन लाग
श्रीकृष्ण बिना राधाजी बेहाल

अब के मुरली बजइहें रंग
ता संग रन बन घूमब संग
आली रे घनश्याम बिना

पूस ऊधो जी आए पास
पत्रिका दिन्ह गोपि राधिका हाथ
बाँचत पाँती झहरत नीर
व्याप हलाहल तेजत शरीर
जिअब हम कइसे

माघ ऊधव नहिं आए कंत
केहि संग खेलब रीत बसंत
अब बनि बइसब साधु गंभीर
योग लिखि पठवै
आली रे घनश्याम बिना

फागुन सखि सब घोरत रंग
चोआ चन्दन चढ़ाएब अंग
हम अबला सोचत ब्रजनारी
कुबरी सउतिनिया संग खेलत मुरारी
त्यागि मोहि कहमे

चैत ऊधव बन फुलय गुलाब
चुन-चुन फूल गुथाएब माल
जाय मधुपुर छाड़ब लाज
सोच सुदिन दिन मंगल आज
आली रे घनश्याम बिना

बइसाख ऊधव नहि आय श्याम
कइसे काटब हम कठम घाम

सूरश्याम आकर यदुराय
राधा मिलयि अग लगाय
आली रे घनश्याम बिना

हे सखी, घनश्याम के बिना राधा विरहाकुल हो रही है।

जेठ का महीना है। राधा को सुंदरी नहीं भाती। वह मनोरम यमुना के तट पर मृगछाला धारण किये योगिनी बनी हुई है। फूल की माला उसके लावण्य को चार चाँद लगाती है।

हे सखी, घनश्याम श्रीकृष्ण के बिना राधा वियोगाकुल हो रही है।

आषाढ़ का महीना है। आसमान में बादल उमड़ रहे हैं। पपीहा 'पिउ पिउ' की रट लगा रहा है, और मोर नाच रहे हैं। हे सखी, इस आषाढ़ महीने में श्रीकृष्ण के बिना चन्द्रिका और मोती के हार भार-से प्रतीत होते हैं। रत्न के सिंहासन में रेशम की डोर लगी है, और उसके चारों ओर मोतियों की झालर है। फिर भी यह हिंडोला कटक-सा खल रहा है।

सावन का महीना है। सखियाँ के साजन उनकी बाँह पकड़ कर उन्हें अपनी गोद में लिए रहे हैं। हे सखी, घनश्याम श्रीकृष्ण के बिना राधा वियोगाकुल हो रही है।

भादों की भयावनी रात है। सेज सूनी है। बिजली कड़क रही है। बादल का उमड़ना देख कर शरीर काँप उठता है। नदी और तालाब लबालब भर कर उमड़ रहे हैं। और मेरा वियोगाकुल मन भी अधीर हो उठा है।

आश्विन में शरद् ऋतु की रुत चढ़ गई। आसमान में चाँदनी छिटक गई, जिसे देख कर मेरा मन दुःख रहा है। हे सखी, सुग्गे और चकोर बोलने लगे। हाय! मेरे नन्दकिशोर कहाँ चले गये?

कार्तिक में सुन्दरी नव यूथ में गजमुक्ता के हार पिरो कर शृंगार कर रही है। हाय! माधव नहीं आये। मैं उन्हें आने के लिये सन्देश लिख भेजूँगी। न मालूम क्यों उनके मुख-मुकुट की शोभा स्मरण कर हृदय में शूल हो रहा है।

अगहन का महीना सुहावना लगता है। राधा श्रीकृष्ण के बिना विरहाकुल है। इस बार उनकी मुरली रंग लायेगी, और मैं उनके साथ अरण्य और वन-

उपवन की सैर करूँगी।

पूस में ऊधो आये। उन्होंने गोपागना राधा को कृष्ण का पत्र दिया। राधिका कृष्ण का पत्र बाँचती है, और उसकी आँखों से झर झर अश्रुपात हो रहे हैं। राधिका कहती है—हाय! मैं श्रीकृष्ण के बिना कैसे जिऊँगी? गरल पान कर शरीर त्याग दूँगी।

हे ऊधो, माघ आया। लेकिन मेरे प्रियतम नहीं आये। हाय! मैं किसके साथ बसन्त की बहार लूटूँ? अब मैं योगिनी बन कर अलख जगाऊँगी और श्रीकृष्ण को योग का सन्देश लिख भेजूँगी।

फागुन में हमारी सखियाँ रंग क्रीडा में रत हो गई। हे सखी, मैं भी अपने अंग पर चन्दन और इत्र लगाऊँगी। व्रजागनाएँ चिन्ता मग्न हो रही हैं कि हम अबला हैं और श्रीकृष्ण हमारी सौतिन कुब्जा के साथ रगरेलियाँ करते हैं।

हे ऊधो, चैत का महीना आ गया। बन में गुलाब के फूल चिटख गये। मैं फूल चुन चुन कर हार गूथूँगी, और आज ही शुभ मुहूर्त विचार कर और शर्म को तिलांजलि दे कर मधुपुर जाऊँगी।

हे ऊधो, वैशाख आया। लेकिन मेरे सलोने श्याम नहीं आये। हाय! मैं चिलचिलाती हुई धूप की दोपहरी कैसे बिताऊँ? सूरदास कहते हैं—हे राधे, श्रीकृष्ण अवश्य आयेंगे और तुमसे प्रेमपूर्वक मिलेंगे।

[४]

उमडि बादल घिरे चहुँ दिशि
गरजि गराज सुनावहीं
श्याम ऐसो निठुर बालम
माह असाढ ने आवहीं

सावन रिमझिम मेघ बरिसय
जोर सँ झरि लावहीं
चहुँ ओर चकित मोर बोले
दादुर शब्द सुनावहीं

भादव गरजत झहरि बरिसत
जोरि दमकत दामिनी
श्याम बिनु सून सेजिया
रात डरपत कामिनी

आसिन दे सखि आस लगायल
श्याम अजहुँ न आवहीं
नाल भरि भरि नीर हे सखि
चिंदित बधा हो गई

कातिक कामिनि रटत पिउ
निशि अकेली हम खड़ी
हम जिउन कौन हेत ऊधा
जग बस ज्वानी गई

अगहन हे सखि श्याम नहि
किछु कहि गेल
श्याम जी रे कठिन हृदय
मोहि दुख दय गेल

पूस ऊधो जाहु मधुपुर
कौन जोगिनि बस किय
जाय हिलमिल बैर किन्हा
हमरो के दुख दय गेल

माघ जाड़ा शीत पड़ता
काहु के न पठाय
छाड़हु सखि सब लाज तन के
चलहु मधुपुर धाय

फागुन हे सखि होरि आयल
दिल में उमडत आगिया
नाक बेसर सुरग चाली
तिलक थिक भल भाँतिया

चैत हे सखि पुहुप फूलय
से देखि भौंरा लुभाइय
रूप सुन्दर सिमहु सेवल
चलत मन पछताइय

बइसाख ऊधो जाहु मधुपुर
हरि सें निपति जनाइय
हम त अबला दुखित हरि बिनु
हार के आनि मिलाइय

जेठ ऊधो भेंट होय गेल
पुरल मन के आशिया
सूर कहे भजु कृष्ण राधा
पुरल बारहमासिया

आसमान में बादल उमड़ कर घिर आये—गरज गरज कर घुमड़ पड़े। हाय ! मेरे श्याम ऐसे निठुर हैं कि इस आषाढ़ महीने में भी नहीं आये।

सावन का महीना है। मेघ रिमझिम रिमझिम बरस रहा है। बूँदियों की झड़ी लग गई है। मयूर और दादुर चारों ओर चकित हो कर शब्द-संधान कर रहे हैं।

भादों का महीना है। बादल गरज-गरज कर हुंकार रहे । दामिनी ज़ोरों में दमक रही है। हाय ! श्याम के बिना मेरी सेज सूनी है, और भादों की इस भयावनी रात में मैं अबला दहल रही हूँ।

हे सखी, आश्विन में मैंने आशा लगा रखी थी। लेकिन मेरे श्याम आज भी नहीं आये। हे सखी, नदी और तालाब जल से लबालब भर गये। यह

रूप वर्षा की प्रसिद्धि की सूचना देते हैं।

कार्तिक का महीना है। और मैं अबला 'पिउ पिउ' की टेर लगा रही हूँ। सूनी रात है, और मैं अकेली खड़ी हूँ। हे ऊधो, अब मैं किसलिए जिऊँ! साधना में ही मेरे यौवन का अन्त हो गया।

हे सखी, अगहन का महीना है। मेरे सलोने श्याम बिना मुझसे कुछ कहे ही चले गये। हाय! श्याम का हृदय कितना कठोर है। वह मुझ अबला को दु:ख दे कर चले गये।

हे ऊधो, पूस का महीना है। आप मधुपुर जायँ, और देखें कि मेरे श्याम को किस योगिनी ने लुभा रक्खा है। वे स्वयं तो वहाँ जा कर प्रेम क्रीड़ा करने लगे, और मुझे दु:ख समुद्र में डुबो गये।

माघ का महीना है। जाड़े के आधिक्य के कारण ज़ोरों की ठंड पड़ रही है। हे सखी, अब वहाँ किसी दूसरे को न भेजो। चलो हम स्वयं शर्म को उतार तोड़ कर मधुपुर में जा खिलें।

हे सखी, फागुन का महीना है। चारों ओर होली की बहार है। हृदय में विरहाग्नि प्रज्वलित हो रही है। सखियाँ नाक में बेसर, और शरीर में सुन्दर कंचुकी तथा माथे पर ईंगुर बिन्दी धारण कर आनन्द-मग्न हो रही हैं।

हे सखी, चैत का महीना है। फूल खिल गये हैं, जिसे देख देख कर मधु-लोलुप मधुप गुंजार करते हैं। और निर्गन्ध, पर चित्ताकर्षक शाल्मलि सुमन की सुन्दरता पर ये भौंरे लट्टू हैं, और वहाँ से हटने में पश्चात्ताप करते हैं।

हे ऊधो, बैसाख का महीना है। आप मधुपुर जायँ, और श्रीकृष्ण से हमारी विपत्ति-वार्ता सुनावें। हम अबला श्रीकृष्ण के बिना गमगीन हो रही हैं। अतः आप श्रीकृष्ण को ला कर हमें मिला दें।

हे ऊधो, जेठ में श्रीकृष्ण मिल गये, और मन की मुराद पूरी हुई। कवि 'सूरदास' कहते हैं कि इस प्रकार बारह महीने पूरे हुए।

(५)

चलन रगरू सुहागिन

मला मोहर मास

मोतियन माँग भरो गे
आयल सुन्न मास अषाढ़
सावन अति दुख भारी
दुख सहलो ने जाय
एहो दुख सह रानी कुबरो
भादव रात अँधरिया
मेघ बरिसन लागु
आसिन आस लगाओल
आसो न पुरल हमार
एहो आस पुर रानी कुबरो
जिन कत राखन लुभाय
कार्तिक निज पूर्णिमा
चलु सखि गंगा स्नान
गंगा नहाइत लट धूरमय
राधा मन पछताय
अगहन अग्र महीना
लयलन अम्रक चीर
चीर खोलि धयलो मन्दिर घर
मनमा मोर भेल उदास
पूसहिं फूँह पडिय गेल
भिजि गेल अम्रक चीर
जे लयलन विदेशी बालम
जिओ कत लाख बरीस
माघहिं निज पूर्णिमा
करितो व्रत त्योहार
हार सिंगार सब करितो
करितौं व्रत त्योहार

फागुन फगुआ जँ खेलितौं
रहितौं रँगरेजवा क पास
इक गुलाल रंग खेलितौं
घोरितौं बटाभरि अबीर
चैतहि बेला फुलिय गेल
फुलि गेल सब रंग फूल
फूल देखि भौंरा लोभाय गेल
गमकय हमर शरीर
बइसाखहि कँसवा कटइतौं
छनइतौं नवनगी बँगला
आहि रे बँगलवा पइसि सुतितौं
करितौं भोग विलास
जेठहि देह हाइय गेल
पुरि गेल बारहो जँ मास
'सुरहिदास' बलिहारी
लेखा लेहु न बिचार

हे सुहागिन, चन्दन घिसो। गले में मणि का हार पहन लो, और मोतियों से माँग सजाओ। अषाढ़ का सुखमय महीना आ गया। सावन में दुःख का आधिक्य है। यह दुःख सहा नहीं जाता। यह दुःख का भार रानी कुब्जा ही सहे।

भादों की अँधेरी रात्रि है। झमाझम मेघ बरस रहे हैं।

आश्विन में मैंने आशा लगा रक्खी थी, लेकिन वह पूरी न हुई। आशा तो रानी कुब्जा को पूरी हुई, जिसने मेरे प्रियतम को लुभा रक्खा है।

आज कार्तिक की पूर्णिमा है। हे सखी चलो गङ्गा स्नान कर आवें। गङ्गा स्नान करते समय राधा के घर रेशम-से बाल भाग रहे हैं और वह मन ही मन पछता रही है।

अगहन का सर्व श्रेष्ठ महीना है। प्रियतम ने मेरे लिए एक बढ़िया साड़ी ला दी। मैंने वह चीर खोल कर मन्दिर में रख दी, और मेरा मन उदास हो गया।

पूस में श्रोस की बूँदें गिरीं। मेरी वह सुन्दर चीर भींग गई। इस चीर को मेरे प्रवासी प्रियतम लाये थे। हे सज्जन, तुम लाख वर्ष जीओ।

माघ की पूर्णमासी है। काश मैं भी अपनी हमजोलियों की तरह व्रत त्योहार करती। और अपने प्रियतम के पास रह कर फागुन में फाग की बहार लूटती। कटोरा भर अबीर घोल कर तथा इत्र और गुलाब से रँग खेलती।

चैत में बेले के फूल खिल गये और अन्य सभी प्रकार के रंग बिरंगे फूल देख कर भौंरे लोट पोट हो रहे हैं, और मेरा शरीर भी सुगन्धि से महक रहा है।

मैं वैशाख में बाँस कटवा कर नौरंगी बंगला छवाऊँगी। और उसी बँगला में रह कर प्रियतम के साथ क्रीड़ा करूँगी।

जेठ का महीना अत्यन्त हेय है। लो, ये बारह महीने पूरे हुए। कवि 'सूरदास' कहते हैं कि मैं तुम्हारी बलैया लूँ।

पद के अन्त में 'सूरदास' का नाम आया है। लेकिन यह साहित्य समार के चिर परिचित 'सूरदास' नहीं हैं।

[६]

चौमासा छन्दपरक

गितल वसन्त सखि कत गिनु
लेल ग्रीष्म प्रवेश
आवन अवधि व्यतित भेल
अब मोहि लागु अन्देश
लागु डर जिय दमकि दामिनि
बरिसु जलधर नीर यो
बिजुलि चमकत हृदय हहरत
बहुत कठिन समार यो
कारि रैनि भयाओन पहुँ बिनु
शून्य सेज न भाव या
जेठ जीवन कूट पहुँ बिनु
पलटि गृहि नहिं आव यो

जीवन धन जन यौवन
तन मन सब हरि लेल
भूषण वसन शयन सुख
सब उनसर लय गेल
कन्हि सुख स्वारथ सभै
पहुँ दीन्ह दुख बन भार यौ
अर्धोल कामिनि कारि यामिनि
यौवन जीवक जजाल यौ
रैनि चैन ने होय पहुँ बिनु
बोलत दादुर मोर यौ
बोलय पिहुआ सिनुहि पहुँ सौं
पहुँ अषाढ़ ने आव यौ

बारि वयस पहुँ तेजि गेल
वृद्ध वयस नहिं आव
परदेश परबस भेल पहुँ
सुधि बुधि सकल भुलाय
आरि घर कौं करत बालम
बारि वयस बिताब कै
पर नारि वश भेल परदेश
हमर सुधि बिसराय कै
आब जौं पहुँ पलटि आओत
जीवन मोहिं नहि पाब यौ
बिरह व्याधि उपाधि मनसिज
सावन सुख निरास यौ

कतेक सहब दुख पिया बिनु
अब दुख सहलो ने जाय

काहि रूदय के वुभत
के पहुँ देत बजाय
पापी प्रान न जाय पहुँ बिनु
नयन झहरत नीर यो
मासु मासा रहल तन मे
रूधिर ने रहल शरीर यो
नासा धीर समीर निकसत
भवन भादव प्रास यो
मनमोहन नहिं मिलत बालम
फेरि न जीवन क श्रास यो

अर्थ स्पष्ट है।

[७]

चैत हे सखी कुहुकि कोकिल
हृदय काम जगाय यो
कठिन श्याम कठोर मानस
ऋतु वसन्त विदेश यो

बइशाख हे सखी देखि उपवन
ललित कुसुम विकास यो
देखि निज कुच कुसुम मउलल
रहत धीर न थीर यो

जेठ कर सखि लेत चन्दन
पकज लेप शरीर यो
बिनु नाथ चन्दन शीतलादिक
धधाक जारत देह यो

अषाढ हे सखी भहरि झमकत
नीर बिजली जोर यो

देखि कोमल देह थर-थर
नयन धारा-नीर यो

श्रावण श्यामल मेघ बरिसत
घुमड़ घोर घमोर यो
सुमरि पावन उमड़ि आवत
प्राणपति नहिं साथ यो

भादव जलधर ठमकि ठमकत
रैनिशल ज्योति अचेत यो
राहि कहु अब श्याम बिनु सखि
जात जीवन मोर यो

आश आसिन अन्त कै सखि
भेल कन्त दुरन्त यो
शरद चन्द्रक चाँदनी सखि
जीवित चंचल मोर यो

देखि कार्तिक नारि इव सखि
बान सर रतिनाथ यो
करत आकुल जीव छन छन
कठिन कन्त हो कन गयो

लगि जात बान समान अगहन
कमल सम कुच मोर यो
गहि नाथ हाथ मरोरि कै सखि
देखि सेजि न मोर यो

पूस ओस घेघोरा सखि छव
रहवि शासन कोर यो

हम अकेली सून गृहि बिच
कौन विधि काटब रात यो

माघ कर्म क बात हे सखि
जुलुम करि गेल कन्त यो
अग अग तन ज्वाल उठत
हृदय मे अति पीर यो

फागुन हे सखि आस पूरल
करब आज विहार यो
पिउ सग उडत रग अबीर यो

हे सखी, चैत का महीना है। कोयल अपनी काकली से हृदय में प्रेम भावना का सचार करती है। हाय! निर्मम श्याम का हृदय कितना कठोर है कि वसन्त ऋतु में वह प्रवासी जीवन बिता रहे हैं।

हे सखी, बैशाख का महीना है। देखा, वन उपवनों में ललित कुसुम चिटख गये। लेकिन अपने मन कुसुम को म्लान देख कर चित्त का धैर्य जा रहा है।

जेठ में सखियाँ अपने कर कमलों से चन्दन ले कर शरीर में लेप रही हैं। किन्तु, हाय! प्रियतम के बिना चन्दन की शीतलता भी मेरे शरीर को भस्मीभूत करती है।

हे सखी, आषाढ़ में वर्षा की झड़ी लग गई, और बिजली जोरों से कड़क उठी, जिसे देख कर मेरा शरीर थर थर काँपता है, और आँखों से अविरल अश्रु धारा प्रवाहित हो रही है।

सावन आया। मेघ उमड़ घुमड़ कर बरसने लगे, और वायु की गति तीव्र हो गई। हाय! यह स्मरण होते ही कि 'प्राणनाथ साथ में नहीं हैं, मेरे जीवन कड़क उठते हैं।'

भादों में बादल कड़क कड़क कर कोलाहल करते हैं, जिसे सुन कर मैं बेसुध हो रही हूँ। हे सखी, यह किससे कहूँ कि श्याम के बिना अब मेरे जीवन का ही अंत हो रहा है।

हे सखी, आश्विन की आशा पर पानी फेर कर मेरे प्रियतम दूर देश में जा विराजे। हाय ! शरद चन्द्र की चाँदनी देख कर मेरा यौवन चंचल हो रहा है।

हे सखी, कार्तिक में एक निस्सहाया अबला को देख कर रतिनाथ शर-सधान करते है जिससे मेरे प्राण प्रतिक्षण अधीर हो रहे हैं। हाय ! मेरे कठोर प्रियतम मुझे छोड़ कर परदेश चल गये।

हे सखी, जिस प्रकार अगहन में धान के शीश फल कर झुक जाते है, ठीक उसी तरह मेरे कमल के समान प्रफुल्ल दोनों दुर्बल कुच झुक गये हैं। हे सखी, प्रियतम अनुपस्थित है यह सोच कर मैं हाथ मसोस कर रह जाती हूँ, और मन सती देख कर मेरा धैर्य जाता रहता है।

हे सखी, पूस की त्रास से बेहाल होकर सभी स्त्रियाँ अपने प्रियतम की गोद में सुख के खर्राटे ले रही है। लेकिन मैं एकाकिनी इस शून्य भवन में किस प्रकार रात बिताऊँ ?

हे सखी, माघ में मैं अपने हालात क्या कहूँ ? मेरे प्रियतम अन्धेर की आँधी उठा कर गायब हो गये। मेरे अंग प्रत्यंग से विरह की ज्वाला उठ रही है जिससे हृदय में पीड़ा होती है।

हे सखी, फागुन में मेरी मुराद पूरी हुई। आज मैं अपने प्रियतम के साथ अबीर और गुलाल से रंग क्रीड़ा करूँगी।

[८]

चौमासा छन्दपरक

नवल मन-नर विमल तरुअर
सेन भाव पसार ए
सूर भानुक ताप लाघव
रहलि कहाँ उजार ए
दहन अपदव जोग है सखि
वह वनय रह फन्न ए
वारि वयस विनाय बाला
कन्त चपल दुरन्त ए

...तरह के रंग में रँग गये, और संसार

आरे अगहन शीत पडल किछु आध
हम सखि पड़लहुँ विरह अगाध

सगर जगरस वरिस है सखि
सुरस बारिस भेल ए
आज बसि पिक कुज म सुन
राग पचम देल ए
सगरि रानि वितय जागय
हमहि अवला नारि ए
झटित आयत लिखत पाँती
गेल कहि परतारि ए

पूसहि आयल जारक मास
सग सग शयन करत छल आस

शीत अविरल भरल नभ सँ
तनक ताप बढाय ए
नवल पात रसाल पाओल
हमर कमल मुरझाय ए
पीत पटतर सग शयनक
भाग नहि विह देल ए
जाउ कहु गए चलह पामर
रमनि झामर भेल ए

माघक शीत लगय बर जोर
लेत कखन पिउ जामिनि कोर

मास फागुन रँगल तरु सब
जगत रग पसार ए
अविर अओर गुलाब कुकुम

मरल जगत पथार ए
पहुँच घग खेलाय सखि सब
निहत हमरहुँ श्वास ए
'कुमर' बरसक सारि मे इहो
पाब चारिहु मास ए
अनुरति ऐकल कुसुमक पाउ
समय आयल फागुन मास

नये नये कोमल किसलय के निकल आने से वृक्षों की सुन्दरता निखर पड़ी। खेतों में धान का लावण्य फूट पड़ा। जलते हुए प्रचण्ड सूर्य के प्रखर प्रकाश में भी कुछ शीतलता आ गई, और अँधेरी रात्रि का अँधेरापन शुक्ल आभा में सन गया। हे सखी, इस अपूर्व अवसर पर कहो मेरे प्रियतम कहाँ विराज रहे हैं ? बालिका ने किशोरावस्था बिता कर युवावस्था में पदार्पण किया, और उसके प्रियतम दूर देश में छाये हुए हैं। अगहन में धीरे धीरे जाड़ा की मात्रा बढ़ने लगी। और हे सखी, लो मैं विरह की विषम घाटी से हो कर गुजर रही हूँ।

हे सखी, सारे संसार में रस की धारा फूट बही है, और आज कोयल कुञ्ज में पंचम तान से अलाप रही है। मैं अबला सारी रात जग कर बिताती हूँ; क्योंकि मेरे प्राणनाथ यह आश्वासन दे कर चले गये कि वहाँ से शीघ्र वापिस आऊँगा, और पत्र द्वारा कुशल क्षेम लिखता रहूँगा। पूस आया, और जाड़े का मौसम भी आ गया। आशा थी कि अपने प्रियतम के साथ शयन करूँगी, लेकिन वह पूरी न हुई।

शरीर की विरह अग्नि को प्रज्वलित करती हुई आसमान से अनवरत रूप से ओस की बूँदें झरने लगीं। आम के पेड़ नये-नये पत्तों से लद गये। लेकिन मेरा मुख कमल म्लान हो गया। हाय ! पीताम्बर के नीचे सुखपूर्वक खाटि लेने का सौभाग्य विधाता ने मुझे नहीं दिया। हे सखी, तुम जाओ, और मेरे निर्मोही प्रियतम से जाकर कहो कि तुम्हारी प्रियतमा तुम्हारे वियोग में विद्ध हो रही है। माघ की ठंड बड़ी भीषण होती है। न मालूम मेरे प्रियतम कब मुझे अपनी गोद में लेंगे ?

फागुन का महीना आया। पेड़ पौधे अनुराग के रंग में रँग गये, और संसार भी राग रंजित हो गया। सर्वत्र अबीर, गुलाल और कुंकुम की ढेर लग गई। हमारी हमजोलियाँ अपने प्रियतम के साथ रंग क्रीड़ा करती हैं। लेकिन मेरी मनोकामना पूरी न हुई। 'कुमर' कवि कहते हैं कि यह वर्ष चौपड़ का खेल है, और ये चारों महीने उस खेल के चारों पासे हैं। कामदेव ने कुसुम के पासे फेंके और यह फागुन का रसमय महीना आ गया।

यह चौमासा है। इसमें अगहन, पौष, माघ और फागुन महीने के ऋतु-सौन्दर्य का चित्रण है।

[६]

आय अषाढ़ घटा घन घोर
चहुँ दिश झींगुर मेढक शोर
पिया परदेशी तनय घर मोर
बिनु पिया कड़कत ञावन मार
निञव हम उथसे
मोर कन दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे

सावन सुन्दरि सजत सिंगार
श्याम बिना सब शोक अपार
बादल बरिसे नाचे वन मोर
पिउ पिउ रटत पपिहा चहुँ ओर
पिआ नहि आवे
मार कन दुरन्तर छाय प्रीति शर लाग

भादव भवन भयावन भेल
भाग्यहीन मोहि विधि क्य देल
भजन अय करिहों धरि जोगिन भेस
छाय रहा पिया नित परदेश
मिलयो नहि हमसे

मोर कत दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे

आसिन आस नाथ दय गेल
आस नास पिया बिनु भेल
मुनु सर सखिया जिअब केहि भाँति
काठन कठोर लगे दिन राति
नाद नहिं अँखिया
मोर कत दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे

कातिक काम करत उपदेश
आगम शीतक बढ़त क्लेश
मदन सर मारे लगे उर तार
कन्त बिना मोहि हरत के पीर
चीर नहिं भावे
मोर कत दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे

अगहन आय हेमन्तक रीत
मूट प्राणपति तेजल प्रीत
रीत नहिं जाने रस क कछु बात
प्राण पिया बिनु किछु न सोहात
रात कइसे कटिहौं
मोर कत दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे

पूस पड़त पल पल मे तुषार
प्राणनाथ बिनु जाड़ अपार
पार कइसे जइहौं रहिबो केहि सग
पीतम बैल सरहिं सुख भग
जग मद साम्हो
मोर कन्त दुरन्तर छाय प्रीति ॰

माघ मदन तन बढ़त तरंग
सखि सब पिय सग रहत अनन्द
रगमहल मे नित करत बहार
तरुनि तेजल मोहि तरुन गमार
बिचार नहि उनके
मार कन्त दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे

फागुन हे सखि फाग बहार
रग अगार अतर के बिमार
सब दिन मे मुरय मूल के दिन
त्याग पिया मे गल परवान
खीन भय रहिहा
मोर कन्त दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे

चैत चमेली गुलाब नेवार
मजरल आम फूलल कचनार
हार गूथि लइहों देवा शकर शीश
पूजन के फल मिलत अशीस
शीश पै रखिहा
मार कन्त दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे

माधव मोहन छाय दुरन्त
माधव के सग जीवक अन्त
कन्त बिनु पाय करि कोटि उपाय
मदन दहन तन गेल समाय
काय जरि जैहों
मोर कन्त दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे

पहुँच अमावस जेठ क मास

जीवननाथ रहुच गेल पास
राउ ऊन काहा दुख मन निवास
यवन नमथि यह बारहमास
श्याम मर पूरे
मर कन्त दुरन्तर हार प्रीति शर लागे

आषाढ़ आया। आसमान में घनघोर घटा घिर आई। चारों ओर झींगुर और मेंढक कोलाहल करने लगे। मेरे प्रवासी प्रियतम ने मेरा परित्याग कर दिया। बिना प्रियतम के मेरा हृदय धड़क रहा है। मैं प्राणरक्षा कैसे करूँ !

मेरे प्रियतम दूर देश में छाये हुये हैं और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

सावन का महीना है। सुन्दरियाँ श्रृंगार करती हैं। श्याम के बिना शोक के बादल उमड़ रहे हैं। मेघ बरसते हैं। वन में मोर नाचते हैं। चारों ओर पपीहा 'पिऊ पिऊ' की रट लगा रहा है। फिर भी मेरे प्रियतम नहीं आये।

हाय ! मेरे प्रियतम दूर देश में छाये हैं, और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

भादों में भवन की भयानकता बढ़ गई। विधाता ने मुझे भाग्यहीन बना दिया। मैं अब योगिन का वेश धारण कर भजन करूँगी। हे मेरे प्रियतम, यदि तुम्हारी यही मर्ज़ी है, तो तुम अब परदेश में ही रमो, और मुझसे नहीं मिलो।

मेरे प्रियतम दूर देश मे छाये हैं, और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

आश्विन का महीना है। प्रियतम मुझे धोखा दे कर चले गये, और मेरी मुराद उनके बिना पूरी न हुई। हे सखी, सुनो अब मेरे जीवन की रक्षा कैसे होगी ! दिन-रात पहाड़-से लग रहे हैं, और आँखों मे नींद नहीं आती।

मेरे प्रियतम दूर देश में छाये हैं, और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

कार्तिक में कामदेव प्रेम का उपदेश देते हैं। जाड़े के आगमन से क्लेश की मात्रा बढ़ जाती है। कामदेव तीखे तीरों की बौछार लगाते हैं, जो सीधे मर्मस्थल

का बधन है। हाय ! प्रियतम के बिना मेरी वेदना का अन्त कौन करेगा ? हे सखी, अब तो चीर भी नहीं भाती।

मेरे प्रियतम दूर देश में छाये हैं, और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

अगहन आया। हेमन्त ऋतु भी आई। हाय ! मेरे बज्रदिल प्रियतम ने नेह का बन्धन तोड़ लिया। वह रस की रीति कुछ नहीं जानते। उनके बिना अब कुछ भी नहीं भाता। हाय ! मैं रात कैसे काटूँ ?

मेरे प्रियतम दूर देश में छाये हैं, और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

पौष आया। तुषार की वर्षा होने लगी। प्रियतम के बिना जाड़ा असह्य हो गया। मैं दिन कैसे काटूँ—किसके संग रहूँ ? मेरे प्रियतम ने मेरे सारे सुखों का मूलोच्छेद कर दिया। उफ ! मेरे यौवन के उफान ने कठिन संग्राम छेड़ दिया है।

मेरे प्रियतम दूर देश में छाये हैं, और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

माघ आया। शरीर में मदन तरंगित हो उठा। हमारी सखियाँ अपने प्रियतम के साथ सुखपूर्वक दिन बिताती हैं, और रंगमहल में क्रीडा करती है। मेरे नव वयस्क प्रियतम ने मुझ नवयुवती का परित्याग कर अपनी जड़ता का परिचय दिया है। उन्हें कुछ भी ज्ञान नहीं है।

हाय ! मेरे प्रियतम दूर देश में छाये हैं, और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

हे सखी, फागुन का महीना है। अबीर, गुलाल और इत्र की धूल उड़ रही है। यह दिन सभी दिनों की अपेक्षा सुखमय है। लेकिन मेरे साजन मेरा विस्मरण कर न मालूम कहाँ छा रहे हैं ? हाय ! अब मैं खिन्न हो कर दिन बिताऊँगी।

मेरे प्रियतम दूर देश में छाये है, और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

चैत में चमेली, गुलाब और नेवारी की बहार है। आम में बौर लग गये

है, और कचनार के फूल खिल गये है। मैं हार गूँथ कर भगवान शंकर को चढ़ाऊँगी, जिसके पुरस्कार में मुझे आशीर्वचन मिलेंगे। और मैं उन्हें सादर स्वीकार करूँगी।

मेरे प्रियतम दूर देश में छाये हैं, और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

वैशाख आया। मेरे प्रियतम दूर देश में जा विराजे। हाय! प्रियतम के साथ ही मेरे जीवन का अंत हो जायगा। मैंने लाखों तदबीर की, लेकिन मेरे प्रियतम नहीं आये। काम की आग में इस शरीर ने प्रवेश किया, और अब यह शरीर जल कर ही रहेगा।

हाय! मेरे प्रियतम दूर देश में छाये हैं, और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

जेठ की अमावस्या तिथि आ गई। मेरे प्राणनाथ भी आ गये। मैं अब रास क्रीड़ा करूँगी, और आज मेरे दुख का अन्त होगा। 'चयन' कवि कहते हैं कि यह बारहमासा पूरा हुआ, और वियोगिन नायिका की आशा भी पूरी हुई।

[१०]

आयल मास अषाढ़ रे
वर्षा ऋतु आयल[1]
शीत्र कर व्रजनागरि रे
प्रीतम नहिं आयल

साबन शरद सोहावन रे
बरस दिन राती
झिंगुर देत झनकार[2] रे
हलै मोर छाती

[1] आ गया। [2] झनकार।

भादव भवन भयावन रे
विरहिनि दुख भारी
दामिनि दमनि[1] डरावय रे
बिनु पुरुषक नारी

आसिन आस लगाओल रे
आसो ने पुरल हमार
कोन बैरिन बैरि सधाओल[2] रे
रोक्ल[3] नन्दकुमार

कातिक कन्त दुरन्त[4] गेल रे
लिखियो ने भेजल पाँती
घर घर दीप जरैत छल रे
जत छलिह आहवाती

अगहन अग्र सोहावन रे
सखि सब गौनमा के जाय
हमहुँ अभागलि नारी रे
बैसलहुँ[5] देहरि झमाय[6]

पूसक जाड़ टाढ़ि भेल रे
मोरा बुते[7] सहलो ने जाय
झाड़ि झाड़ि पलगा ओछवितहुँ रे
जौं गृह रहितथि मुरारी

माघाह चढल बसत रे
यदुपति नहि आय

[1]दमक कर। [2]बदला लिया। [3]रोक रखा। [4]दूर, प्रवास में। [5]बैठ गई। [6]गमगीन होकर। [7]मुझसे।

एहन जोवन नहि जीयब[1] रे
मरब जहर विष खाय

फागुन फगुआ खेलैतहुँ रे
सखि सब रंग बनाय
अबिर गुलालक मार रे
सखि सब धूम मचाय

चैतहि चित मोरा चंचल रे
फूल फूल कचनारी
पिया मोर गेल परदेशवा रे
जे छल देशक ओरी

बैशाखक धूप मतौना[2] रे
मोरा झुते सहलो ने जाय
ऊँच कय बंगला छरवितहुँ[3] रे
हेरितहु बलमुजिक नारी

जेठ मास बरसाइत रे
सखि सब बर[4] तर जाय
'सुकविदास' गुन गाओल रे
पूरल बारहमास

[११]

सात सखी अगला रामा सात सखी पिछुली
चलि भेल यमुना क तीर हे
एक सखी के रामा गागर फूटल
सब सखी मन पछुताय हे

[1] जिऊँगी। [2] मूर्च्छित कर देने वाली। [3] छवाती। [4] बर-वृक्ष।

एक सारा अंगाली रामा एक सखि पिछिली
सुनु सखि वचनि हमार हे
हमरा वचनिया सखि सामु आगु काहब
तहिह मे बचनि बुझाय हे
छोटकि ननदिया रामा बड तिलबिगनी
दउडल जाय अम्मा जा क पास ह
नाहरा जे पुतहु अम्मा बिरहा के मातल
गागर अलधुन गेंराय हे
अइया खइअऊ भइया खइअऊ छोटकि पुतहउआ
गागर बदल गागर देहु हे
तब हय गहि तोहर बास हे
खोंइछा मे बन्हलि डेउआ कऊडिया
चाल मेल कुम्हरा दुआर हे
कहाँ गेले किए मेले कुम्हरा रे भइया
गागर के बदल गागर देहु हे
तब हयत गहि हमर बास हे
छोटाक ननदिया रामा बड तिलबिगनी
दउडल जाय भइया जा के पास हे
तोहर तिरइया रामा बिरहा के मातल
गागर अलधुनह गेंराय हे
हमरा जोतइत बहिनि फरवा हेराय गेल
बयला ने टुट जाय नाथ हे
घाडवा जे चले बहिन टपरप उठय
हथिया चलय मधु चाल हे
पनिया भरइत बहिनि गागर फुटल
तिरिया क कौन अपराध हे
बएला के ताजन रहिनि बसे दहिनमे

घोडवा क ताजन लगाम है
हथिया क ताजन बहिनि दुइ चार अँकुसा
तिरया ताजन आधि रात है

सात सखी आगे और सात सखी पीछे—इस तरह पंक्ति बद्ध होकर यमुना-किनारे चलीं। उनमें एक सखी की गागर फूट गई, जिससे सब सखियाँ पश्चात्ताप करने लगीं। गागर फूट जाने के कारण वह अत्यन्त खिन्न हुई। उसने अपनी हमजोलियों से कहा—

हे पंक्ति की अगली और पिछली सखी, सुनो हमारा वचन हमारी सास से समझा कर कहना। हे सखी, मेरी छोटी ननद ज़हर की बुझी है। वह मेरी चुगली खाने माँ जी के पास दौड़ी जाती है।

ननद ने अपनी माँ से शिकायत की—

हे माँ, तुम्हारी पतोहू विरह से मतवाली है। उसने गागरी फोड़ दी है।

यह सुनते ही उसकी सास आगबबूला हो गई। उसने अपनी पतोहू से कहा—मैं तेरी माँ और भाई को मारूँ। मुझे मेरी गागर के बदले नई गागर ला दे। तभी तुम्हारा इस घर में वास होगा।

सास की यह दुत्कार सुन कर उसकी पतोहू आँचल में कौड़ी बाँध कर कुम्हार के घर गागर ख़रीदने चली।

हे कुम्हार भाई, तुम कहाँ हो? कहाँ गये? फूटी गागरी के बदले एक नई गागर गढ़ दो। तभी हमारा अपने घर में वास होगा।

हे सखी, मेरी छोटी ननद विष की बुझी है। वह मेरी चुगली खाने अपने भाई जी के पास दौड़ी जाती है।

ननद ने अपने भाई से शिकायत की—

हे भाई, तुम्हारी स्त्री विरह से मतवाली है। उसने गागर फोड़ दी है।

उसके भाई ने कहा—

हे बहन, हल जोतने के समय फाल खो जाती है, और बैल की नाथ टूट जाती है और जब घोड़ा चलता है, तब उसके पैर से 'टप टप' आवाज़ होती है। हाथी की चाल धीमी होती है। इसलिए हे बहन, पानी भरने के समय

गागर फूट गई, तो इसमें पनिहारिन का क्या क़सूर ?

हे बहन, अगर बैल अपराध करे, तो उसकी सज़ा क्या है ? यही न कि उसको जुए में दायें से बायें और बायें से दायें जोत दिया जाय, और घोड़े को सज़ा लगाम है। हे बहन, हाथी की सज़ा उसकी गरदन में अंकुश चुभाना है, और स्त्री की सज़ा यह है कि उसकी आधी रात में ख़बर ली जाय।

[१२]

प्रथम मास असाढ़ हे सखि
राम अजहुँ न आवहीं
लखण के संग बिछुरल हे सखि
सिया अति दुख पावहीं

मातु कौशिला करत आरतो
भवन माहि न भावती
केकेया गुण गायर हे सखि
तिय अति समुझावहा

भादव हे सखि रइनि भयावन
लछुमन धनुष चढावहीं
दामिनि दमसे मेघ बरसे
राम दरश देखावहीं

आसिन मास सियाहरण हे सखि
राम अति दुख पावहीं
अंजनिसुत हनुमान हे सखि
प्रीत बहुत लगावहीं

कातिक के असनान हे सखि
तीर्थ व्रत न भावहीं

निकल देखि सुग्रीव हे सखि
प्रीति मे उर लावहीं

अगहन मे सिया गेल हे सखि
लंकपुर मे छावहीं
उतर निशाचर घोर हे सखि
बानर भालु डरावहीं

पूस मे सिया रहल हे सखि
कुम्भकरण जगावहीं
मनि शरासन लिन्ह रघुबर
बाण दूर भाग लावहीं

माघ मे मन थोर हे सखि
विषम बाण लागहीं
रामलखन दुर देश हे सखि
खबर किछु ने पावहीं

फागुन मे सखि खेलन होरी
ताल मृदंग बजावहीं
आजु अवधपुर सून हे सखि
राम बिनु नहि भावहीं

चैत मे सर नहइत हे सखि
ऊँ दनाफल पावहीं
राम लखन दुर देश हे सखि
खबर किछु ने अनावहीं

बइशाख मे हनुमान हे सखि
लंकगढ़ झहरावहीं

जारि लंका भस्म कैलन्हि
राज विभीषण पावहो

जेठ में मिला भेंट हे सखि
राम आन सुख पावही
'दास गोपाल' एहो बारहमासा
सुयश तहुपर गावहो

हे सखी, आषाढ़ का प्रथम महीना है। आज राम नहीं आये। लछमण के साथ राम न जाने क्यों अधीर हो रहे हैं, और सीता अत्यन्त ही गमगीन है।

माता कौशल्या आरती उतारती हैं, और कहती हैं कि मुझे सावन नहीं भाता। हे सखी, हृदय बार बार समझाता है कि कैकेयी के दुर्व्यवहार पर दृष्टिपात न कर उनके गुण ही गाऊँ।

हे सखी, भादों की रात्रि इतनी भयावनी है कि लगता है जैसे लछमण धनुष पर बाण चढ़ा रहे हों। बिजली चमकती है। मेघ बरसते हैं, और यह दृश्य राम को याद दिलाते हैं।

हे सखी, आश्विन में सीता का हरण हुआ, और राम के सिर पर दुःख का पहाड़ टूट पड़ा। राम की इस दुरवस्था में अञ्जनि-पुत्र हनुमान उनके साथ सहानुभूति दिखा रहे हैं।

हे सखी, कार्तिक का स्नान और यह तीर्थ मन नहीं भाता। हे सखी, राम को व्याकुल देख कर सुग्रीव उनसे मित्रता का सम्बन्ध स्थापित करते हैं।

हे सखी, अगहन में विपद्ग्रस्ता सीता लंका में दिन काट रही हैं। और निशाचरों के दल बादलों की तरह उमड़ कर बन्दर-भालुओं को भयभीत कर रहे हैं।

हे सखी, पौष में सीता प्रफुल्ल दीखती हैं, और रावण अपने भाई कुम्भकरण को युद्ध के लिए जगा रहा है। संग्राम छिड़ गया है, और रामचन्द्र धनुष बाण संधान कर बाण वर्षा करते हैं।

हे सखी, माघ में सभी जगह विषम जाड़ा का प्राबल्य है। हे सखी, राम-

लछमण दूर देश में विराज रहे हैं, और उनकी कोई खबर नहीं मिली।

हे सखी, फागुन में सब होली खेल रहे हैं, और झांझ मृदंग बजाते हैं। आज मेरी अयोध्या नगरी सूनी है, और राम के बिना उदासी छायी है।

हे सखी, चैत में सब सुखपूर्वक स्नान कर पुण्य फल लूटने लगे। राम, लछमण दूर देश में हैं। वहाँ की कोई खबर नहीं मिलती।

हे सखी, वैशाख में हनुमान लंका के दुर्ग को कम्पायमान कर रहे हैं। लंका का गढ़ जल कर छार हो गया, और रावण का भाई विभीषण गद्दीनशीन हुआ।

हे सखी जेठ में राम और सीता का मिलन हुआ। दोनों अत्यन्त प्रसन्न हैं। कवि 'गोपालदास' कहते हैं कि इस बारहमासे का कीर्तिगान तीनों लोक में व्याप्त हो।

[१३]

कइसेक रहनि गँवाऊ हे ऊधो
नहिं आयल घनश्याम हरी
आर अषाढ़ उमड़ि गेल बदरा
बरिसन बूँद सघन घहरी

साओन सखि सब टांगे हिंडोरा
झूलि झूलि रहय पिया संग में
हम धनि सोचत ठाढ़ि अटरिया
हमरो विरह तन दय कुबरी
दादुर मोर मदन सर जोरे
उठत विरह तन गात जरी

भादव ताल तरंग उमड़ि गेल
देखि देखि सखि मन सोच भरी
आनु सेआम सलोने ने अइहैन
खयबो जहर विष घोर मरी

आसिन आस रहे भरि पूरन
मोतिया मँगाय गूथब चोटी
गिरिजा के स्वामी आय मनमोहन
सखिया सहित मन मोद भरी

हे ऊधो, मैं रात कैसे काटूँ ? मेरे घनश्याम कृष्ण नहीं आये।

आषाढ़ आ गया। बादल उमड़ पड़े। बूँदें रिमझिम रिमझिम बरस रही हैं। हे ऊधो, मैं रात कैसे काटूँ ? मेरे घनश्याम कृष्ण नहीं आये।

सावन आ गया। सखियाँ हिंडोल डाल डाल कर अपने अपने प्रियतम के साथ झूला झूलती हैं। और हे प्रियतम, मैं अपनी अटारी पर खड़ी खड़ी चिन्ता मग्न हूँ। कुब्जा ने हमें विह्वल कर दिया है। दादुर और मोर मदन के तीखे तीर से बेध रहे हैं, और विरह की ज्वालाएँ शरीर को जला रही हैं। हे ऊधो, मैं रात कैसे काटूँ ? मेरे घनश्याम कृष्ण नहीं आये।

भादों भी आ गया। तालाब उमड़ बहे, जिसे देख देख कर सखियाँ चिन्तित हो रही हैं। यदि आज मेरे सलोने श्याम नहीं आये तो ज़हर पान कर शरीर त्याग दूँगी। हे ऊधो, मैं रात कैसे काटूँ ? मेरे घनश्याम कृष्ण नहीं आये।

आश्विन आ गया। मेरी आशा भी पूरी हो गई। मैं आज मोतिया से अपनी कवरी सँवारूँगी। मेरी सखी गिरिजा के प्रियतम मनमोहन भी आ गये। वह भी अपनी हमजोलियों के साथ उत्सव मना रही है।

[१४]

सखि रे रिति गेल तरुण तरंग
परदेशि मनमोहन रे

चैत मदन धनुआ शर लय
मोहि मारत है दिन रात
विरह के शान चढ़े तन में
छन जुग सम बिति जात
परदेशि मनमोहन रे

माधव मधुकर गेल मधुपुर
आनि दिन नहि देल
मन महँ साचि रहे मदमातो
मस्त बसन्त बिति गेल
परदेशि मनमोहन रे

जेठ जारत तन बिरह क ज्वाला
उगम लगाय दिन रैन
पल-पल पिय पिय रटत पपीहरा
पिय बिनु निन्द नहि चैन
परदेशि मनमोहन रे

आर असाढ न आयल पिय घर
दामिनि दमकत भार
चहु दिशि बादल उमड़ि घुमड़ि गे
झिंगुर मदक शोर
परदेशि मनमोहन रे

सावन सखि सब श्याम घटा लखि
साजन सकल सिंगार
सन सन पवन लागय सर उर मे
तान गेल नदाण गवार
परदेशि मनमोहन रे

भादव भवन भयावन भामिनि
भय गेल धरा क भीर
बिजुरि चमकत चहुँ ओर निरेख
कहु न मेंटय पहु बार
परदेशि मनमोहन रे

आसिन अब नहि अचरज
अगन अत करव हिय हाय
आस पुरे नहि नाह पुकारा
भसम करव तन जार
परदेसि मनमोहन रे

कातिक कन्त कठोर हृदय कत
कामिनि करत कलोल
कमल कली कुच कोमल कांपे
सुखत कपोल अमोल
परदेशि मनमोहन रे

शीत बढे सन शालि सम्हारत
विहरत सखि पिय सग
अजहुँ न आवन अगहन बीते
हम न जिअब बिनु कत
परदेशि मनमोहन रे

प्राणप्रिया परदेश तजे नहिं
पड़त तुषार अपार
पलग पकड़ि पछतावत बीते
पिय बिनु पुमक बहार
परदेशि मनमोहन रे

माघ मनोरथ पुरत भामिनि
मन जनि करिय उदास
मनमोहन मधुपुर तजि मिलिके
करत विपति केर नास
परदेशि मनमोहन रे

फागुन फाग खेलौं तुम्ह नारि
नागर पहुँचन पास
फागुन ग्राम प्रितम संग पूरे
पूर गए बारहमास
परदेशि मनम हन र

चैत का महीना है। मदन धनुष बाण सन्धान कर मुझे दिन रात अपना लक्ष्य बना रहा है। शरीर में विरहाग्नि धू धू कर धधक रही है, और एक एक क्षण युग के समान प्रतीत होता है। हाय ! मेरे मनमोहन प्रवासी हैं, और हे सखी, मेरी तरुणाई की तरंग शिथिल पड़ रही है।

वैशाख में मेरे प्रियतम मधुपुर चले गये। वहाँ से लौटने की तिथि भी निर्धारित नहीं की। मैं मद में बौरी प्रतिक्षण शोक-सिन्धु में डूबती उतराती हूँ। हाय ! आज वसन्त का महीना भी बीत गया।

जेठ में विरह की ज्वाला से मेरा शरीर जल रहा है। ताप की अधिकता के कारण दिन रात उष्ण प्रतीत होते हैं। पपीहा प्रतिक्षण 'पिउ पिउ' की रट लगाता है, और प्रियतम के बिना जी बेचैन है।

आषाढ़ का महीना आ गया। लेकिन प्रियतम घर वापिस नहीं आये। दामिनी जोरों में दमक रही है। आसमान में बादल चारों ओर उमड़ते हैं तथा मेंढक और झींगुर शब्द शर सन्धान कर रहे हैं।

सावन में आसमान में उमड़ती हुई काली घटा देख कर सभी सखियाँ अपने को अलंकृत करती हैं। सन-सन बहती हुई वायु हृदय में तीर की तरह लगती है। हाय ! मेरे नादान प्रियतम ने मुझ अबला का परित्याग कर दिया।

भादों के महीने में नायिका का भवन भयावना हो गया। वर्षा की झड़ी लग गई। विरहिणी चौंक चौंक कर चारों ओर आश्चर्य चकित हो देख रही है। फिर भी उसके प्रियतम कहीं दृष्टिगोचर नहीं होते।

आश्विन का महीना आया। आश्चर्य नहीं कि मैं अपने शरीर का अन्त कर दूँ। हाय ! मेरी चिर संचित आशा पूरी न हुई। मैं इस दारुण विपत्ति में किसे पुकारूँ ? हे सखी, अब इस शरीर को जला कर क्षार कर दूँगी।

हा ! कार्तिक के महीने में मेरे कठोर हृदय प्रियतम कहाँ किस रमणी के साथ विहार कर रहे हैं ? कमल की कली के समान मेरे ये कोमल वक्ष प्रदेश काँप रहे हैं, और मेरे अनमोल कपोल सूख रहे हैं।

शीत का आगमन हुआ। सब अपने अपने खेतों से धान सँभाल कर ला रहे हैं, और मेरी हमजोलियाँ अपने प्रियतम के साथ विहार करती हैं। इस तरह धीरे धीरे अगहन भी बीत चला। लेकिन मेरे प्रियतम आज भी नहीं आये। मैं प्रियतम के बिना कैसे जिऊँगी।

मेरे प्रियतम परदेश का परित्याग नहीं करते। तुषारपात बड़े ज़ोरों में हो रहा है। हाय ! मैं अपनी सेज पर तड़प रही हूँ कि प्रियतम के बिना पौष की बहार यों ही बीत गई।

कवि कहता है—हे नायिके, गमगीन न हो। माघ में तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी। मनमोहन मधुपुर छोड़ कर तुमसे मिलेंगे और तुम्हारी विपत्ति का नाश होगा।

हे सुन्दरी, लो तुम्हारे प्रियतम आ गये। अब फागुन में होली की बहार लूटो, और प्रियतम के साथ तुम्हारी आशा पूरी हो। इस तरह ये बारह महीने पूरे हो गये।

[१५]

चैन चित लै चोर चलि गेल
चकित चन्द्र चकोर यो
चन्द्रमुखि चकुआत चहुँ दिशि
दैव दुख देल मोर यो

माधव मधुकर मारि गेलाह
मदन मदमत योन यो
मद माधव मोहि कहि गेल
मास कठिनहि आय यो

जेठ जगमग जड़ित ज्वाला
युगल कुच जगाय यो

जलद जल लय जीव के देल
कत कुमरिक फूल यो

अषाढ़ आयल आदि वर्षा
आदि काम अपार यो
अब पति नहि धर्म बाँचत
साजि नाचत मोर यो

सावन सुन्दरि सेज काँपत
गच सर सल भाजि यो
नरम बनिता भर सताआल
अजहुँ पति नहि आय यो

भादव भदवा भय भयानक
नवनघाल नहि भाव यो
पेक भुवि रर भार आमिनि
बाटर बदस्व रात यो

आसिन आसक अस्तिर आबल
आस भेल निराश यो
आस अब मोहि पूर नहि भेल
प्राणनाथ बिसार यो

कातिक काम कठोर कामिनि
काम भोग अकुलाय यो
कत आयत काम कहि देहु
देव अधरक पान यो

आवल अगहन अवधि आयो
सब के कोपिल अरा यो

अग बिनु हम अग जारव
धरव जोगिनि भेष यो

पूस पल छिन परल पाला
प्राणपति नहिं पास यो
पलग पर दुख पाय बिनु
जोर जोबन जाय यो

माघ मनसिज मन मनोरथ
मदन चलल विमान यो
मूढ मधुकर मोहि मारल
हमर नहि किछु दोष यो

फागुन फगुआ कत आयल
खेलत फागुन फाग यो
भनथि 'नेपालाल' फागुन
पुरल बारहमास यो

चैत में प्रियतम चोर सा मेरा चित्त चुरा कर चले गये, और मैं चन्द्र के चकोर की तरह चकित हो गई।

वह चन्द्रमुखी चारों दिशाओं में चकित हो कर देख रही है, और कहती है—हाय! दैव ने मुझे कितना दुख दिया?

बैशाख में मेरे प्रियतम मुझे निष्प्राण कर चले गये, और यह मद मत्त मदन अपना शर-संधान कर रहा है। मेरे निर्बुद्धि प्रियतम मुझे झूठी दिलासा दे कर चले गये, और यह कठिन महीना आ पहुँचा।

जेठ की चिलचिलाती हुई धूप की प्रचंड ज्वाला। मेरे युगल उरोज तरंगित हो रहे हैं। जलद जल दे कर जीवन दान करता है, और मेरे प्रियतम गूलर के फूल हो रहे हैं।

आषाढ का प्रारम्भिक वर्षा-काल आ पहुँचा। कामदेव ने अपने दल बल

के साथ आक्रमण किया। नर्त्तक मयूर सज धज कर नृत्य करने लगे। हे सखी, अब धर्म बचना असम्भव प्रतीत होता है।

सावन का महीना आया। सुन्दरी अपनी सेज पर काँप रही है। हाय! मुझ अबला पर कामदेव ने एक साथ सैकड़ों बाण ले कर आक्रमण किया, और मेरे प्रियतम आज भी नहीं आये।

भादों का महीना भयावना हो कर आया। प्रियतम की गैरहाज़िरी में मुझे कुछ नहीं भाता। दादुर के ये कर्णकटु शब्द घायल कर रहे हैं। हाय! मैं अबला रात कैसे काटूँ?

आश्विन में मेरी आशा का घात हो गया। मेरी मनोकामना पूरी न हुई। हाय! मेरे प्रिय प्राणनाथ ने मेरा विस्मरण कर दिया।

कार्त्तिक महीने में कठोर हृदय काम ने मुझ अबला को व्याकुल कर दिया। हे कामदेव, मेरे प्रियतम से जा कर कहो कि वे आवें, और मैं उन्हें अधर पान कराऊँ।

अगहन का महीना आया। लोग जाड़ा के आक्रमण से काँपने लगे। मैं अंगहीन अनंग के सूक्ष्म अंग को जला दूँगी और स्वयं योगिन का वेष धारण करूँगी।

पौष में पाला की बारिश होने लगी। हाय! मेरे प्राणपति मेरे पास नहीं हैं। मैं अपनी सूनी सेज पर खिन्न हो रही हूँ, और बिना प्रियतम के मेरा जोबन ठंड से प्रकम्पित हो रहा है।

माघ में कामदेव ने अपने विमान पर आरूढ़ हो कर मेरे मन में उथल पुथल मचा दी। हाय! मेरे बुज़दिल प्रियतम ने मेरा सब तरह से दमन किया। यद्यपि मैं सर्वथा निर्दोष हूँ।

फागुन आया। मेरे प्रियतम भी आ गये। मैं उनके साथ होली की बहार लूटूँगी। कवि 'नेवालाल' कहते हैं कि इस प्रकार ये बारह महीने पूरे हुए।

[१६]

प्रथम मास अषाट हे

वर्षा ऋतु आयल

शोच करत ब्रजनारिन हे
अजहुँ ने मिलल कन्हाय

सावन सबं सुहावन
मेघरा बरिस दिन राति
झिंगुर डारे झरइत हे
ताहि डरल मोरि छाति

भादव रइनि भयावन हे
दोसर दामिनि दुख भारि
दामिनि दमिनि डरावय हे
पिना रे पुरूखवा क नारि

आसिन आस लगाओल हे
आशो न पुरल हमार
कोन जोगिनिआ बैरन भेल
हे राखि लेल बनवार

कातिक कन्त विदेश गेल
लिखियो ने भेजल पाँत
घर घर दिअरा लेसयलों
जाहि दिन रहलि अहिवात

अगहन दिन सुदिन भेल
सब सखि गौना के जाय
हमरा करम जरय गेल
केकरा सँ कहबों बुझाय

पूस क जार ठार भेल हे
तेनि गेल गिरिधारि

रचि रचि पलगा ओछिएलौं
हे तोंन गेल परिधार

माघ मे पाला बरसन लग
से हो दुख सहला ने जाय
हम त तिरिया अभागल
मरिबो माहुर विस खाय

फागुन फगुआ के दिन मेल
सखि सब धूम मचाय
उड़त गुलाल अबिरवान
देखि देख जिय ललचाय

चैतहिं छिन भार चचल
फुल गेल चन्द्र चकोर
माधव खेलें त मधुपुर
मोर लेखे किछु ने सोहाय

उखम आयल बरमास हे
से हो दुख सहला ने जाय
खट रस प्यार मधुर रस
अंग पर लेपिता चटाय

जेठ प्रभु जी सें भेंट भेल
पुरि गेल मन केर आस
सुर नर मुनि सब गावल
पुरि गेल बारहमास

पावस ऋतु। आषाढ़ का महीना। ब्रजांगनाएँ विरहाकुल हो कर कह रही है—अब तक श्री कृष्ण नहीं आये।

सावन का सुहावना महीना। दिन रात मेघ झहर रहे हैं। झींगुर की झंकार सुन कर मेरा हृदय बारम्बार काँप उठता है।

भादों की भयावनी रात। दामिनी की दमक दुखद प्रतीत होती है। दामिनी दमक दमक कर मुझ पुरुष हीन अबला को जाने क्यों भयभीत कर रही है?

आश्विन में मैंने आशा लगा रक्खी थी, किन्तु वह पूरी न हुई। न मालूम वह कौन सी बैरिन जोगिन है जिसने मेरे प्रियतम को लुभा रक्खा है।

कार्तिक में प्रियतम परदेश चले गये। मिलन की प्रथम रात्रि में उन्होंने घर घर में चिराग जला कर उत्सव मनाया था। लेकिन वहाँ जाने पर एक पत्र तक नहीं लिखा।

अगहन का मंगलमय दिन। हमारी सखियाँ द्विरागमन में पति-गृह जा रही हैं। हाय! मेरी तकदीर कितनी खोटी है। मैं अपने दिल की किससे कहूँ?

पौष। कड़ाके का जाड़ा। इस कठिन अवसर पर मेरे प्रियतम मेरा परित्याग कर प्रवासी हो गये। मैंने रच रच कर सेज सँवारी है। लेकिन प्रियतम परदेश चले गये।

माघ का जाड़ा वसन्त का सा ही विरह वेदन पैदा करता है जो मेरे लिए असह्य है। मैं अभागिन हूँ। ज़हर पान कर शरीर त्याग दूँगी।

फागुन का महीना। होली की बहार। हमारी सखियाँ रंग-क्रीड़ा करती हैं। चारों ओर कुंकुम और गुलाल उड़ रहे हैं, जिन्हें देख देख कर मन तरस रहा है।

चैत में चित्त चंचल हो उठा। चाँद-प्रेमी चकोर उछल पड़े। प्रियतम मधुपुर में भूल गये। मुझे कुछ नहीं भाता।

वैशाख में भीषण गर्मी पड़ने लगी। यह दुख मुझसे सहा नहीं जाता। षट्रस व्यञ्जन दुश्मन हो गये। यदि इस समय शरीर पर शीतल चन्दन का लेप किया जाता तो फिर क्या कहना?

जेठ में प्रियतम से भेंट हो गई। मुराद पूरी हुई। मनुष्य देवता सभ ने मिल कर 'बारहमासा' गाये, और इस प्रकार ये बारह महीने पूरे हुए।

चैत हे सखि फूलल बेली
भँवरा लिहल निज बास हे
हरि मधुबन गेला मथुरा
हमर कौन अपराध हे

बैशाख हे सखि उसम ज्वाला
घाम सें भीजल शरीर हे
रगर चन्दन अंग लेपी
औ छुह राहता म कत हे

जेठ हे सखि हेठ बरसा
श्याम हमर बिदेश हे
सुमिर हरि बिनु जीय तरसत
नयन में झहरत नीर हे

अषाढ़ हे सखि दूर घन घन
दादुर रंग मचाव हे
पाहुन पहुना अबहुन देखब
श्याम मधुपुर छाए हे

सावन हे सखि लवल पौसा
कथा एकहल मोहि हे
चलहु सखि मर घाट यमुना
देखब कदम चढ़ि जाइ हे

भादव हे सखि रैनि भयावन
दूजे अँधेरिया रात हे
घर बहुभारी कुमहार देखा
नित उठि ठानत तूफान हे

आसिन हे सखि आस लगाओल
आसो ने पुरल हमार हे
एहो आस पुरल कुबरि जोगिनिया
जिन कंत राखल लोभाय हे

कार्तिक हे सखि कंत बिदेश गेल
नयन भरल दुनु नोर हे
ककरा दुआरिया रामा ठाढ़ि होएबौ
केकरा सँ बोलब बात हे

अगहन हे सखि सारि बुधि भुलि गेल
फुटि गेल धन रंग धान हे
हंसा चकेउआ रामा केलि करय
कोयल करत किलकार हे

पूस हे सखि बूंद परि गेल
भिजि गेल रतनमा के चीर हे
एकत भिजे रामा कटावक चोलिया
जोबन भेल गति हीन हे

माघ हे सखि पाला परि गेल
थर थर काँपय आठो अँग हे
हम धनि काँपत टुटलि मरइया
पिया काँपय परदेश हे

फागुन हे सखि मास बारह
कृष्ण उतरथि पार हे

हे सखी, चैत में बेली खिल गई। उन पर भौंरे ने बसेरा लिया। मुझे छोड़ कर मोहन मधुपुर चले गये। मेरा क्या अपराध ?

हे सखी, वैशाख की प्रचंड ज्वाला। शरीर पसीने से लथपथ। यदि

इस समय मेरे प्रियतम होते तो मैं चन्दन घिस कर उनके अंग पर छिड़कती।

हे सखी जेठ में थोड़ी बहुत वर्षा होने लगी। मेरे श्याम प्रवासी हैं। उनका स्मरण कर मेरा जी व्याकुल हो उठता है, और आँखों से अश्रुपात होने लगता है।

हे सखी, आषाढ़ में बड़ी बड़ी बूँदें गिरने लगीं। दादुर बोलने लगे। हमारी सभी सखियों के साजन घर लौट आये। लेकिन मेरे प्रियतम अभी मधुपुर में ही हैं।

हे सखी, सावन में मैंने प्रियतम के लिए पत्र दे कर ऊधो को भेजा। चलें हम सब यमुना किनारे कदम्ब के वृक्ष पर बैठ कर उनकी राह देखें।

हे सखी, भादों की रात अत्यन्त भयावनी है। जिस पर अन्धेरी रात और भी अन्धेर कर रही है। मेरे घर के पिछवाड़े कुम्हार का घर है जो नित्य प्रात काल उठकर दुकान लगाना करता है।

हे सखी, आश्विन में मैंने आशा लगा रक्खी थी। लेकिन वह पूरी न हुई। आशा तो सौतिन कुब्जा की पूरी हुई जिसने मेरे प्रियतम को भुला रक्खा है।

हे सखी कातिक में मेरे प्रियतम परदेश चले गये। मेरी दोनों आँखों में आँसू छलछला आये। अब मैं किसके द्वार पर खड़ी हूँगी। किससे हँस कर बातें करूँगी ?

हे सखी, अगहन में मेरी अक्ल हैरान हो गई। सब प्रकार के धान फूट गये। हंस और चकवा क्रीड़ा करने लगे। कोयल कूकने लगी।

हे सखी, पौष में कोहरा गिरने लगा। चुंदरी भीग गई। एक तो मेरी कटोली चाली गीली हो गई, और दूसरे मेरा दीवाना जोवन कुम्हला गया।

हे सखी, माघ में पाला पड़ने लगा। अग प्रत्यंग थर थर काँपने लगे। मैं तो अपनी टूटी झोंपड़ी में काँप रही हूँ, और मेरे प्रियतम परदेश में काँप रहे होंगे।

हे सखी, फागुन में बारह महीने पूरे हो गये। मेरे सलोने श्रीकृष्ण भी आ रहे हैं।

[१८]

बारहमासा छन्दपरक

साओन सर्व सोहाओन सखि रे
फुललि बेलि चमेलि यो
रभसि सौरभ भ्रमर भ्रमि भ्रमि
करय मधुरस रलि या
आ रे केलि करथु पहुँ मन दय
सखि अधिक विरह मन उपजय

भादव घन घहराय दामिनि
गरजि गरजि सुनाय या
बरसु घन भहर बुंद रिमिझिम
मोहि किछु नहिं भाव या
आ रे भामिनि भय घन दमसय
सखि मुरछि मुरछि खसु महिमय

परिणाम कोन उपाय हे सखि
करब कोन परकार यो
मास आसिन अधिक ज्वाला
विरह दुख अपार या
आ रे अनेक सहब दुख पहुँ बिनु
सखि ककरो नाह बिछुडु जनु

नाह बिछुडल मोर हे सखि
हयत जीवक अन्त यो
अरुण कातिक धसिय धायब
जतय लुबुधल कन्त यो
आ रे कत जोहय हम जायब
सखि जतय उदेश हम पायब

अगहन हे सखि सारि लुबुधल
लदल जोबन मोर यो।
यौवननि मय हम जगन जाइत
जतय जुगल किशोर यो
आ रे मुक्त भा प्रभु अओताह
लागत गर बाहि कंठ लगओताह

पूस धैरज धरय चाहिय
समय रहल बिदेश यो
हुनि विदेशी सुखहि बिसनाह
हमर तरुण वयस यो
आ रे विदेशहि बैसि गमओताह
हमर गृह नहि अओताह

माघ झिहिर पवन डोलय
देह झामर मोर यो
हेरथि वसन उघारि सखि सब
कहथि मान्हि बिभोर यो
आर शोक वियोग मनहि मन
सखि दिन नहि रह थिर एको छन

अंग अंगत देह भजित
विरह कम्पित गात यो
आबि पहुँचल मास फागुन
आर मदन निबधान यो
आरे सगर प्राण विषम सम
सखि यौवन जोर विकलतम
यौवन जोर चकोर प्रभु बिन
चैन चंचल अति मना

कोयल कुहुकय मधुर शब्दय
करय कुतूहल अपना
आर कहाँ पत्र लय लिखितहुँ
सखि प्रियतम ताहि पठवितहुँ

कटोरि कमल मसिपान गिरहिनि
पत्र लिखल बनाय यो
आयल मास वैशाख ह मास
उखम सहल नहि जाय यो
आर आजुक रैन नहि अओताह
सखि प्रातकाल नहि पओताह

जेठ ह सखि अधिक ऊखम
पिय बिन आब नहि जीव यो
आनि यम धरि हृदय लगाएब
विषहि घोरि हम पीब यो
आर पिय बिनु विष कर घोरि
सखि बिनती करू कर जोरि

कर जोरि विनती मोर हे सखि
हमर की अपराध यो
कोन विधि अघाट खेपब
परम दुख अगाध यो
आरे मूर्च्छित खसि भहरि कर
सखि हम धसि पड़लहुँ सरोवर

जाहि सरोवर थाह कतहु नहि
नयन बहय जलधार यो
भनहि 'कुलपति' रसिक अनुमनि

चितहि धरिय अवधारि यो
आरे पल पल प्राण विकल अति
मानि कुब्जा हरल पहुँ गति मति

हे सखी, श्रावण में सर्वत्र सुहावना लगता है। फुलवाडियों में बेली और चमेली के फूल खिल गये हैं। भ्रमर घूम घूम कर फूलों के सौरभ का पान कर रहे हैं, और फूलों के साथ रमम रमम का प्रेम क्रीड़ा करते हैं।

हे सखी इसी तरह मेरे प्रियतम भी मेरे साथ मनमाना क्रीड़ा करें। क्योंकि मन अत्यन्त विरहाकुल हो रहा है।

भादों में बादल आसमान में गरज रहे हैं। बिजली कौंध-कौंध कर कड़क रही है। बादल भहर भहर कर रिमझिम बरस रहे हैं। हे सखी, अब मुझे कुछ नहीं भाता।

हम तरुणियों के लिए भयकारी ये बादल रह रह कर गरज उठते हैं। और हे सखी मैं मूर्च्छित हो होकर पृथिवी पर गिर जाती हूँ।

अब प्राण की रक्षा करने के लिए किस युक्ति का काम में लाऊँ? आश्विन में काम की ज्वाला जोरों में भड़क उठी है और विरह का दुःख सीमा का लंघन कर गया है।

हाय! प्रियतम की गैरहाजिरी में अब और कितनी पीड़ा बरदास्त करूँ! हे सखी, कभी किसी का प्रियतम न बिछुड़े?

हे सखी, मेरे प्रियतम मुझसे बिछुड़ गये। अब मेरे प्राण शरीर से जुदा हो जायेंगे। इस अरण कार्तिक में मैं वहाँ आतुर हो कर जाऊँगी, जहाँ मेरे प्रियतम रम रहे हैं।

हे सखी, जहाँ जहाँ प्रियतम के रहने की खबर मिलेगी, मैं वहाँ-वहाँ ही उनकी टोह में जाऊँगी।

हे सखी, अगहन में धान फल कर खेतों में लहराने लगे। इधर मेरे दुर्वह जीवन भी रुक गये। (सच कहती हूँ) मैं जोगन हो कर प्रियतम की खोज में दुनियाँ की खाक छान डालूँगी।

काश, युक्ति करने से प्रियतम से साक्षात्कार होता तो वह मेरी बाँह पकड़

कर मुझे गले लगा लेते।

पौष में मैंने चित्त को चैन में लाना चाहा, लेकिन मेरा अमर प्रवास में है। चैन कैसे मिले? वह प्रवास में अपना समय सुखपूर्वक बितायेंगे, ऐसा विश्वास है, और यहाँ मेरी तरुणाई तूफ़ान बरपा कर रही है।

हे सखी, क्या मेरे प्रियतम प्रवास में ही सारा समय बिता डालेंगे? क्या वह यहाँ पुनः नहीं आयेंगे?

माघ में पवन झिहिर झिहिर बह रहा है। शरीर सूख कर झाँकर हो गया। मेरी हमउम्र सहेलियाँ मुझे गुकाकिनि कह कर और मेरे शरीर के वस्त्र खींच खींच कर मेरा उपहास कर रही हैं।

मन शोक से अभिभूत और वियोग वेदना से आकुल हो रहा है। हे सखी, क्षण भर के लिए भी चित्त स्थिर नहीं रहता।

काम के ज्वार से अंग प्रत्यंग तरंगित और विरह की पीड़ा से प्रकम्पित हो उठे। हे सखी, लो यह फागुन महीना भी आ पहुँचा। अब मैं निश्चय ही आत्म घात कर लूँगी।

हे सखी, तरुणाई की पीड़ा में व्याकुल इस प्राण की अब बड़ी कठिनाई से रक्षा कर सकूँगी।

चैत महीने में प्रियतम रूपी चकोर की गैरहाज़िरी में चित्त अत्यन्त चंचल हो उठा। कोयल कूक कूक कर उपवन में क्रीड़ा करने लगी। हे सखी, काश मैं *विरह की पोथी लिख कर प्रियतम को भेजती?*

कमल पत्र पर स्याही से विरहिणी ने प्रेम में शराबोर पत्र लिखा। हे सखी, वैशाख आ गया। अब गर्मी बरदाश्त नहीं होती।

हे सखी, यदि आज की रात मेरे प्रियतम नहीं आये तो वह कल मुझे प्रातःकाल जीवित नहीं पायेंगे।

हे सखी, जेठ में बहुत ज्यादा गर्मी पड़ने लगी। अब प्रियतम के बिना जीवित नहीं रहूँगी। ज़हर घोल कर पी लूँगी, और साक्षात मौत का आलिंगन करूँगी।

हे सखी, प्रियतम के विरह में मैं गरल पान कर लूँगी। मैं करबद्ध प्रार्थना

करती हूँ। तुम इसमें दस्तन्दाजी मत दो।

हे सखी, मैं करबद्ध प्रार्थना करती हूँ। मेरा क्या कसूर है कि प्रियतम ने मेरा परित्याग कर दिया ! तुम्हीं बताओ, आषाढ़ महीने के इस असीम कष्ट को मैं किस तरह झेलूँ ?

हे सखी, प्रेम के पथ में भटक भटक कर अन्त में मैं विरह के अगाध सरोवर में गिर गई।

जिस सरोवर के असीम तल की माप नहीं। हाय ! मेरी आँखों से आँसू प्रवाहित हो रहे हैं। कवि 'कुलपति' कहते हैं—हे विरहिणी, चित्त को चैन में लाओ।

विरहिणी नायिका कहती है—हे सखी, मेरे प्राण प्रतिक्षण विरहाकुल हो रहे हैं। हाय ! कुब्जा ने मेरे प्रियतम की सारी सुध-बुध हर ली।

[१९]

चौमासा छन्दपरक

को[1] सुनि कान्ह[2] गमन कियो
मदन दहत तन जोर
चंचल नयन विलम्बित पथ
चितवहु पिय तोर
पय विषाद हे सखि श्याम गेल[4] परदेश यो
शून्य सेज निरन्त[5] देखल कासे भेजब सनेश यो
दादुरा घन घनहि रोवै भल झिंगुर बाज यो
नव नेह अनुपम हृदय सालै[6] प्रथम मास आषाढ़ यो
सावन सर्व सोहावन
कानन बोले मोर
सागर दक्षिण पवन बहै
कठिन हृदय पिया तोर

[1]क्या। [2]कृष्ण। [3]अनन्त। [4]गया। [5]कन्त-रहित। [6]शूल पैदा ह

कठिन और कठोर बालम दर्द किछु नहि जान यो
कइ परायल[1] विरह दुख सँ काम देल अनेक यो
काम देल अनेक दहरत प्राण अतिसय मोर यो
विरह प्रानि समुद्र जल मे दुसल रैन गमाव[2] यो

भादव रैनि भयावनि
कारि रैनि अन्हियारि[3]
चित्र विचित्र हिंडोला
झूले सोहागनि नारी
गाउ गावि झुलावे सखि और अधर भरि पान यो
हीन छीन मलीन पिया बिनु कड़क पाँचो बान यो
दसय[4] चाहत नारि नागनि प्राण पाथर मोर यो
विकाल कामिनि पहुँ बिनु नयन झहरत नीर यो

शरद समय जल आसिन
पन्थुक सचर मन डोल
सूतलि धनि उठि बैसली
काग कदम पर बोल
बोलु कागा कदम कपाला पास कब हरि आव यो
उर्ध्व बाँहु निवास सखि करहि मगल गान यो
राधिका मुख कमल विकसित शेष सुर मुनि गाव यो
'नयदेव स्वामी' चरण वन्दहि शरण राखु गोविन्द यो

[२०]

चैन हे सखि फुलल्लि बेला
भ्रमर लेल निज बास यो

नाना [2]बिताना। [3]अँधेरी। [4]डँसना।

रैल हे सखि भोग भोगलहुँ
भेलहुँ आर निरास यो

कातिक हे सखि निठुर प्रीतम
हिय दरद नाह लेश यो
निसल ने सखि दामर भोग नहि
हुनक नहि किछु दोस यो

मास अगहन देखि प्रिय सग
करय बहुत कलोल यो
साजि विविध शृंगार सखि सब
लेल गृह प्रवेश यो

पूस हे सखि मास आयल
भेल विधि मोर वाम यो
बिन प्रीतम नहि भवन भावय
नयन निर बिह वाम यो

माघाह हागि पुकारि बैसलहुँ
झारिखड बैद्यनाथ यो
बिन प्रीतम धिक नारि जीवन
नहि सपनहुँ मे चैन यो

मास फागुन मानहु सखि जन
चित जनि करहु उदास यो
भनहि 'माधव' आओत प्रीतम
पुरत मनहुँक आस यो

हे सखी, चैत मे बेली खिल गई। भ्रमर को बसेरा मिल गया। श्रीकृष्ण मेरा परित्याग कर मधुपर चले गये। न जाने मेरा क्या अपराध है?

हे सखी, वैशाख में कोयल चारों ओर कूक कूक कर काम को जगा रही है।

प्रियतम की याद आ जाने पर कलेजा धड़क उठता है, और अंग अंग से रह रह कर विरह की ज्वाला धधक उठती है।

हे सखी, ज्येष्ठ में आकाश में चारों ओर काले-काले बादल को उमड़ते देख कर मुझे डर लगता है। मुझे अनाथ विरहिणी जान कर ये बादल गरज-गरज कर ललकार रहे हैं।

हे सखी, आषाढ़ महीने में बादल गरजते हैं। बिजली चमकती है। और मयूर का घनघोर शब्द मुझसे सहा नहीं जाता।

हे सखी श्रावण महीने में पवन 'सनन-सनन' सनक रहा है। मेढक 'टर्र टों टर्र-टों' कर रहे हैं। और इधर मेरी आँखों से आँसू टपक रहे हैं।

भादों में हे सखी, नदी और तालाब ने उमड़ कर गाँव और नगर को चारों तरफ से घेर लिया। कौन मेरी पाती ले जायगा, और निर्बुद्धि प्रियतम को सुबुद्धि देगा कि वह यहाँ आये।

हे सखी, आश्विन में मैंने आशा लगा रक्खी थी कि प्रियतम आयेंगे। मैंने किये का फल भली भाँति भोगा, और अब बिल्कुल नाउम्मीद हो गई।

शेष पद के भाव स्पष्ट हैं।

श

स

ह